पराया हित करे और काम वा भयसेभी धर्मको त्याग न करे। प्यारे कामके सिद्ध होनेसे प्रसन्न न हो अप्रियसे दुःखी न हो, धनके सङ्कटमें घबड़ाय नहीं और धर्मको त्याग न करे। तथा करे कर्मके विपरीत जो अपने आत्माके कल्याणकी इच्छा करता है सो केवल मरखेता है। जो अपने संगमें बुराई करे उसके सङ्गमें बुराई न करके भलाई करे; भलाईकरनेवालोंके साथ जो बुराई करता है वह आप मारा जाता है; जो असाधु दुष्ट लोग पवित्र साधुओंके कर्मोंको कहते है, कि यह धर्म नहीं है, वे धर्ममें श्रद्धा न रखनेवाले असाधु नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार धौकनीसे धातु गलती है, ऐसेही पापीभी गल जाता है; मूर्ख अभिमानी असार वस्तुकी चिन्ता करता रहता है, अपने आपको सूर्यके समान बड़ा प्रकाशमान दिखाता है; जगतमें मूर्ख अपने आत्माकी प्रशंसा करनेसे भी कीर्त्ति नहीं पाता है, विद्वान, मलिन रहनेसेभी कीर्त्तिमान होते हैं। किसी की निन्दा करनेसे और आपही अपनी स्तुति करनेसे कोईभी विद्वान नहीं होता है। कुकर्मसे पश्चात्ताप करनेसे पाप छूट जाता है; फिर नहीं करूंगा ऐसी प्रतिज्ञा करनेसे मनुष्य शुद्ध हो जाता है। हे ब्राह्मण! पाप छूटनेके यही उपाय वेदोंमें देखे गये हैं। जो पहले किये हुए पापको धर्मात्मा लोग नष्ट करदेते हैं, उन पुरुषोंको भूलसे किये हुए पाप नहीं लगते। पाप करके अपनेको पुरुष न समझे। हे ब्राह्मण! जो श्रद्धालु और निन्दा-रहित होकर वस्त्रके समान औरोंके छिद्रको छिपाता है, वह पाप करके भी कल्याणकी चाहता है, और वह सब पापोंसे ऐसे छूट जाता है. जैसे बादलोंसे चन्द्रमा। जैसे सूर्य निकलकर अन्धकारको नाश करते हैं, ऐसेही धर्म उदय होकर पापोंको नाश करता है। हे ब्राह्मणोत्तम! पापका मूल लोभ हो है, लोभी और मूर्खही पाप करते हैं, अधर्म धर्मसे ऐसे छिप जाता है, जैसे घाससे कूआ छिप जाता है। जिनको मनके रोकनेकी गति है, उनके सब वचन धर्मके आश्रयसे होते हैं, लोभी और मूर्खोंमें सब हो सकता है, परन्तु शिष्टाचार नहीं हो सकता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! उस महा बुद्धिमान ब्राह्मणने धर्म व्याधसे पूछा कि हे महामते! शिष्टाचारको मैं कैसे जानूं? हे धर्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ। आपसे यह सुननेकी इच्छा रखता हूं, आप मुझसे कहिये। धर्मव्याध बोला, हे ब्राह्मण! उत्तम शिष्टाचारमें यह पांचही कर्म प्रधान हैं, यज्ञ, दान, तप, वेद पढ़ना और सत्य। जो काम और क्रोधको वशमें करके दम्भ, लोभ और कुटिलता त्यागके धर्महीमें सन्तुष्ट रहते हैं, उन्हें शिष्ट लोग शिष्टपुरुष कहते हैं।

शिष्ट लोग स्वेच्छाचारी नहीं होते; यज्ञ, वेदपाठ और आचार पालनमें ही लगे रहते हैं, वेही शिष्ट कहाते हैं। उन यज्ञ और स्वाध्याय रहित लोगोंके स्वतन्त्र आचरित कुछ भी नहीं हैं, केवल प्राचीन लोगोंका सदाचारही उन्हें ग्राह्य है; और आचार पालनभी शिष्टोंका दूसरा लक्षण है। गुरुकी सेवा करना सच्च बोलना, क्रोध न करना, दान देना, यह शिष्टाचारके चार कर्म हैं, मनको शिष्टाचारमें लगाकर जिस वृत्तिको मनुष्य धारण करता है, उसको दूसरा नहीं पा सकता है; वेदोंका सार सत्य, सत्यका सार मनको सब विषयोंसे रोकना, मनके रोकनेका सार त्याग है; और इन सबका सार शिष्टाचार है। जो लोग बुद्धिके भ्रमसे धर्मकी निन्दा करते हैं, वे कुमार्गमें चलनेवाले अपने साथियोंके समेत दुःख पाते हैं; जो सज्जन निष्ठापूर्वक वेद पढ़ने और त्यागनेमें तत्पर होते हैं, सत्य धर्मके मार्गमें चलते हैं, वेही धर्मात्मा हैं। शिष्टाचारमें स्थित होकर

जो औरोंकी बुद्धि देते हैं, आचार्य्यके वचनोंमें स्थित रहते हैं, वेही धर्म्मके जाननेवाले हैं। जो नास्तिक मर्य्यादाको नष्ट करनेवाले दुष्ट पापियोंके सङ्गमें रहते हैं, उनको त्यागकर और धर्म्मात्माओंकी सेवा करके, जिसमें काम और मगर भरे हुए हैं ऐसी पञ्चइन्द्रियरूपी नदीको धारणाकी नाव बनाकर जन्मके दुःखोंसे तरना चाहिये। क्रमसे बुद्धि द्वारा धर्म्मको इकट्ठा करके शिष्टाचारमें तत्पर होनेसे महात्मा ऐसे होजाते हैं, जैसे श्वेतवस्त्र। अहिंसा, और सत्य बोलनाही जगत्का कल्याणकारी धर्म्म है, अहिंसाही परम धर्म्म है और वह सत्यमें रहता है। सत्यमें स्थित होनेसे मनुष्यकी सब वृत्ति ठीक हो जाती है; सत्यही शिष्टाचारसे सबसे प्रधान है। आचार ही सज्जनोंका धर्म्म है, और धर्म्मही सज्जनोंका लक्षण है। जैसा प्राणी होता है, उसका वैसाही स्वभाव होता है, पापी क्रोध, और कामको प्राप्त होता है, और आत्मघाती दोषको पाता है। जो काम न्यायसेयुक्त होता है, उसे धर्म्म कहते हैं, और जो अनाचारसेयुक्त होता है, उसे अधर्म्म कहते हैं; यही शिष्टोंकी आज्ञा है। जो क्रोध नहीं करते, किसीकी निन्दा नहीं करते, अभिमान और चञ्चलताको त्यागते हैं, वे शुद्धस्वभाववाले सज्जन शिष्ट कहलाते हैं। वेद विद्यामें निपुण शुद्ध बुद्धिमान गुरुकी सेवा करनेवाले महात्मा शिष्टाचारी कहलाते हैं, उन कठोर कर्म्म करनेवाले महात्माओंके सुकर्मसेही भय नाश होता है; उस आश्चर्यकारी पुराने अचल सदाचारको करनेवाले बुद्धिमान महात्मा स्वर्गको जाते हैं। जो लोग आस्तिक अभिमान रहित ब्राह्मणोंकी पूजनेवाले, वेदको सुननेवाले होते हैं, वेही महात्मा लोग स्वर्गगामी होते हैं। धर्म्म तीन प्रकारका है, एक वेदमें लिखा, दूसरा धर्म्मशास्त्रमें लिखा, और तीसरा शिष्टाचार। विद्याओंका पढ़ना और तीर्थोंमें स्नान करना धर्म्म कहलाता है। सज्जन, क्षमावान, सत्य बोलनेवाले, शुद्ध रहनेवालोंके आचारको देखनेवाले, सब प्राणियोंपर दया करनेवाले सदा हिंसासे रहित, मीठा बोलनेवाले ब्राह्मणके प्यारे होते हैं। जो शुभ और अशुभ कर्मोंके फल और कर्म्मके विपाकको जानते हैं, वेही शिष्ट कहाते हैं। न्याय और गुणसे भरे, हुए लोकके कल्याण करनेवाले सज्जन उत्तम मार्गसे तत्पर रहके स्वर्गको जीतते हैं। दानी, अच्छे बुरेको जाननेवाले, दीनोंपर दया करनेवाले, पूजनीय वेदही जिनका धन है, वे तपस्वी शिष्ट कहाते हैं। शिष्ट लोग संसारका उपकार करते हैं, वे धनी नहीं होते, स्त्रियोंसे पीड़ित रहते हैं; किन्तु जो कोई सज्जन उनके यहां जाता है, उनको अपनी शक्तिके अनुसार दान देते हैं, केवल अपने शरीरके निर्वाहहीको अपना सुख समझते हैं; इस प्रकारसे सज्जन संसारमें बहुत वर्षतक जीते हैं। अहिंसा, सत्य वचन, सरलता, किसीसे वैर न करना, अभिमानरहित होना, लज्जा, त्याग दम, शम, बुद्धि, धारणा, और संसारके ऊपर दया करना, काम क्रोधको त्यागना, यह जिनमें गुण हों, वेही साधु कहाते हैं। जो न किसीसे वैर करें, सत्य बोलें, सबपर दया रक्खें वही दयालु साधु लोग संसारमें धर्म्म मार्गपर चलते हैं, वेही शिष्टाचारको करते हैं; उन लोगोंको धर्म्मका निश्चय होता है। निन्दा न करना, क्षमा, शान्ति, सन्तोष, मधुर वचन, काम क्रोधका त्याग, शिष्टाचार, और वेदमें लिखे कर्मोंका करना येही साधुके कर्म्म हैं। सदाही धर्म्मके अनुसार शिष्टाचारको करते हैं, और बुद्धि तथा प्रसन्नताके आश्रयसे साधुओंके सब भय छूट जाते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम! साधु लोग संसारके पुण्य पापके भरे चरित्रोंको देख कर विचार करते हैं। हे ब्राह्मणोंमें उत्तम! मैंने जो

शिष्टाचार देखा और सुना था सो सब तुमसे कहा।

द्विजव्याध सम्वादमें
२०६ अध्याय समाप्त।

श्रीम.र्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! वह धर्म्मव्याध फिर बोला, हे ब्राह्मण! जो मैं कर्म्म करता हूं, वह निःसन्देह भयानक है, तौभी प्रारब्ध बलवान है। जो पहले किये कर्म्म हैं, उनका फल अवश्य होता है; यह मेरे किये पापोंका फल है; इस दोषको छोड़नेका वास्ते मैं यत्न करता हूं, तौभी यह नहीं छूटता, प्रारब्ध बलवान है। हे ब्राह्मणोत्तम! इस कर्म्मका निमित्तही मात्र मैं हूं। जिन मरे हुए पशुओंका मांस मैं बेचता हूं, उनको भी मनुष्योंके भोजन होनेके कारण पुण्यही होता है। देवता, अतिथि, पितर और सेवकोंकी पूजन जिन औषधि, वृक्ष, पशु, मृग, और पक्षियोंके मांससे को जाती है, वे पुण्यात्माही होते हैं। हे ब्राह्मण! अपने शरीरके मांस देनेके कारणसे उशीनरके पुत्र राजा शिविको दुर्लभ स्वर्ग प्राप्त हुआ था। पहिले समयमें राजा रन्तिदेवकी रसोईमें दो हजार पशु मारे जाते थे, प्रतिदिन दो हजार गौओंका मांस राजा रन्तिदेवकी रसोईमें पकता था, उस राजाको संसारमें बड़ी कोर्त्ति फैली थी। हे ब्राह्मण! ऋतु सम्मान है कि चौमासेमें पशुओंको मारना चाहिये। अग्निभी मांसकी इच्छा रखती है, ऐसाभी वेदमें लिखा है। ब्राह्मण लोकभी पशुको मारते हैं, मांस भक्षणके लिये मुनियोंने आज्ञा दी है, कि मन्त्रोंसे जिस मांसका संस्कार किया जाता है स्वर्ग उससे प्राप्त होता है, यदि ऋषि लोग पहले मांससे हवण न करते तो मांस मेरे खाने योग्य न रहता। जो देवता और पितरोंको देकर विधिके अनुसार श्राद्धमें मांस खाता है, उसे कुछ दोष नहीं होता है। वेदोंमें यही लिखा है कि, मांस न खाना चाहिये है, इसका अर्थ यह है, जैसे जो ऋतुकालमें स्त्रीप्रसङ्ग करता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है, तैसेही योग्य और अयोग्य समझके मांसकी विधि और अविधि है। पूर्व्वकालमें शापके कारणसे राजा सौदासने मनुष्यको भक्षण किया था; हे ब्राह्मण! मैं इसे अपना कर्म्म समझकर नहीं त्यागता हूं। मेरे पुरुषा भी यही कर्म्म करते थे, इससे मैं भी इसी व्यापारसे जीता हूं। हे ब्राह्मण! अपने कर्म्मको त्यागनाही जगत्में अधर्म्म दीखता है, और जो अपने धर्म्मको करता है, वही धर्म्मात्मा है। कर्म्मके निर्णयमें यह अनेक ग्रन्थोंमें देखा गया है, कि ब्रह्माने जिसका जो कर्म्म बना दिया है, वह उसे नहीं छोड़ता। मनुष्यको चाहिये कि भयानक कर्म्म करनेके समय यह विचारता रहे, कि मैं इस कर्म्मसे कैसे छूटूं और सुकर्म्म कैसे करूं, तब उस कर्म्मका निर्णय अवश्य हो जायगा। मैं दान, सत्य बोलने और गुरुको सदा सेवामें लगा रहता हूं हे ब्राह्मण! ब्राह्मणोंकी पूजा आदि धर्म्म सदा करता हूं। अभिमानसे विवाद नहीं करता हूं। हे ब्राह्मण कोई लोग खेतीको उत्तम समझते हैं पर यह भी हिंसासे भरा हुआ है। जब पृथ्वीमें हल चलाते हैं, उससे बहुत भूमिमें रहनेवाले जीव मरते हैं, औरभी बहुतसे जीव जो अन्नमें होते हैं वे मरजाते हैं इसीसे मैं जानता हूं, कि खेती करनेवाले पशुओंको मारकर खाते हैं। हे द्विज! और कितनेही लोग वृक्षोंको काटते हैं, इससे मैं जानता हूं कि वृक्षमें और फलमें अनेक जीव होते हैं, जलमेंभी अनेक जीव होते हैं, इससे मैं जानता हूं संपूर्ण ब्रह्माण्ड प्राणियोंसे भरा हुआ है। एक मछली दूसरी मछलीको खाती है, इससे मैं जानता हूं कि—

जीवही जीवका आधार है। एक प्राणी दूसरे प्राणिका भोजन है, जगतमें व्यवहार ऐसेही चलते हैं। मनुष्य चलनेके समय पैरोंसे अनेक जीवोंको मारते हैं, इससे मैं जानता हूं, कि बैठते चलते सोते अनेक जीवोंकी हिंसा मनुष्य करते हैं। ज्ञानी और विज्ञानी लोगभी बिना हिंसाके नहीं जी सकते हैं, यह जगत् जीवोंसे भरा हुआ है। जिन्होंने अज्ञानसे अहिंसाको धर्म्म कहा है, उन्होंने जगत्को हिंसामय देख-कर आश्चर्य प्रकाशित किया, तब उन्होंने यह निश्चय किया कि जगत्में कोई अहिंसक नहीं है। हे ब्राह्मण। जो महात्मा लोग अहिंसामें तत्पर रहते हैं, वेभी हिंसा करते हैं; परन्तु वे हिंसाकी कम करनेकी चेष्टा करते रहते हैं। बड़े कुलमें उत्पन्न हुए, पुरुष महा घोर कर्म्म करकेभी लज्जित नहीं होते। एक मित्र दूसरे मित्रको, एक शत्रु दूसरे शत्रुको कर्म्म करते हुए नहीं देखता। एक वस्तुकी उन्नतिको दूसरा वस्तु नहीं देख सकता; कितने ही पण्डित-मानी मूर्ख गुरुकी निन्दा करते हैं। हे ब्राह्मण! इस प्रकारसे जगत्में बहुत उलट पलट दीखते हैं, इससे मैं भी जानता हूं, केवल वचनसे धर्म्मा-धर्म्मकर्म्मको कहनेमें बहुत लोग समर्थ हैं, परन्तु जो स्वधर्म्मकर्म्म करता है, जगत्में कीर्त्ति उसीकी होती है।

द्विज व्याध सम्वादमें २०७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे धर्म्मके जानने-वालोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर! उस चतुर ब्राह्मणसे धर्म्मव्याध ऐसा बोला। हे ब्राह्मण! वृद्धोंकी आज्ञा है, कि धर्म्ममें प्रमाण वेदही है, सूक्ष्म और अनिन्दित धर्म्मकी बहुतसी शाखा हैं, प्राणके नाश होनेमें और विवाहमें झूठ बोलना चाहिये; कहीं झूठसे सच और कहीं सचसे झूठ प्राप्त होता है। ऐसा निश्चय है, कि जो प्राणियोंका हितकारी हो वही सत्य है, कहीं धर्मका उलटाही फल हो जाता है, धर्मकी सूक्ष्मताको तुम देखो। जो बुरा काम करता है, और जो अच्छा काम करता है, उन दोनोका फल मनुष्यको अवश्य प्राप्त होता है, जब मनुष्यकी बुरी दृष्टि होती है, तब यह देवतोंकी निन्दा करता है; परन्तु अपने किये दोषको नहीं जानता; इसीसे मनुष्य मूर्ख चञ्चल और कृतघ्न सदाही सुख दुःखके द्वन्द्वमें पड़े रहते हैं, उनकी बुद्धि गुरु-की शिक्षा और पुरुषार्थभी रक्षा नहीं करते; इस लिये यदि पुरुषका क्रिया फल पराधीन न होता तो जो व्यक्ति जिस कामनाकी इच्छा करता उसको वही प्राप्त होती। यदि पुरुषार्थ वा क्रियाका फल पराधीन न हो तो बुद्धिमान, चतुर और शिक्षायुक्त मनुष्य निष्फल और कर्महीन न दिखलाई पड़ें। जगत्में जो मनुष्य सदा हिंसा करते हैं, वे संसारको ठगनेमें तत्पर रहते हैं, और वेही सुखी दीखते हैं; कितनेही लोग पुरुषार्थको छोड़कर बैठे रहते हैं, परन्तु उनको लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है; कितनेही लोग अनेक कर्म करनेपर भी लक्ष्मी नहीं पाते। पुत्रके कामनावाले कितनेही देवतोंकी पूजा करते हैं, तप करते हैं, परन्तु उनके दस महीना गर्भमें रहकर कुल-कलंक पुत्र उत्पन्न होता है। बहुतसे लोक पिताके सञ्चय किये हुए धनसे भोग विलास करते हैं। हे ब्राह्मण! मनुष्योंको रोग और व्याधिभी कर्मसे ही उत्पन्न होती है। चतुर वैद्य लोग व्याधियोंको ऐसा नाश करते हैं, जैसे वधिक मृगोंका नाश करते हैं, किन्तु जिनको व्याधि भोगनी है, उनके रोग औषधियोंसेभी नहीं छूटते हैं। हे ब्राह्मण! बहुतसे बलवान लोग भोजनकाभी दुःख भोगते हैं, इस प्रकारसे संसार शोक और मोहसे भरकर चिल्लाता है। प्रारब्धकी नदीमें बलवान फलोंके द्वारा सब प्राणी खींचे

जाते हैं। हे ब्राह्मण ! यदि स्वाधीनता रहती तो कोई न मरता, कोई जराजीर्ण न होता, कोई अप्रिय विषयकी कामना न करता, बल्कि सब अपनी सब प्रकारकी कामना चरितार्थ करते। सब मनुष्योंकी यही इच्छा रहती है, कि हम जगतमें ऊंचे रहें और ऐसेही यथा शक्ति उद्योगभी करते हैं, परन्तु फल सबको नहीं होता। कोई जिनके जन्मकालके मङ्गल नक्षत्र समान ऊंच दीखते हैं उनके कर्मोंके फल बहुत विषम दीख पड़ते हैं। हे ब्राह्मण! कोईभी आप नहीं बढ़ता, इस जगतमें पहले कर्मोंकीही सिद्धि दीखती है, हे ब्राह्मण! वेदोंमें लिखा है कि जीव सनातन है, सब प्राणियोंके शरीर अचल नहीं हैं, शरीरके नाश होने पर कर्मानुसार जीव दूसरे शरीरमें चला जाता है।

ब्राह्मण बोले हे कर्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ ! जीव सनातन किस रीतिसे है, सो मैं सुनना चाहता हूं आप कहिये। व्याध बोला कि देहके नाश होनेसे जीवका नाश कभी नहीं होता। मूर्ख लोग मिथ्याही कहते हैं, कि अमुक मनुष्य मर गया। जीव दूसरे शरीरमें चला जाता है, शरीरका भेदही केवल मरना कहलाता है। दूसरेके किये कर्मके फलको संसारमें दूसरा मनुष्य नहीं भोग सकता, जो जिस कर्मको करता है, उसे वह अवश्य भोगता है, और कर्मका नाश कभी नहीं होता है। पुण्यात्मा लोग अच्छे और पापी नीच होते हैं, मनुष्य अपने कर्मोंके अनुसार जन्म लेता है, और कर्मके अनुसार ही वह फल भोगता है। ब्राह्मण बोले, कि हे नरश्रेष्ठ ! पाप और पुण्य के अनुसार इस मनुष्यको किस प्रकार नीच और उत्तम योनि प्राप्त होती है। व्याध बोला, हे द्विजोत्तम! महात्मा लोग गर्भाधानसे कर्मका आरम्भ कहते हैं, हम उस सब कर्म्मको संक्षेपसे कहते हैं, सुनो। जैसे कर्मका बीज बार बार उत्पन्न होता है, उसके अनुसारही जीवकोभी पाप और पुण्यके वशमें होकर शुभ अथवा अशुभ योनियोंमें जन्म लेना पड़ता है। उत्तम कर्म होनेसे देवता, मध्यम कर्म होनेसे मनुष्य, भ्रमवाले कर्म करनेसे नीच, और पाप कर्म करनेसे पशु आदि कुयोनियोंमें जन्म लेना होता है। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मोंके वशमें होकर जन्म मरण और बुढ़ापा आदि महा दुःखोंमें सदा पड़ा करता है। पापोंके वशमें होकर सहस्रों नीच योनि और नरकोंको भोग-कर पापोंको भोग करता है। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मोंको भोगकर मरता है, तब उन पापोंको नाश करनेके लिये अच्छी योनि प्राप्त होती है। जब उस योनिमें जाकर यह नवीन कर्म किया करता है, तब फिर उन कर्मोंके भोगोंको भोगता है। जीवकी निर-न्तर ऐसीही दशा रहती है; जैसे अपथ्य खानेसे रोगियोंको। इस प्रकार यह जीव दुःखोंसे भरा रहता है, और दुःख भोगता रहता है, तौभो यह अपनेको सुखीही मानता है। जब इसके कर्मोंके अन्त हो जाते हैं, तब यह सब बन्धनोंसे छुट जाता है। इस प्रकार यह जीव दुःखोंसे पूर्ण होकर कुम्हारके चाकके समान घूमता है। यदि यह जीव उसी अवस्थामें कर्मोंसे निवृत्त और शुद्ध हो जाय, तो वह जीव योग और तपको करता है, तो वही जीव उस योग और तपके वशमें होकर लोकोंको प्राप्त करता है। यदि उस समय उन सब कर्मोंसे निवृत्त और पवित्र होगया उत्तम लोकोंको प्राप्त करता है। जीव पापको भोगते भोगते पापका अन्त नहीं पाता है, इसवास्ते पुण्य करना चाहिये और पापको छोड़ देना चाहिये। निन्दा न करनेवाले और कृतज्ञ लोग सुख, धर्म्म, धन और स्वर्ग पाते हैं, जिसका संस्कार किया गया है, जो जितेन्द्रिय है, जिसने अपने मनको वशमें किया है, उसको इस लोक परलोकमें सुख

प्राप्त होता है। इस वास्ते सज्जनोंको चाहिये कि सदा शिष्टोंके समान आचरण करें। ऐसी आजीविका करे, जिसमें संसारको दुःख न पहुंचे; अपने धर्म्मसे मनुष्यकी वर्त्तना चाहिये; शास्त्रमें शिष्टोंके बहुतसे उपदेश लिखे हुए हैं, बुद्धिमान धर्महीं श्रवण करते हैं, धर्महीसे जीते हैं, धर्महीसे तुमभी अपनी आजीविका करो। गुणवान लोग धर्महीके मूलको दृढ़ करते हैं, धर्मात्माका चित्त सदा प्रसन्न रहता है, धर्मात्मा दुष्ट मित्रके सहित लोक परलोक दोनोंमें सुख भोगते हैं। शब्द, स्पर्श, और गन्धके धर्मात्माही स्वामी होते हैं, यही धर्मका फल है। हे ब्राह्मण! धर्मके फलको पाकर जब मनुष्य सन्तुष्ट नहीं होता, तब उसको वैराग्य आता है, ज्ञानदृष्टि होनेसे संसारके दोषोंमें नहीं फंसता, अपनी इच्छानुसार विहार करता है, किन्तु धर्मको नहीं त्याग करता है, पर संसारको नाशवान समझकर सबको त्यागनेका यत्न करता है, तब मोक्षका उद्योग करता है, इस प्रकार धर्मात्मा सुखी होता है, और पापोंको त्यागता है, ऐसाही मनुष्य धार्मिक कहाता है, वही धर्म्म और मोक्षको प्राप्त करता है। तपही प्राणियोंके वास्ते परम कल्याणकारी है, उसके फल शम, और दम हैं। तपसे मनुष्य अपनी इच्छानुसार फलको पाता है, और इन्द्रियोंको जीतके सत्य और दमसे ब्रह्मपदको प्राप्त होता है। ब्राह्मण बोले, हे व्रतधारी! इन्द्रिय किन्हें कहते हैं? इन्द्रियोंको कैसे जीता जाता है? इन्द्रियोंके जीते जानेका क्या फल है? और वह फल कैसे प्राप्त होता है? इन सबको मैं ठीक जानना चाहता हूं।

द्विज व्याध सम्वादमें
१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ब्राह्मणके ऐसे वचन सुनकर धर्मव्याधने जो कुछ उनसे कहा सो मैं कहता हूं, सुनो। धर्म्मव्याध बोला, पहले मनुष्यका मन विज्ञानको जाननेमें प्रवृत्त होता है, तब विज्ञानलाभ होनेपर काम क्रोधको पाता है, पीछे उस काम क्रोधके चरितार्थ निमित्त महत् कर्मका आरम्भ करता है, फिर अपने प्यारे रूप वा गन्धादि विषयोंका अभ्यास करता है, तब मनुष्यको राग उत्पन्न होता है, रागसे द्वेष, द्वेषसे लोभ और लोभसे मोह होता है। तब लोभसे भरे और रागद्वेषसे युक्त मनुष्यकी बुद्धि धर्म्ममें नहीं जाती है। जो धर्म्म करता है, सो केवल कपटसे धन प्राप्तिके लिये है; जो धन कपटसे प्राप्त करता है उसको पापमें लगाता है; उसे जो बन्धु बान्धव लोग पण्डित महात्मा कुकर्म्मसे रोकते हैं उनको युक्तिके साथ उत्तर देता है। ऐसे पुरुषको तीन प्रकारका अधर्म्म प्राप्त होता है; एक मनसे पापकी चिन्ता करना, दूसरे वचनसे पाप करना, तीसरे कर्म्मसे पापको करना। उस अधर्मीके सब उत्तम गुण नष्ट होजाते हैं, पापियोंसे इसकी मित्रता होती है, इससे लोक और परलोकमें दुःख भोगता है। हे ब्राह्मण! पापियोंकी यह गति होती है, अब धर्मात्माओंका वृत्तान्त सुनो। धर्मात्मा पहलेही बुद्धिसे दोषोंको देखते हैं, सुखके तत्वको जान कर साधुओंको सेवा करते हैं, तब उनकी बुद्धि धर्ममें लगती है। ब्राह्मण बोले, हे व्याध! तुम सत्य धर्म कहते हो; तुम्हारे समान धर्मका कहनेवाला कोई भी नहीं है, तुम्हारा प्रभाव दिव्य है, मेरी बुद्धिमें तुम ऋषि ही हो। व्याध बोला, ब्राह्मणही महाभाग्यवन्त और सब वर्णोंके पितृस्वरूप हैं, संसारियोंको चाहिये, कि उन्हींका प्रिय कार्य्य करें। हे ब्राह्मणोत्तम! जो उनका काम है, सो मैं तुमसे कहता हूं। ब्राह्मणोंको नमस्कार करना चाहिये; अब मैं तुमसे ब्राह्मी विद्या कहता हूं, सुनो। यह सब जगत जीतनेके अयोग्य है; इस महा भूतात्मका

जगतसे परे कोई पदार्थ नहीं है, वही ब्रह्म है। पञ्च महाभूत आकाश, वायु, अग्नि, जल, और पृथ्वी हैं। इनके स्पर्श गन्ध आदि पांच गुण हैं। उनके भी गुण परस्परमें संक्रामित होके दृढ़ हुए हैं। इन्हीं पांचोंसे पांच इन्द्री उत्पन्न होती हैं, छठां चैतन्य मन है, सातवीं बुद्धि और आठवां अहंकार है, इन्द्रियोंमें रजोगुण तमो गुण, और सतो गुण मिले रहते हैं, इस प्रकार ये सत्रह पदार्थ अव्यक्त कहाते हैं, सब इन्द्रियोंके सहित उनके गुणसे गुण मिल करके चौबीस प्रकृति कहाती है। यह सब मैंने तुमसे कहा और अब तुम क्या सुनना चाहते हो।

द्विज व्याध सम्वादमें २०६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्म-व्याधके ऐसे बचन सुनके ब्राह्मणने फिर मनको प्रीतिको बढ़ानेवाला प्रश्न किया। ब्राह्मण बोले, हे व्याध! हे धर्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ! जो पञ्चभूत कहाते हैं, उनमेंसे एक एकका गुण अलग अलग है, सो आप कहिये। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! भूमि, जल; अग्नि, वायु, और आकाश इनमेंसे पूर्व्व पूर्व्वके अधिक गुणवाले और पिछले कम गुणवाले हैं, हे ब्राह्मण! पृथ्वीमें पांच गुण, जलमें चार गुण, तेजमें तीन गुण, और आकाशमें एक वायुमें भी दो गुण है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये पांच गुण पृथ्वीमें हैं, इसीसे पृथ्वी अधिक गुणवाली कहाती है। शब्द, स्पर्श, रूप, और रस ये जलके गुण हैं; शब्द, स्पर्श, रूप ये तीन गुण तेजके हैं; शब्द और स्पर्श वायुके गुण हैं और केवल शब्द आकाशका गुण है। हे ब्रह्मन! यह पन्द्रह गुण सब तत्वोंके हैं और इन्हींसे जगत स्थिर है, यह एक दूसरेको नहीं छोड़ते हैं, क्योंकि एक दूसरेके विना नहीं रह सकता है। जब इनकी घटती बढ़ती होती है, तबही शरीरका मरण होता है। हे ब्राह्मण! ये गुण समय परही मिलते हैं; और समय परही अलग भी हो जाते हैं। सब धातु पञ्चभूतोंसेही बनती हैं, इन्हीसे सम्पूर्ण चर और अचर व्याप्त हैं, इन्द्रियोंके द्वारा जितने पदार्थ बनते हैं, वे सब विनाशी और बिकारी हैं; जो इन्द्रियोंसे अलग हैं, वही अविकारी हैं, जैसे अपने शब्दादि विषयोंको इन्द्री ग्रहण करती हैं। जीव इन्द्रियोंको धारण करनेवाला है, इससे उसको सन्ताप होता है। जो आत्माको सब जगतमें और जगतको आत्मामें देखता है, वही पूर्ण ज्ञानी सब प्राणियोंको देखता है। जो सब अवस्थामें सब प्राणियोंको देखनेवाला है, उस ब्रह्म रूमान महात्माको अशुभकर्म्म नहीं प्राप्त होते हैं। अविद्या भरे हुए क्लेशोंको जो लांघ गया है, वह महात्मा संसारमें प्रकाशमान ज्ञान मार्गसे मोक्षको प्राप्त होता है; जो तिनकेसे ब्रह्म तकमें अविकारी परमेश्वरको व्यापक देखता है, वह शरीररहित अनुपम बुद्धिमान परमेश्वरको जाननेवाला और योगी कहाता है। हे ब्राह्मण! जो तुमने पूछा, वह सब तपसे सिद्ध होता है, इन्द्रियोंको जीतनेसे ही तप होता है, और प्रकारसे नहीं। जो स्वर्ग नरकको प्राप्त होता है, वह इन्द्रियोंको जीतने और न जीतनेसेही होता है; सम्पूर्ण योगकी विधि इन्द्रियोंको जीतना ही है; ये ही तप और नरकके मूल हैं; इन्द्रियोंको न जीतनेसे ही जीवको दोष प्राप्त होते हैं। जब जीव इन्द्रियोंको अपने वशमें कर लेता है, तब उसको निःसन्देह सिद्धि प्राप्त होती है; पांच इन्द्री और छठे मनको जो रोकता है, वह सदा ऐश्वर्य्यको पाता है, जितेन्द्रियको अनर्थ और पाप कैसे लग सकते हैं? प्राणका शरीर ही रथ है, आत्मा उसमें बैठनेवाला, मन सारथी और इन्द्रिय घोड़े हैं, उनको अच्छे मार्गमें चलाकर धीर वीरके समान महात्मा लोग चलते हैं; जो महात्मा इन्द्रियोंको मनसे रोक

कर अच्छे मार्गमें चलते हैं वेही अच्छे कहाने वाले हैं; जो इन्द्रिय इधर उधरकी घोड़ेके समान मार्गमें भागती हैं, उनको जो रोकता है वही उत्तम सारथी मनसे इन्द्रियोंको जीतता है; और जो अनेक मार्गमें चलनेवाली इन्द्रियोंके पीछे मनको दौड़ाता है, उसकी बुद्धि ऐसी नष्ट होती है, जैसे वायु नावको जलमें डुबाता है। जो शब्दादिक विषयोंके मोहमें नहीं फंसता है, वही ध्यानके फलको प्राप्त होता है।

द्विजव्याध सम्वादमें
२१० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! इस प्रकारसे धर्म्म व्याधके सूक्ष्म धर्म्म कहने पर उस सावधान ब्राह्मणने फिर सूक्ष्म प्रश्न किया। ब्राह्मण बोला, हे धर्म व्याध! सतोगुण रजोगुण और तमोगुणके गुणोंको आप यथावत कहिये। धर्मव्याध बोला, तुम जो हमसे पूंछते हो, सो हम उन तीनोंके गुणोंको भिन्न भिन्न कहते हैं, सुनो। तमोगुण मोहको बढ़ानेवाला, रजोगुण जगतके कार्य्योंमें लगानेवाला और सतोगुण प्रकाश करनेवाला है। इसीसे सतोगुण उन सबमें उत्तम गिना जाता है। तमोगुणसे अविद्या, मूर्खता, निद्रा, इन्द्रियोंकी चञ्चलता, क्रोध और आलस्य बढ़ता है। जो वचनचतुर, विचारशील मनुष्योंमें उत्तम, पराई निन्दा न करनेवाला, बहुत कामोंको करनेको इच्छा रखनेवाला, कठोर और अभिमानी होता है, वह मनुष्य रजोगुणी है। जो ज्ञानयुक्त, धीर, निरालसी हो, जो पराई निन्दा नहीं करता हो, क्रोध रहित हो, बुद्धिमान और दानी हो, वह मनुष्य सतोगुणी होता है। सतोगुणी मनुष्य संसारी मनुष्योंके कर्म्मसे दुःखी होता है। जब उसे ज्ञान होता है, तब वह संसारी मनुष्योंकी निन्दा करता है, वैराग्यमें उसका चित्त पहले लगा रहता है, अहङ्कार उसे थोड़ा होता है और उसका स्वभाव सीधा होता है। सतोगुणी मनुष्योंको सब दुःख शान्त रहते हैं। सतोगुणी मनुष्योंको कभी किसी कर्म्मोंका सन्देह नहीं होता। शूद्र मनुष्य सतोगुणके प्रतापसे वैश्य होता है, और वैश्यत्वसे क्षत्रियत्व प्राप्त होता है, फिर सुकर्म्म करनेसे वह ब्राह्मणत्वको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मण! हमने इन सब गुणोंके गुण कहे अब तुम और क्या सुनना चाहते हो?

द्विज व्याध सम्वादमें २११ अध्याय समाप्त।

ब्राह्मण बोला, विज्ञानाभिधेय तेजोमय धातु, पार्थिवधातुको प्राप्त होकर किस निमित्त देहाभिमानो होता है? और प्राणादि वायु नाड़ी मार्ग आश्रय करके किस प्रकार शरीरको विचेष्टित करता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ब्राह्मणने धर्म्मव्याधसे जो प्रश्न किया, धर्म्मव्याधने महात्मा ब्राह्मणको उत्तर दिया। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! प्रकाशमय विज्ञानात्मा चिदात्माको आश्रय करके शरीरका चेतन्य सम्पादन करता है। प्राण उस चिदात्मा और विज्ञानात्मामें वर्तमान रहके विचेष्टमान होता है। प्राणही सब जगतको रक्षा करता है। वही प्राण सब शरीरका पालन करता है, भूत और भविष्यत जो कुछ हैं सब प्राणहोमें स्थित हैं; सब प्राणियोंमें प्राणही श्रेष्ठ है, और हम उसी प्राणयोनि ब्रह्मकी उपासना करते हैं; प्राणही सब जन्तुओंकी आत्मा, और सनातनपुरुष है। महत्तत्व बुद्धि, अहङ्कार और प्राणही शब्द आदिके विषय हैं; सब जीव स्थानोंमें प्राणहीसे पाले जाते हैं, पीछे प्राणहीसे सब अपनी अपनी गतिको प्राप्त होते हैं। मूत्राशय, लिङ्ग, गुदा, और जठराग्निमें प्राणही रहता है, इसीसे

मूत्र और विष्ठा निकलते हैं, इसीसे प्राणका नाम अपान है। जो यत्न करनेमें सहाय देता है, उसे अध्यात्मविद्या जाननेवाले उदान कहते हैं। जो शरीरके सब सन्धियोंमें घूमता है, उसे व्यान कहते हैं, जो धातु और अग्निमें फिरा करता है, उसे वायु कहते हैं, वायुसेही सब धातु और रस बढ़ते हैं, प्राण हीके योगसे सबका शरीर बढ़ता है; गरमी ही अग्नि है, उसीसे सब प्राणियोंका अन्न पचता है, समान और उदानके बीचमें प्राण और अपान रहते हैं; यही शरीरको समर्थ करते हैं, और अग्नि अन्नको पचाती है। इन्हीसे लिङ्ग और गुदाकी संज्ञा होती है, और वेही दोनोंके द्वार हैं; प्राण अग्निके वेगको बढ़ाता है, और वह वेग गुदा तक आता है, वह पूरा तथा ऊपर आकरके वायुको छोड़ता है। नाभीके नीचे पक्वाशय है, और आमाशय नाभीके ऊपर है, और नाभीके बीचमें प्राण रहता है, हृदयसे नीचे और ऊपरको अन्नके रसको ले जानेवाली नाड़ी चलती हैं, नाड़ियोंमें प्राणकी प्रेरणासे अन्न जाता है। हे ब्राह्मण! योगियोंका ब्रह्म सन्निधानमें जानेका सहस्रार मार्ग यही है, इसीसेही योगी लोग जाते हैं; इस मार्गमें चलनेसे योगियोंको क्लेश नहीं होता, वे धीरतासे शिरमें आत्माका ध्यान करते हैं। सब प्राणियोंके शरीरमें ग्यारह विकार रूप धारण करके आत्मा भ्रमण किया करते हैं, यह मूर्त्तिमान और योगोंसे जीतने योग्य हैं; उस प्राणमें जो अग्नि रहती है; वटवीमें चंदके समान उसीको तुम जीव समझो, सो योगियोंसे जीतने योग्य है। उसमें जो देवता निवास करता है, वह ऐसे रहता है, जैसे जलके बीचमें कमल। उसीको तुम क्षेत्रज्ञ समझो; वह योगसे जीतने योग्य है। रजोगुण, तमोगुण, और सतोगुणको जीव रूप समझो और जीवको परमात्मा रूप समझो; वह परमात्मा चैतन्य और जीवके गुणोंसे युक्त हैं, उसको चेष्टासे सब जगत चेष्टा करता है; क्षेत्रज्ञको जाननेवाले उसीको परम पुरुष कहते हैं; उसीने प्रथम सातलोकोंको बनाया है, इस प्रकारसे सब प्राणियोंमें परमात्मा प्रकाशमान हैं, जिसे सूक्ष्मदृष्टिसे वेदके जाननेवाले देखते हैं। चित्तकी प्रसन्नतासे शुभाशुभ कर्म्मोंका नाश होता है; प्रसन्न चित्तवाला आत्मामें स्थित होके अनेक सुखोंको भोगता है; प्रसन्न चित्तवालेका लक्षण यह है, कि वह सुखसे सोता है, जैसे वायुरहित स्थानमें दीपकका प्रकाश होता है; ऐसेही प्रसन्नचित्त वाला दुःखोंसे रहित होकर प्रकाशित होता और सुख भोगता है; रात्रिके पहले वा पिछले भागमें अपने मनको परमात्मामें लगाकर आत्मामें आत्माका दर्शन करता है, प्रसन्नचित्तवाला थोड़ा भोजन करता है, और सदा शुद्ध रहता है, जलते हुए दियेके समान मन रूपी दीपकसे आत्माको देखता है; उसे देखनेसे ही मुक्ति होती है। सब उपायोंसे लोभ और क्रोधको जीतनाही संसारी मनुष्योंका तप है; क्रोधसे तपको और चञ्चलतासे धर्म्मको आदर और अनादरसे विद्याको और प्रमादसे आत्माको रक्षा करनी चाहिये। सत्य बोलनाही परम धर्म्म, क्षमा परम बल, आत्मज्ञान परम ज्ञान, और सत्यही परम व्रत है। सत्यही हित करनेवाला ज्ञान है, जो सब प्राणियोंको परम हितसाधक है, वही सत्य है; जिसके होम यज्ञादि सुकर्म्म फल त्यागसे होते हैं, वही बुद्धिमान त्यागी कहाता है; जिसको गुरु योगका उपदेश न करे किंतु क्रिया द्वारा योग सिखलावे उसीको योगी समझना चाहिये; किसी प्राणीकी हिंसा न करे, सबसे बैर त्यागकर मित्रता करे, कुछ संग्रह न करना, सन्तोष रखना, किसीकी आशा न रखना, चपलता न करना यही परम ज्ञान और उत्तम आत्मज्ञान है, सङ्गको त्याग-

नेसे बुद्धि अन्य धर्म्ममें लगती है, और इस लोक तथा परलोकमें निश्चल तथा आकाररहित स्थान प्राप्त होता है; मुनिको चाहिये, कि नित्य तप और दान करें, आत्माको जीतें; किसीके सङ्ग न रहे; तपहीका अभ्यास करें; इससे अप्राप्य स्थानभी प्राप्त होता है; गुणी और अगुणी दोनोंसे निःसङ्ग होकर अकेलेही कार्य्य करना ये ब्रह्मज्ञानीका एक पद सुख करना है; जो मनुष्य सुख और दुःख दोनोको त्यागता है, वह संशयरहित होकर ब्रह्मको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मणोत्तम! जैसा मैंने धर्म्म सुना था वैसा तुमसे कह सुनाया, आगे तुम्हारी सुननेकी क्या इच्छा है।

द्विज व्याध सम्वादमें
२१२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ऐसे सम्पूर्ण मोक्ष धर्म्मोंको सुन चुकनेके अनन्तर दृढ़ प्रीतिवाला ब्राह्मण फिर धर्म्मव्याधसे बोला, कि जो तुमने कहा सो सब न्यायसे युक्त हैं, धर्म विषयमें तुमसे कोई बात छिपी नहीं है। व्याध बोला, हे ब्राह्मणोत्तम! मुझे जिससे यह सिद्धि प्राप्त हुई, मेरे उस प्रत्यक्ष धर्म्मको देखो। हे भगवन्! तुम जल्दी खड़े होजाओ और घरमें चलके मेरे माता पिताको देखो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! ब्राह्मणने घरके भीतर जाकर बहुत मनोहर अटारी और स्थानोंको देखा, वह घर देवतोंके घरके समान था और देवतोंसे पूजा जाता था। वह स्थान पलङ्ग आसन तथा गन्धोंसे पूरित था, उस घरमें श्वेत वस्त्र पहने हुए, भोजन किये, परम सन्तुष्ट व्याधके मातापिता आसन पर बैठे थे। धर्म्म व्याध उन्हें देखकर उनके पैरों पर जा गिरा। वृद्ध बोले; हे धर्मके जाननेवाले! उठ, उठ धर्म तेरी रक्षा करे, तेरी दीर्घआयु हो, तेरी सेवासे हम बहुत प्रसन्न हैं, तेरी गति, तप और बुद्धि बहुत पवित्र है; हे पुत्र! देवतोंमें भी हमारे सिवा तुझे और देवता कोई नहीं है, ब्राह्मणकी पूजा करनेसे तुझे सम और दम सब प्राप्त हुए हैं; हे पुत्र! हमारी सेवा करनेसे तेरे ऊपर पितामह प्रपितामह सबही प्रसन्न हैं, मन कर्म और वचनसे जैसी हमारी सेवामें तेरी बुद्धि है ऐसी और कर्ममें नहीं है; हे पुत्र! जैसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने वृद्ध माता पिताकी सेवा की थी ऐसेही तुमने भी हमारी सेवा की है। तब व्याधने उस ब्राह्मणके आनेका वृत्तान्त अपने माता पितासे कहा, तब उन्होंने ब्राह्मणसे कहा, तुम्हारा आगमन अच्छा हुआ। ब्राह्मणने सत्कार पूर्व्वक दोनो वृद्धोंसे कहा, कि अपने पुत्र और सेवकों सहित कुशलसे तो है? तुम दोनोका शरीर निरोग तो है? दोनो वृद्ध बोले, हे ब्राह्मण! हमारे सेवकोंमें और घरमें कुशल है, तुमतो निर्व्विघ्न यहां आये?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! तब उस ब्राह्मणने प्रसन्न होकर कहा कि मैं कुशलसे आया। तब धर्मव्याध ब्राह्मणकी ओर देख कर बोला हे ब्राह्मण! यह दोनो मेरे माता पिता हैं; यह मुझे देवतोंसेभी परम देवता हैं, ऐसेही मैं इनकी पूजा करता हूं। जैसे सब संसारके इन्द्रादिक पतिसे देवता माननीय है, वैसेही मुझे ये दोनो वृद्ध माननीय हैं; जिस प्रकारसे ब्राह्मण लोग देवतोंकी भेंट चढ़ाते हैं ऐसेही मैं सावधान होकर इनकी भेट देता हूं। हे ब्राह्मण! यह मेरे माता पिताही मेरे लिये परम देवता हैं। इन्हींकी मैं फूल फल, और रत्नोंसे सदा पूजा करता हूं; विद्यामान लोग जितनी पूजाके योग्य अग्नि कहते हैं, मैं उन सबके योग्य इन्हींको जानता हूं। यज्ञ और चारों वेद यही माता पिता हैं इन्हींके वास्ते मेरे प्राण, स्त्री, मित्र और पुत्र हैं, मैं

पुत्र और स्त्रोके सहित इनकी सदा सेवा करता हूं, चरण धोता हूं, मैं आपही इनको स्नान कराता हूं, चरण धोता हूं, और भोजन कराता हूं, मैं सदा इनसे प्यारी वाणी बोलता हूं, कभी कठोर वचन नहीं बोलता; जो अधर्म काम भी इन्हें प्रिय हो,तो वह भी मैं करता हूं। ऐसेही इनकी सेवाको परम धर्म जानके मैं सेवा करता हूं; गृहस्थका यही धर्म्म है, अपने माता पिताकी सेवा करनी।

द्विज व्याध सम्वादमें २१३ अध्यात समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, इस प्रकारसे ब्राह्मणको माता पिताका दर्शन करा कर धर्म्म व्याध फिर ब्राह्मणसे बोला, कि जिससे मेरी ऐसी दिव्य दृष्टि है, यह माता पिताके सेवाका हो फल है। पतिसेवा करनेवाली सत्यशीला पतिव्रताने तुमसे कहा था कि जनक पुरीको जाओ, धर्म्मव्याध तुमको धर्म्मका उपदेश करेगा। ब्राह्मण बोला उस सत्यशीला पतिव्रताके बचनको स्मरण करके मैं समझता हूं, कि तुम अवश्य गुणवान हो। व्याध बोला हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! जब उस पतिव्रताने तुमसे मेरे विषयमें कहा था, तब उसने मुझे अवश्य ज्ञानदृष्टिसे देख लिया होगा। हे ब्राह्मण! तुम्हारे ऊपर दयादृष्टि करके हमने यह सब दिखलाया; अब जो मैं तुम्हारे हितके बचन कहता हूं, सो सुनो। तुमने अपने माता पिताका अनादर किया; बिना उनकी आज्ञा वेद पढ़नेको निकल गये; यह तुमने बहुत अयोग्य कर्म्म किया; तुम्हारे शोकसे वृद्ध माता पिता अंधे हो गये, तुम अब उनको प्रसन्न करनेके लिये घर जाओ; तुम तपस्वी महात्मा सदा धर्म्म करनेवाले हो, सब प्रकारसे तुमको माता पिताको प्रसन्न करना चाहिये; इन मेरे बचनों पर तुम श्रद्धा करो और इसमें बिलम्ब मत करो, हे ब्राह्मण! मैं तुम्हारे भलेकी बात कहता हूं, अभी चले जाओ। ब्राह्मण बोला हे धर्म्मव्याध! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ, तुम्हारा कल्याण हो, तुम बहुत गुणवान हो। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! तुम देवतोंके समान धर्म्म करनेवाले हो, तुम माता पिताके पास जाकर और आलस्य रहित होकर माता पिताकी सेवा करो, मैं इससे बड़ा कोई धर्म्म नहीं देखता हूं। ब्राह्मण बोला, मैं प्रारब्धहीसे यहां आया और और प्रारब्धहीसे तुमसे भेंट होगई; तुम्हारे समान धर्म्मको जाननेवाले मनुष्य दुर्लभ हैं, सहस्रों मनुष्योंमें धर्म्मका जानने वाला एकही होता है; हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्न हुआ, मैं नरकमें गिरा जाता था, तुमने उससे मेरा उद्धार किया; जैसे स्वर्गसे गिरते हुए राजा ययातिको उनके पुत्रीके पुत्रोंने उद्धार किया था, हे पुरुषशार्दूल! वैसेही तुमने मेरा उद्धार किया। माता पिताकी सेवा मैं अवश्य करूंगा, अविवेकी मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है, शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुए मनुष्योंको धर्म्म जानना बहुत कठिन है; मैं तुमको एक विशेष कारणसे शूद्र नहीं मानता हूं; हे महाबुद्धिमान! जिस विशेष कर्म्मसे तुम शूद्र हुए हो उसको मैं जाननेको इच्छा रखता हूं, तुम इच्छापूर्व्वक कहो। व्याध बोला हे ब्राह्मणोत्तम! ब्राह्मणोंका मैं अनादर नहीं कर सकता हूं; हे पापरहित! पहले मेरे कर्म्मको सुनो, मैं पहले जन्ममें एक ब्राह्मणका पुत्र वेद और वेदाङ्गोंका जाननेवाला ब्राह्मण था; मैं अपनेही दोषसे इस अवस्थाको प्राप्त हुआ हूं, एक धनुर्वेदका जाननेवाला राजा मेरा मित्र था, उसके संग रहनेसे मुझे भी धनुर्वेदका थोड़ा थोड़ा अभ्यास हो गया। एक दिन राजा आखेटको गया; बहुतसे योधा और मन्त्रियोंको भी सङ्ग लेगया था; बनमें जाकर राजाने बहुतसे मृगोंको मारा, आखेट करते करते हम लोग एक ऋषिके आश्रममें पहुंचे,

वहां जाके भो मैंने एक बाण चलाया, तो वह बाण उस ऋषिको लगा, बाण लगतेही ऋषि पृथ्वीमें गिर पड़े और दीन होकर कहने लगे कि मैंने किसीका अपराध नहीं किया और वह कौनसा पापी है, जिसने मेरे बाण मारा है; हे ब्राह्मण! मैं उसे मृग समझकर पास गया वहां जाके ऋषिको देखा और अपने कुकर्मको देखकर बहुत दुःखी हुआ। उस ऋषिको पृथ्वीमें शब्द करते हुए पड़ा देखकर मैंने कहा, हे ब्राह्मण! मैंने यह अज्ञानसे अपराध किया, उस तपस्वीने क्रोधसे भरके मुझसे कहा, कि तू शूद्रयोनिमें व्याध होगा।

द्विज व्याध सम्वादमें

२१४ अध्याय समाप्त।

व्याध बोला, हे ब्राह्मणोत्तम! इस प्रकारसे जब मुझे ऋषिने शाप दिया, तब मैंने ऋषिको दीन वाणीसे त्राहि त्राहि कहके प्रसन्न किया। मैंने हाथ जोड़कर कहा, महाराज! मैंने यह कर्म अज्ञानसे किया था, आप क्षमा कीजिये। तब ऋषि बोले, कि मेरा दिया शाप झूठा नहीं होगा; किन्तु तौभी तेरी प्रार्थनासे मैं कुछ कृपा करता हूं। शूद्र जन्ममेंभी तुझे धर्मका ज्ञान बना रहेगा; माता और पिताको तू परम सेवा करेगा; उनकी सेवा करनेसे तुझे परमसिद्धि प्राप्त होगी, पहले जन्मका ज्ञान रहेगा और स्वर्गको प्राप्त होगा। मेरे शापके समाप्त होने पर फिर तू ब्राह्मण होगा। इस प्रकारसे महा तेजस्वी ऋषिने मुझे शाप दिया था। हे ब्राह्मण! फिर मेरे ऊपर उनने कृपा भी करी। मैंने उनके शरीरसे बाण निकाला और उन्हें आश्रममें पहुंचाया, उनके प्राण नष्ट नहीं हुए। यह मैंने अपने पूर्व्व कर्म्मोंका वृत्तान्त तुमसे कहा। इस जन्मके पीछे मैं स्वर्गको जाऊंगा। ब्राह्मण बोला, हे महाभाग! इसी प्रकारसे मनुष्योंको सुख और दुःख प्राप्त होता है, तुमने अज्ञानसे यह कर्म किया था; हे लोकके वृत्तान्तको जाननेवाले! हे धर्म्मपरायण! इन सब कर्म्मोंके दोषोंको भोगकर फिर सुख होगा, मेरी बुद्धिमें इस समयभी तुम ब्राह्मण हो। जो ब्राह्मण-कुलमें उत्पन्न होकर नीच कर्म्म करे वह अवश्यमेव शूद्र तुल्य है, और जो शूद्र सत्य धर्म्म करता हो तो उसे भी हम ब्राह्मण ही मानते हैं! मनुष्य कर्म्मके दोषसे ही अच्छी और बुरी गतिको प्राप्त होता है; हे नरोत्तम! मैं तुमको दोष-रहित जानता हूं। तुम घबड़ाओ मत, तुम्हारे समान बुद्धिमान शोक नहीं करते हैं; जो लोग संसारकी गतिको जानते हैं और धर्म्म करते हैं, वे लोग कदापि शोक नहीं करते हैं। वह व्याध बोला, हे ब्राह्मण! बुद्धिसे मनके दुःख और औषधोंसे शरीरके दुःख दूर होते हैं। यह जो ज्ञानकी शक्ति है, सो मूर्खोंके समान नहीं हो सकती है; जिस कर्म्ममें हानि दीखती है, पुरुष उससे शीघ्रही विरक्त हो जाता है; यदि उसका कुछ उपाय दीख पड़ता है, तो उसका उपाय करने लगता है, सोचसे कुछ नहीं होता है, केवल पुरुषको दुःख ही होता है। जो ज्ञानीलोग दुःख और सुख दोनोको छोड़ देते हैं, वेही ज्ञानसे तृप्त होकर सुखको भोगते हैं; वेही लोग पण्डित कहाते हैं। जो लोग सन्तोष नहीं करते हैं, वे लोग मूर्ख हैं और पण्डित लोग असन्तोषीहीको मूर्ख समझते हैं। असन्तोषका अन्त नहीं है, इस लिये सन्तोषही परम सुख है। जो लोग मार्गसे चलकर अपने स्थानको देखते हैं, उनको सोच नहीं होता है। पुरुषको कभी दुःख नहीं करना चाहिये, क्योंकि दुःखही बड़ा भारी विष है। दुःख मूर्ख पुरुषोंको इस प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे क्रोधी सर्प बालकको काट खाता है; पर कृपाका समय आनेसे जिसको दुःख हुआ, वह तेजसे हीन होजाता है; तब पुरुषार्थ नहीं

कर सकता है। जो कर्म्म किया है, उसका फल अवश्य होता है, केवल सोच होनेसे किसी कर्म्मसे पुरुष छूटता नहीं है। यदि किसी दुःखका उपाय दिखाई भी दे, तो पुरुष विना सोचेही उसको करने लगता है। यदि वह सिद्ध न हो, तो कुछ उसमें दुःख नहीं करे। जो पण्डित लोग बुद्धिके पार हो गये हैं, वे बीते हुए कामको ऐसेही होनेवाला मानते हैं। फिर पण्डित लोग कुछ सोच नहीं करते हैं, क्योंकि वे लोग परम गतिको देखते हैं। हे पण्डित! हमभी कुछ सोच नहीं करते हैं, क्योंकि हम समयको देखते हुए यहां स्थित हैं। हे ब्राह्मण! हम इन्ही सब कारणोंको देखकर कुछ सोच नहीं करते हैं।

ब्राह्मण बोला, हे व्याध! हम तुम्हारा कुछ सोच नहीं करते हैं; क्योंकि तुम बुद्धिमान और पण्डित हो, तुम्हारी बुद्धि बहुत उत्तम है, तुम ज्ञानसे भरे और धर्म्मको जाननेवाले हो। हे धर्म्मधारियोंमेंश्रेष्ठ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम सावधान होकर धर्म्म करो, हम अब जानेको आज्ञा मांगते हैं; धर्म्म तुम्हारी रक्षा करे, हमको आज्ञा दो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, व्याधने हाथ जोड़कर ब्राह्मणसे कहा, कि बहुत अच्छा। अनन्तर ब्राह्मण व्याधकी प्रदक्षिणा करके चल दिये। वहांसे जाकर उस ब्राह्मणने माता और पिताकी प्रदक्षिणा करी और माता पितानेभी उसकी उचित प्रशंसा करी। हे युधिष्ठिर! हे धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे तात! तुमने जो हमसे पूछा था, सो सब धर्म्म हमने तुमसे कहा; हमने पतिव्रताका माहात्म्य ब्राह्मणका कर्म और पिता, माताकी सेवा तुमसे कही; यह सब धर्म व्याधने ब्राह्मणसे कहा था।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सब धर्म्मोंके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे मुनिवर! आपने हमसे परम अद्भुत वृत्तान्त कहा; यह वृत्तान्त बहुतही अच्छा था; इससे यह समय सुखको मुहूर्तके समान व्यतीत हो गया, और मैं धर्म सुनकर तृप्त नहीं हुआ।

पतिव्रता माहात्म्यमें द्विजव्याध सम्वाद और २१५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इस धर्मकी कथाको सुनकर धर्मराज युधिष्ठिरने फिर मार्कण्डेय मुनिसे पूछा। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महर्षे! पहले समयमें अग्नि देवता किस प्रकार वनमें गये थे? और महा तेजस्वी अङ्गिराने किस प्रकारसे अग्निके नष्ट होने पर अग्नि होकर यज्ञोंकी आहुतिको भोग किया था? हे भगवन्! अग्नि तो एकही हैं, फिर वह अनेक कर्म्मोंमें अनेक कैसे हो जाते हैं, हम इस कथाको सुनना चाहते हैं। हम कार्त्तिकेयकी उत्पत्ति सुनना चाहते हैं। वे शिवके पुत्र किस प्रकारसे हुए, और कैसे अग्निके पुत्र हुए? उनको गङ्गा और कृत्तिकाने किस प्रकार उत्पन्न किया? हे भृगुकुलश्रेष्ठ! हे महामुनि! हमें इन सब कथाओंके सुननेको बहुत इच्छा है, आप यथार्थ रूपसे कहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज! पण्डित लोग इसी स्थान पर इस पुरानी कथाका उदाहरण देते हैं। जिस प्रकार अग्नि क्रोधित होकर तप करनेके लिये वनको चले गये थे, जिस प्रकार भगवान अङ्गिरा आपही अग्नि होगये थे और जिस प्रकार उन्होंने अग्नि होकर अपने तेजसे सब जगतके अन्धकारका नाश किया था, सो सब कथा हम आपसे कहते हैं।

हे महाबाहो! पहले समयमें महाभाग अङ्गिरा मुनिने अपने आश्रमपर बैठकर अग्निकी घोर तपस्या की थी। अनन्तर अङ्गिराभी अग्निके स्वरूप हो गये, उनके तेजसे सब जगतमें प्रकाश

हो गया। अङ्गिराकी तपस्याके तेजसे अग्निको बहुत दुःख होने लगा; इससे तेजस्वी अग्नि बहुत मलिन होगये और कोई काम न कर सके; तब भगवान अग्निने विचारा, कि ब्रह्माने सब लोकोंके निमित्त नवीन अग्नि बनाई है, और तपस्या करते करते हमसे तेज नष्ट हो गया; अब हम कैसे अग्नि हों। फिर अग्निने दूसरी अग्निके समान महामुनि अङ्गिराको देखा! अनन्तर भगवान अग्नि डरते डरते और धीरे धीरे अङ्गिरा मुनिके पास गये; तब अङ्गिराने अग्निसे कहा, कि तुम पुनः शीघ्रही अग्नि हो जाओ, क्योंकि तुम तीनो लोकमें विख्यात हो। हे अन्धकार नाश करनेवाले! प्रथम कालमें ब्रह्माने तुमहीको अन्धकार नाशक अग्नि बनाया था, इससे तुमही पुनः अग्नि हो जाओ।

अग्नि बोले, हे महामुने! जगतमें मेरी कीर्त्ति नष्ट हो गई है और तुम अग्नि हो गये हो, इससे जगतके सब पुरुष तुमहीको अग्नि जानेंगे, मुझको नहीं। हम तुमको अग्निकी शक्ति देते हैं, तुम प्रथम अग्नि अर्थात सूत्रात्मा बनो। हम दूसरी अग्नि अर्थात विराट होंगे।

अङ्गिरा बोले, हे अग्नि! तुम पुण्य करो, और तिमिरापहारी हव्यकव्यवाही अग्नि हो जाओ और मुझको अपना प्रथम पुत्र बनाओ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अङ्गिराके ऐसे वचन सुन अग्निने वैसाही किया। अङ्गिराकेभी पुत्रका नाम बृहस्पति हुआ, उस अङ्गिराके पुत्रको सब देवतोंने माना वह अग्निका पहला पुत्र हुआ। सब देवतोंने वहां आके उससे ब्रह्मजिज्ञासा किया। अनअनन्तर उन्होंने देवतोंसे सब कारण कह सुनाया; फिर अङ्गिराने उसे देवताओंका पुरोहित बना दिया; देवतोंने अङ्गिराका वह सब वचन ग्रहण किया। तभी से ब्राह्मणोंने यहां तेजस्वी अग्निके अनेक नाम रक्खे; इसमें कर्महो प्रधान है।

आङ्गिरसोपाख्यानमें
२१६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे कुरुकुल-नन्दन! ब्रह्माके जो दूसरे पुत्र अङ्गिरा हैं, उनकी शुभानामी भार्य्या थी; उसको सन्तानकी कथा सुनिये।

उनके पुत्रोंके नाम ये हैं—बृहत्कीर्त्ति बृहज्ज्योति, बृहन्मना, बृहन्मन्त्र, बृहद्ब्रह्मा, बृहद्भास और बृहस्पति। इन सब सन्तानोंमें एक भानुमति नामक कन्या बड़ी सुन्दरी हुई। वह अङ्गिराकी प्रथम पुत्री थी। और अङ्गिराकी दूसरी पुत्रीका नाम रागा हुआ। सब जगतके जन्तुओंने उससे बहुत अनुराग किया, इससे उसका नाम रागा हुआ। जगतके पुरुष जिसको शिवकी पुत्री कहते हैं, जो अत्यन्त सूक्ष्म होनेके कारण दृश्य और अदृश्य हैं, उसका नाम सिनीवाली है, वह अङ्गिराकी तीसरी पुत्री है। जो अपनी किरणोंसे सबको देखती है, उस चौथीका नाम अर्चिष्मति है। जिसमें यज्ञकी आहुति पाकर देवता लोक प्रसन्न होकर सन्तुष्ट होते हैं, उनकी उस पांचवीं कन्याका नाम हविष्मति है; अङ्गिराकी छठीं कन्याका नाम माहिष्मति है; उसीका नाम यज्ञोंमें आङ्गिरसी भी है। हे महामते! अङ्गिराके सातवीं कन्याका नाम महामति है। जिसको देखकर जगतके मनुष्य विस्मित हो जाते हैं, जिसमें चन्द्रमाका कुछ अंश नहीं रहता, अङ्गिराके उस आठवीं पुत्रीका नाम कुहू है।

आङ्गिरसोपाख्यानमें
२१७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! बृहस्पतिकी जो यशस्विनी स्त्री थी, उससे

अग्नि नामक छः पुत्र उत्पन्न हुए। यज्ञोंको आहुतिमें जिस अग्निका नाम पहिले लिया जाता है, वह महाव्रत अग्नि बृहस्पतिका पुत्र है; उसका नाम शामयू है, चातुर्मास और अश्वमेध यज्ञोंमें जिसके निमित्त पशु दिया जाता है, जो अनेक जलती हुई ज्वालाओंसे प्रकाशमान होता है जो वही एक अग्नि बलवान है। शामयूकी असाधारण स्त्री थी, जो धर्म्मसे उत्पन्न हुई थी, उसका नाम सत्या था और दोप्त अग्नि उसका पुत्र हुआ और तीन उत्तम व्रत धारण करनेवाली कन्या हुईं, जो अग्नि यज्ञोंमें पहिले शाकल्यसे पूजा जाता है, उसके पहिले पुत्रका नाम भरद्वाज है। जो सब पूर्णमास यज्ञोंमें स्रुवासे आहुति पाता है, उस अग्निका नाम भरत है; वह शामयूका दूसरा बेटा है। उसकी और भी तीन कन्या हैं उन तीनोंका नाम भरतस्त्रोमी। उसकी भरती नामक एक कन्या है। हे भरतसत्तम! अग्निका भरत और प्रजापतिका अग्नि पुत्र है; वह सबसे बड़ा है। भरद्वाजकी स्त्रीका नाम वीरा है, ब्राह्मण लोग उसकी पूजा चन्द्रमाके समान शाकल्यसे करते हैं। जो घीसे दूसरे चन्द्रमाके संग पूजा जाता है, वह रथोंका स्वामी है और उसका नाम कुम्भरेता है, उस कुम्भरेताकी स्त्रीका नाम सरयु है, उसके पुत्रका नाम सिद्ध है, उसने अपने तेजसे सूर्य्यको छिपा लिया, वह आग्नेय कर्म्मोंको प्राप्त करता है, महात्मा लोग इसका आह्वान करते हैं; जो कभी तेज, यश और लक्ष्मीसे नष्ट नहीं होता, जो सदा केवल पृथ्वीपतिकी स्तुति करता है, उस अग्निका नाम चवन है; जो सब पापोंसे रहित पवित्र और समयके अनुसार धर्म्म करनेवाला है, जो अपनी पवित्र ज्वालाओंमें जलता रहता है, वह विपाक नामक अग्नि उसका पुत्र है; जो राति हुए पुरुषोंको दुःखोंसे छुड़ाता है उस अग्निका नाम निष्कृति है, वह सदाही शोभायमान रहता है; जिससे रोगी लोग अच्छी शब्द करते रहते हैं, उस अग्निका नाम स्वन है और वह पूर्वोक्त अग्निका पुत्र है, उससे सब रोग उत्पन्न होते हैं; जो अग्नि सब जगतके पुरुषोंको बुद्धिको अपने वशमें रखता है, विद्वान लोग उसका नाम विश्वजित बतलाते हैं; हे भारत! जो अग्नि सब प्राणियोंके अन्तरमें रहती है, जिससे सब भोजन पचता है, उसका नाम विश्वभुक् है, इस अग्निको ब्रह्मचारी, व्रतधारी ब्राह्मण लोग सदाही पाकयज्ञमें पूजते हैं; इसकी प्यारी स्त्रीका नाम गोमती है, उसीमें सब धर्म्म करनेवाले लोग कर्म्म करते हैं; जो परम दारुण अग्नि है, जो समुद्रको पोता है उसका नाम बाड़वाग्नि है, जो प्राण नामक अग्नि ऊपरको जाती है, कवियोंने उसका नाम ऊर्द्धगामी रक्खा है; जिसके निमित्त द्वारपर बलि दी जाती है, उसका नाम स्विष्टकृत है; जो अग्नि शान्त पुरुषोंमें क्रोध रूप होकर बसती है, जो क्रोधी पुरुषोंमें तेजरूप होकर बसती है, हम जानते हैं, कि वह पूर्वोक्त अग्निकी कन्या है, वह बड़ी दारुण है उसका नाम स्वाहा है। स्वर्गमें जिसके समान रूपवान कोई नहीं है, जिसकी तुलना नहीं हो सकती है, उस अग्निका नाम काम है। जो अग्नि रथपर चढ़कर माला पहनकर और धनुष धारण करके सब शत्रुओंका नाश करती है, जिसकी स्तुति तीन उच्च पदोंसे करी जाती है, उस महाभाग अग्निका नाम ग्रन्थ है, उसीसे महा काव्य उत्पन्न हुए हैं और उसीको समाख्यास कहते हैं।

आंगिरसोपाख्यानमें
२१८ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! काश्यपके पुत्र वशिष्ट वशिष्टके पुत्र प्राण, प्राणके पुत्र अग्नि उनके पुत्र अङ्गिरा। च्यवन और

सुवर्चक इन्होंने पुत्रके लिये कई सौ वर्षोंतक घोर तप किया; उन्होंने कहा, कि हमको ऐसा धार्म्मिक पुत्र हो, जो यशमें ब्रह्माके समान हो; जब उन्होंने पञ्च महा व्याहृतकी ओर ध्यान किया उसी समय पांच वर्णवाला महा तेजस्वी एक तेज उत्पन्न हुआ। हे भारत! उसका सिर अग्निके समान, हाथ सूर्य्यके समान, त्वचा और नेत्र स्वर्णके समान और उसकी जङ्घा काली थी। उन पांचोंने अपने तपके बलसे उस बालकको पांच रंगका बनाया, इस-लिये उस बालकका नाम पाञ्चजन्य रखना पड़ा। उससे पांच वंश चले। उसने १०००० (दश हजार) वर्ष घोर तप किया; उसके पुत्रका नाम अग्नि हुआ, और उस अग्निहोसे उनके पितरोंका वंश चला। अनन्तर शिरसे ब्रह्द्रथ, मुखसे विष्णु, नाभिसे शिव, बलसे इन्द्र, प्राणसे वायु और अग्निको उत्पन्न किया। हाथोंसे उदात्त और अनुदात्त स्वर और मन आदि इन्द्रियोंको उत्पन्न किया, इन सबके पश्चात पितरोंके पांच पुत्रोंको उत्पन्न किया। उन पांचमेंसे बृहद्रथका प्रणधो, काश्यपका महत्तर, आङ्गिराका भानु और वर्चका सौभर पुत्र हुआ। प्राणके पच्चीश अनुदात्त पुत्र हुए; और उन्होंने पन्द्रह यज्ञोंके नाश करनेवाले पुत्र उत्पन्न किये। नमेंसे पांचोंके ये नाम हैं, सुभीम, अतिभीम, भीमबल, भीम, अबल येही पांच यज्ञोंको नाश करनेवाले हैं; और तपसे बने हैं।

सुमित्र, अतिमित्र, मित्रघ्न, मित्रवर्द्धन और मित्रधर्मा, इन पांच देवतोंको भी तपसे बनाया है; सुरप्रवीर, वीर, सुरेश, सुवर्चस और सुरहन्ता इन पांचोंकोभी तपसे बनाया। ये सब पांच पांच मिलकर तीन स्थानोंमें *अलग अलग* रहने लगे। ये सब लोग स्वर्गहीमें बैठे यज्ञोंका भोग करते हैं; वे लोग उनके इष्ट कार्य्योंको नाश करते हैं और ये लोग यज्ञकी गन्धसे सब यज्ञोंके शाकल्यको नष्ट करते हैं और खा जाते हैं; तब चतुर लोग वेदीके बाहर दान देने लगे; इसी कारणसे ये लोग उस वेदोमें नहीं जाते हैं; चिताकी अग्निके घीको अपने पंखोंसे ले जाते हैं; जब मन्त्रोंसे इनकी शान्ति कर दी जाती है, तब ये लोग यज्ञोंको नाश नहीं करते हैं। तपका पुत्र ब्रहद्दुक्थ भूमिमें रहता है अग्निहोत्रके प्रारम्भमें ब्राह्मण लोग उसकी पूजा करते हैं; तपका पुत्र रथन्तर जिसे विराट अग्नि कहते हैं; उस मित्रविदको यज्ञकर्त्ता लोग हवि कहते हैं; इन पुत्रोंके सहित महा यपस्वी तप बहुत प्रसन्न हुए।

आङ्गिरसोपाख्यानमें
२१८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, बड़े भारी नियमोंसे भरत नामकी अग्नि उत्पन्न हुई। पुष्टोवाली अग्नि पुष्टिमति अग्नि सन्तोष और पुष्टिको देती है। सब प्रजाका भरण पोषण करती है, इसीसे इसका नाम भरत है। जो शिव नामकी अग्नि है, वह शिवकी पूजा करती है और सब दुखोंको दूर करती है। इससे इसका नाम शिव है, तपके बड़े भारी फलको देखकर वह तप करने लगी; तब उसके पुरन्दर नामक पुत्र उत्पन्न हुए, बाफसे बाफ उत्पन्न होकर वह मनुष्योंको अग्नि दीखने लगा। मनु नामक अग्निने प्रजापत्य किया। वेदको जाननेवाले ब्राह्मण लोग अग्निको शम्भु, कहते हैं। जलती हुई अग्निको ब्राह्मण लोक आवसत्य कहते हैं, तपके पञ्चयज्ञ नामक पांच पुत्र उत्पन्न हुए; वे सब महातेजस्वी तपसे स्वर्णके समान रूपवान थे; जब अग्नि चलते चलते थक गई और सूर्य्यभी थक गये तब भयानक असुर और अनेक भांतिके मनुष्य उत्पन्न हुए; मनुके तपके पुत्र अङ्गिराने सूर्य्य बनायी। वेदपाठी ब्राह्मण उसको ब्रहद्भानु

कहते हैं; सूर्य्यकी स्त्रियोंको छः पुत्र उत्पन्न हुए। दुर्व्बल मनुष्योंको जो शक्ति देता है, उस सूर्य्यके पहिले पुत्र अग्निको वल देनेवाला कहते हैं; सूर्य्यका दूसरा पुत्र वह है, जो शान्त मनुष्योंके हृदयमें क्रोध उत्पन्न करता है, पूर्णमासी और अमावसके दिन जिसमें यज्ञ किया जाता है, उस अग्निका विष्णु, द्युतिमान और अङ्गिरा नाम है। इन्द्रके सहित जिसको आग्रयण आहुति दी जाती है, उस अग्निको आग्रायण कहते हैं; वह भी सूर्य्यके वंशमें है, वर्षाऋतुमें जिसमें आहुति दी जाती है, वह अग्नि सूर्य्यके वंशमें हैं। अग्नि और चन्द्रमासे रात्रि नामक कन्या उत्पन्न हुई; वह कन्या मनुसे व्याही गई और उससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए; जो वर्षा ऋतुके चार महीनेमें पूजा जाता है, वह अग्नि मेघोंके साथ रहता है, उसका नाम वैश्वानर है वह मनुका प्रथम पुत्र है। मनुका दूसरा पुत्र विश्वपति नामक अग्नि है, वही इस जगतका स्वामी है, और जब जगत् अन्नपरिपाक करता है, तब स्विष्टकृत नामक अग्नि घीकी आहुतिको ग्रहण करनेवाला है। हिरण्यकश्यपोंकी रोहिणी नाम्नी कन्या थी; वह स्विष्टकृत नामक अग्निकी स्त्री हुई। जो प्राणियोंके शरीरमें प्राणोंके आश्रयसे रक्षा करता है, उसका नाम प्रजापति है; उसका पुत्र सन्निहित नामक हुआ जो शब्द रूपका साधक है, इसकी दो गति है; एक कृष्ण एक शुक्ल। यह अग्नि निष्पापियोंको पापी बनाता है, यह क्रोधके आश्रयमें रहता है, लोग जिसे कपिल और परम ऋषि कहते हैं, वह कपिल नामक अग्नि सांख्य योगका प्रवर्त्तक है; जिसे सब विचित्र कर्मोंमें सब मनुष्य आगे रखते हैं उन अग्निका नाम अग्रणी है। इन ऊपर लिखी अग्नियोंके सिवा और भी दूसरी दूसरी अग्नि पृथ्वीमें बुरे अग्निहोत्रोंके प्रायश्चित करनेको बनाई गई हैं; जब अग्नि वायुके योगसे परस्पर मिल जांय, तब अष्टाकपाल यज्ञ करना चाहिये; इससे शुचि नामक अग्नि प्रसन्न होती है; दक्षिणाग्नि जब दूसरी अग्निसे मिलती है तब अष्टाकपाल नामक यज्ञ करना चाहिये, इससे वीति नामक अग्नि उत्पन्न होती है। जब अग्नि कहीं वनमें लगे तब अष्टाकपाल यज्ञ करना चाहिये। यदि रजस्वला स्त्री अग्निहोत्रको स्पर्श करले तो अष्टाकपाल नामक यज्ञ करना चाहिये; इससे सुमति नामक अग्नि प्रसन्न होती है। जब किसीको मरा हुआ सुने वा पशुओंका नाश होते देखे तो अष्टाकपाल यज्ञ करे, इससे सरभीमान अग्नि प्रसन्न होती है। यदि किसी दुःखके कारण ब्राह्मण तीन रात्रि तक यज्ञ न करे, तो अष्टाकपाल यज्ञ करे उससे उत्तराग्नि प्रसन्न होती है; अमावस और पूर्णमासीके दिन अतिथिकृत अग्निके प्रसन्न करनेको अष्टाकपाल यज्ञ करे यदि सौरीकी अग्नि अग्निहोत्रमें छिप जाय तो अष्टाकपाल यज्ञ करे, तो अग्नि प्रसन्न होती है।

२२० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! युधिष्ठिर! जलमें जो सह नामक अग्नि रहती है, जिसका नाम भूपति और भूति है, उसकी प्यारी स्त्रीका नाम मुदिता था, उसने अग्निको उत्पन्न किया, उसी अग्निको सब जगतका जीवन कहते हैं; उसीका नाम आत्मा और भुवनमती है, वह ब्राह्मणोंके वशमें उत्पन्न हुआ है, जो सब जगतके बड़े बड़े जीवोंके स्वामी हैं, वही भगवान अग्नि सब जगत्में घूमते हैं। जो गृहपति नामक अग्नि हैं वही सब यज्ञोंमें पूजी जाती हैं वही अग्नि इस सब जगतकी आहुतिको खाते हैं वही महाभाग अग्नि सबके खाने वाली और महा अद्भुत है वही अग्नि जलसे उत्पन्न हुई हैं; उन्हींका नाम भूपति भूमती और महत स्वामी है; उस अद्भुत अग्निका पुत्र

भरत हुआ; वह भरत सब मरे हुए शरीरोंको जलाता है और अग्निष्टोमादिक यज्ञमें स्थापित किया जाता है; वही अग्नि सबसे प्रथम है; देवता लोग उसीको ढूंढते हैं। जो अग्नि सबका प्रभु है, उसका नाम नियत है। जब नियतने अथर्वाको देखा, तब भयसे समुद्रमें घुस गये; तब देवता लोग सब ओर ढूंढते समुद्रमेंभी गये। जब अग्निने अथर्वाको देखा तो ऐसे वचन बोले—हे वीर हम बहुत दुर्बल हैं तुम अबसे देवतोंकी आहुतियोंको भोजन करो, तुम पिंगाक्ष अग्निके पास जाओ, यह हमारा प्रिय कार्य्य है, इसको तुम करो। अग्नि अथर्वको भेज कर दूसरे देशको चले गये। उनके जानेका समाचार मछलियोंने कह दिया; तब अग्निने क्रोध करके मछलियोंको शाप दिया, कि तुमको शरीरधारी अनेक प्रकारसे खायंगे। अनन्तर अग्निने अथर्वासे सब वृत्तान्त कह दिया; तब देवतोंने अग्निका हित चाहकर बहुत समझाया परन्तु अग्नि यज्ञकी आहुतियोंको ग्रहण न कर सके और अपने शरीरको छोड़ दिया। अग्नि अपने शरीरको छोड़ कर पृथ्वीमें घुस गये वहां जाकर उन्होंने सब धातुओंको अलग अलग उत्पन्न किया, अग्निके पीपसे गन्धक हड्डियोंसे देवदारु, कफसे स्फटिक और पित्तसे मरकत मणी उत्पन्न हुई। यकृत (तापतिल्ली) से काला लोहा उत्पन्न हुआ। इन काठ पाषाण और लोहेसे प्रजा अनेक सुख पाने लगी। नाखूनसे अभ्रक और नसोंसे मूंगे उत्पन्न हुए। हे राजन्! अग्निके और शरीरोंमें अनेक धातु उत्पन्न हुई। इस प्रकार अग्निने शरीर छोड़ा और महा तपस्या करी। फिर भृगु और अङ्गिरा आदि ऋषियोंने बहुत तपसे अग्निको स्थिर किया। तब महा तेजस्वी अग्नि प्रज्वलित होकर उठे। जिस समय उन्होंने ऋषियोंको देखा, उसी समय समुद्रमें घुस गए; अग्निके नष्ट होतेही सब जगत भयसे व्याकुल हो गया और सब अथर्वाकी पूजा करने लगे। उस समय देवता लोगोंने भी अथर्वाको पूजा की। अनन्तर अथर्वाने सब जगतके आगे समुद्रको मथा और अग्निको निकाला। इस प्रकारसे भगवान अथर्वाने नष्ट अग्निका पुन: जगतमें प्रकाशित किया। उसी दिनसे अग्नि पुन: जगतके सब यज्ञोंको भोग करने लगे। इस प्रकार वेदोंमें कहे हुए अनेक प्रकारके अग्नि उत्पन्न हुए; वे लोग सब देशोंमें घूमते हैं, यही लोग विद्वान कहाते हैं; सिन्धु पंचनद, देविका सरस्वति, गङ्गा, शत कुम्भा, शरयू, गण्डक, चरमण्वती, मही, मे॰॰ा, मेधातिथि, ताम्रा, वेत्रवती, कौशिकी, तमसा, नर्म्मदा, गोदावरी, वेणा, उपवेणा, भीमा, बड़वा, भारती, सुप्रयोगा, कावेरी, मुरमुरा, तुङ्गवेणा, कृष्णवेणा और कृष्णा, ये सब नदी उन देवतोंकी माता हैं। इस अद्भुत अग्निकी प्रियानामी स्त्री है; उनके जेठे पुत्रका नाम विभु है। हमने जितने प्रकारकी अग्नि कही उतनेही सोमयज्ञ भी हैं। अत्रिके वंशमें ब्रह्माको अग्निरूप मानस पुत्र उत्पन्न हुए हैं; जब अत्रिने पुत्र उत्पन्न करनेकी इच्छा करी, तब उन्होंने अग्नियोंको अपने शरीरमें धारण किया। तब उस महात्मा ब्राह्मणके शरीरसे अग्नि उत्पन्न होने लगे; हे महाराज! हमने इस प्रकारसे आपसे इन सब महात्मा अग्नियोका वर्णन किया। ये सब अनन्त श्रीमान और अन्धकारके नाश करनेवाले हैं; अद्भुत अग्निका महात्म्य वेदमें लिखा है। ऐसाही सब अग्नियोंका माहात्म्य है। इन सबमें एकही प्रथम अग्नि है; उसीका नाम भगवान अङ्गिरा भी है; उसीसे अग्निष्टोम यज्ञके समान अनेक ज्योति उत्पन्न हुई हैं। हमने अग्निका वंश तुमसे कहा; वही अग्नि अनेक मन्त्रोंके सहित यज्ञमें आहुति भोग करती है।

२२१ अ॰॰ाय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे पापरहित युधिष्ठिर! हमने तुमसे अग्निके अनेक वंशोंका वर्णन किया। अब हम बुद्धिमान स्वामकार्त्तिकके जन्मका वर्णन करते हैं, आप सुनिये। हे कुरुकुलश्रेष्ठ! जो अग्निके विचित्र पुत्र महा तेजस्वी स्वामकार्त्तिक उत्पन्न हुए उनकी कथा हम कहते हैं। परम तेजस्वी, कीर्त्तिको बढ़ाने वाले और ब्राह्मणोंके भक्त कार्त्तिकेय ऋषियोंकी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। पहले समयमें जब देवता और राक्षसोंका युद्ध हुआ था, तब घोर रूप दानवोंने देवतोंको जीत लिया। जब इन्द्रने अपनी समस्त सेनाको दानवोंसे मरता हुआ देखा तब सेनापतिके निमित्त बहुत चिन्ता करने लगे। इन्द्र विचारने लगे कि मुझको कोई ऐसा सेनापति मिलना चाहिये जो महापराक्रमी हो और जो देवतोंकी सेनाकी भागते देख अपने बलसे उसकी रक्षा कर सके। ऐसा विचार, इन्द्र मानस नामक पर्व्वतपर गए; वहां जाकर बहुत चिन्तासे इस प्रयोजनको विचारने लगे; उसी समय इन्द्रने एक रोती हुई स्त्रीका दीन शब्द सुना। वह कहती थी कि कोई पुरुष मेरी और आवे, मेरी रक्षा करे, मेरे निमित्त कोई पति बतावे या वह स्वयमही मेरा पति हो। इन्द्रने उससे कहा कि तू कुछ मत डर; तुझे कोई भय नहीं है। अनन्तर इन्द्रने किरीट धारण किये, गदा हाथमें लिये, एक कन्याके सहित आगे खड़े हुए केशीको देखा। तब इन्द्रने केशीसे कहा, हे दुष्ट! तू इस कन्याको क्यों दुःख दे रहा है, तू मुझे वज्रधारी इन्द्र जानकर इसे छोड़ दे।

केशी बोला, हे पाकशासन! हे इन्द्र! तुम इस कन्याको छोड़ दो, क्योंकि मैं इससे विवाह करना चाहता हूं; यदि तुम अपने जीवकी रक्षा करना चाहते हो तो इसको छोड़कर अपने नगरको भाग जाओ। ऐसा कह केशीने मारनेको गदा चलाई। इन्द्रने उस गदाको आते देख वज्रसे काट दिया। अनन्तर केशीने क्रोध करके इन्द्रके मारनेको एक पर्व्वतका शिखर चलाया। इन्द्रने उसे भी अपने वज्रसे काट दिया। हे राजन्! जब वह पर्व्वतका शिखर कटकर पृथ्वीपर गिरा तब वही केशीके सिरमें लगा। अनन्तर केशी बहुत पीड़ित होकर उस कन्याको छोड़ वहांसे भागा, जब केशी वहांसे भाग गया, तब इन्द्रने उस कन्यासे कहा कि हे सुन्दर रूपवाली! तू कौन है, और किसकी पुत्री है, और यहां क्या कर रही है।

२२२ अध्याय समाप्त।

कन्या बोली, मेरा नाम देवसेना है, और मैं प्रजापतिकी पुत्री हूं; मेरी एक बहिनका नाम दैत्यसेना है, उसको पहिलेही केशीने छीन लिया था; हम दोनो बहिन प्रजापतिकी आज्ञासे सदा सखियोंके सहित इस वनमें खेलनेको आती थीं; यह महा बलवान केशी सदासे हम दोनोंकी इच्छा करता था; मेरी बहिन दैत्यसेनाभी इसकी इच्छा रखती थी, परन्तु मैं नहीं। सो यह दैत्यसेनाको ले गया और मुझको तुमने अपने बलसे बचा लिया। हे भगवन्! हे देवराज! अब मैं तुम्हारी आज्ञानुसार किसी महा बलवानको अपना पति बनाना चाहती हूं।

इन्द्र बोले, तुम मेरी माताकी बहिन हो, क्योंकि मेरी माताभी दक्षप्रजापतिकी पुत्री है; हम अपना बल तुमको सुनाना चाहते हैं। कन्या बोली, हे महाबाहो! मैं अबला हूं, और मेरे पिताके वरदानसे मेरा पति महा बलवान होगा; उसको सब देवता और राक्षस नमस्कार करेंगे। इन्द्र बोले, हे देवि! तुम्हारे पतिका बल कैसा होगा सो हमसे कहो। कन्या बोली, हे इन्द्र! जो देवता, दानव, यक्ष,

किन्नर, सर्प, राक्षस, और दुष्ट दैत्योंको जीतने वाला और महा बलवान महा वीर्य्यवान होगा और जो तुम्हारे सहित सब प्राणियोंको जीतेगा वही ब्राह्मणोंका भक्त और कीर्त्तिका बढ़ाने वाला मेरा पति होगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उस कन्याके ऐसे वचन सुन, इन्द्र बहुत विचार करने लगे कि यह कन्या जैसे पतिका विचार कर रही है, वैसा कोई नहीं है। उसी समय सूर्य्यके समान तेजस्वी इन्द्रने उदय होते हुए सूर्य्यको और सूर्य्यमें प्रवेश होते हुए महाभाग चन्द्रमाको देखा उस समय अमावस्या और रौद्र मुहूर्त्त था; उसी समय इन्द्रने उदयाचल पर देवता और दानवोंको युद्ध करते देखा। इन्द्रने बड़े बड़े लाल मेघोंसे भरी हुई प्रातःकालको संध्याको देखा। अनन्तर भगवान इन्द्रने समुद्रको भी लाल जलसे भरा हुआ देखा, इन्द्रने देखा कि भृगु और अङ्गिराओंसे अनेक प्रकारके मन्त्रों सहित दी हुई आहुति को ग्रहण करके अग्नि सूर्य्यमें प्रवेश कर रहे हैं। उसी समय २४ पर्व्व भी सूर्य्यको ग्रहण करने लगे; उसी समय रौद्र, धर्म्म, सूर्य्य और चन्द्रमा एक हो गये। चन्द्रमा और सूर्य्यको एक देख इन्द्र बहुत विचार करने लगे, कि इस रौद्र समयमें चन्द्रमा और सूर्य्य मिले हुए दीखते हैं; इससे जान पड़ता है कि इसी रात्रिके अन्तमें घोर युद्ध होगा। इन नदी और समुद्रोंमें लाल जल बह रहा है, ये सियारी अपने मुखसे अग्निको निकालती हुई और घोर शब्द करती हुई सूर्य्यकी ओर देख रही हैं। यह सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निका मिलना बहुत अद्भुत और भयानक है; जो चन्द्रमा अग्निका पुत्र होगा सोई इस कन्याका पति होगा। इन्द्र ऐसा विचार कर ब्रह्मलोकको गए और उस कन्याको अगाड़ी करके ब्रह्मासे कहने लगे, कि कोई बड़ा शूरवीर पुरुष इस कन्याका पति होने योग्य बताइये। ब्रह्मा बोले, हे दानवनाशन! मैंने इस कार्य्यको पहलेही विचारा था, एक महा बलवान बालक उत्पन्न होनेवाला है, वही तुम्हारा सेनापति होगा। हे शतक्रतो! वही बलवान बालक इस कन्याका पति होगा। ऐसा सुन इन्द्रने और उस कन्याने ब्रह्माको प्रणाम किया। अनन्तर इन्द्र देवऋषियोंके पास गये। वहां वशिष्ठ आदि ब्राह्मण लोग ब्रह्माकी तपस्या करके यज्ञमें सोम पीनेकी इच्छासे इन्द्रादि देवतोंके सहित यज्ञ करने लगे। जब अग्नि प्रज्वलित हुई तब वे लोग आहुति देने लगे। सब महात्मा ऋषि लोग विधिके अनुसार अग्निमें हवन करनेलगे। अनन्तर देवतोंने अद्भुत अग्निको सूर्य्यमण्डलसे बुलाया। भगवान अग्नि ब्राह्मणोंकी वाणीके वशमें होकर उस यज्ञ स्थानमें प्रकट हुए। तब सब ब्राह्मणोंने मन्त्रोंको पढ़कर आहुति दी, भगवान अग्निनेभी उस आहुतिको ग्रहण करके सब ऋषि और देवता लोगोंको भाग दिया। यज्ञ समाप्त होनेके समय अपने लोकको जाते हुए, अग्निने महात्मा ऋषियोंकी स्त्रियोंको अपने आसन पर बैठी और सुखसे सोती हुई देखा। सोनेके समान रंगवाली, चन्द्रमाकी कलाके समान निर्म्मल अग्निकी ज्वाला और तारोंके समान सुन्दर ऋषियोंकी उन स्त्रियोंको देख कर अग्नि कामके वशमें हो गए; उनकी इन्द्री वशमें न रहीं। फिर अग्निने विचारा कि यह कर्म्म हमारा अन्यायका है, यें ब्राह्मणोंकी स्त्रियां पतिव्रता और कामरहित हैं; मैं किस प्रकारसे इनसे कामचेष्टा करूं; बिना किसी कारणके मैं इनको देख और छू नहीं सकता हूं, इस लिये इनके घरकी अग्निमें प्रवेश करके इनको देखूंगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसा विचार अग्निने उनके घरकी अग्निमें प्रवेश किया और वहांसे अपनी ज्वालाओंसे उन स्वर्णके समान रंगवाली

स्त्रियोंको छूने लगे और उनके रूपको देखकर प्रसन्न होने लगे; इस प्रकार वहां बहुत दिन रहनेसे अग्नि उन स्त्रियोंके वशमें हो गये और उनमें अपने चित्तको लगा दिया; जब अग्निका हृदय कामसे जलने लगा, तब उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब हम शरीर छोड़ देंगे, परन्तु जब ब्राह्मणोंकी स्त्रियां उनको न मिलीं, तब वे बनको चले गए।

स्वाहा नामक दक्षकी पुत्रीने पहले अग्निको अपना पति बनाना चाहा था। और वह बहुत दिनसे अग्निके दोषोंको ढूंढ़ रही थी। परन्तु अग्निदेव सदा सावधान रहते थे, इससे निन्दा रहित स्वाहाको कोई दोष न मिला। जब उसने इन सब बातोंको जान लिया कि अब अग्निदेव कामके वशमें होकर बनको गए हैं, तब उसने विचारा कि अब अग्नि कामके वशमें हुए हैं; सो मैं सातों ऋषियोंकी स्त्रियोंका रूप बना कर उनके पास जाऊं; मुझे जब वे कामके वशमें देखेंगे तब अवश्यही रूप और कामसे मोहित होजायगे ऐसा करनेसे अग्निकी प्रीति और मेरा कार्य्य सिद्धि होगा।

२२३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ युधिष्ठिर! अङ्गिरा ऋषिकी स्त्रीका नाम शिवा था। वह रूप, शील और गुणोंसे भरी थी। स्वाहा पहले उसीका रूप बना कर बनमें अग्निके पास गई और जाकर कहने लगी कि हे अग्नि! मैं कामसे बहुत व्याकुल हूं, तुम मेरे सङ्ग मैथुन करो, यदि ऐसा नहीं करोगे तो मैं मर जाऊंगी; हे हुताशन! मैं अङ्गिरा ऋषिकी स्त्री हूं, मेरा नाम शिवा है, सब ऋषियोंकी स्त्रियोंने सम्मति करके मुझे तुम्हारे पास भेजा है।

अग्नि बोले, तुमने और सब सप्त ऋषियोंकी प्यारी स्त्रियोंने कैसे जाना कि मैं कामके वशमें हूं।

शिवा बोली, तुम सदासे हमारे प्यारे हो, हम सब तुमसे बहुत डरती हैं, तुम्हारे चिन्होंसे हम लोगोंने पहिचान लिया, तब सब ऋषिपत्नियोंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है, हमको इस समय कामदेव बहुत पीड़ा देरहा है; तुम शीघ्र हमारे सङ्ग मैथुन करो, क्योंकि और ऋषियोंकी स्त्री हमारा मार्ग देख रही होंगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अनन्तर अग्निने प्रसन्न होकर स्वाहाके सङ्ग मैथुन किया। स्वाहा देवीने भी प्रसन्न होकर अग्निका सङ्ग किया। अनन्तर उनके वीर्य्यको अपने हाथमें ले लिया और विचारने लगीं कि बनमें जो कोई मुझे देखेगा वह ब्राह्मणी और अग्निको दोषी जानेगा, इस लिये गरुड़ीका रूप बनाना चाहिये, ऐसा करनेसे सुखपूर्व्वक बनसे चली जाऊंगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसे विचार, स्वाहादेवी गरुड़ीका रूप बनाकर उस महा बनसे चली। अनन्तर पर्व्वत पर शरोंके बनको देखा, जो विष भरे हुए सात सिर वाले अद्भुत सर्प, राक्षस, पिशाच, घोर भूत, राक्षसी, बनजन्तु और अनेक प्रकारके पक्षियोंसे भरा हुआ था। उस घोर पर्व्वतके ऊपर जाकर स्वाहा देवीने उस वीर्य्यको एक सोनेके कुण्डमें छोड़ दिया। इस प्रकार स्वाहा देवीने सातों ऋषियोंकी स्त्रियोंका रूप बनाकर अग्निसे मैथुन किया; परन्तु वशिष्ठकी स्त्री अरुन्धतीका दिव्य रूप न बना सकी, क्योंकि अरुन्धती बड़ी तपस्विनी और पतिव्रता थी। हे कुरुसत्तम! इस प्रकार स्वाहा देवीने छः बार प्रतिपदाके दिन अग्निके वीर्य्यको उसी सोनेके कुण्डमें डाला; उस कुण्डसे कुछ दिनके पश्चात एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसी समय सब ऋषियोंने इसकी पूजा करी और उसका नाम स्कन्द रक्खा। उस बालकके छः मुख, १२ हाथ, १२ कान, १२ नेत्र थे; परन्तु गला और हृदय एकही था। वह

बालक द्वितीयाको पिण्ड रूप रहा तृतीयाको बालक रूप हो गया, और चौथको उसके सब अङ्ग अलग अलग हो गये। उस समय बिजलीके सहित लाल मेघ आकाशमें दीखने लगे। उन लाल मेघोंमें वह बालक ऐसा दीखने लगा जैसे प्रातःकालका लाल सूर्य्य उदय होता है। उसने उत्पन्न होतेही उस धनुषको ग्रहण किया जिसके देखनेसे प्रायः सब लोगोंके रोंवें खड़े हो जाते थे। यह वही धनुष था जिसको त्रिपुरासुरके नाश करनेके समय शिवने चढ़ाया था; उस धनुषको चढ़ाकर बलवान कार्त्तिकेय बहुत गरजने लगे उस शब्दसे समस्त चर और अचरके सहित तीनो लोक मूर्च्छित होने लगे। उस महा मेघके समान शब्दको सुनकर महानाग चित्र और ऐरावत दौड़े; सूर्य्यके समान तेजस्वी बालकने उनको आते देख एक एक हाथसे पकड़ लिया एक हाथसे शक्ति और एक हाथसे बड़े शरीरवाले महा बलवान कुक्कुटको पकड़कर खेलने लगे, और घोर शब्द करने लगे। अनन्तर दो हाथमें उत्तम शङ्ख लेकर बजाने लगे। उस शब्दको सुनकर सब बलवान जन्तु डरने लगे, कार्त्तिकेय अपने दो हाथोंको बारबार आकाशकी ओर चलाने लगे। उस समय खेलते स्वामकार्त्तिककी ऐसी शोभा बढ़ी कि मानो तीनो लोकको वह खा जायगे। महा बलवान स्वामकार्त्तिक उस पर्व्वतपर ऐसे शोभायमान हुए जैसे उदयाचल पर सूर्य्य। विचित्र पराक्रमी स्वामकार्त्तिक उस पर्व्वत पर बैठकर सब दिशाओंको देखने लगे और अनेक प्रकारकी वस्तुओंको देखकर पुनः गर्जने लगे। उस शब्दको सुनकर समस्त प्राणी लोग डरकर भागने लगे। फिर घबराकर सब उन्हीकी शरण गए। जो बलवान जन्तु उनकी शरण गए उन्होंको ब्राह्मणोंने उनका पार्षद कहा है; महाबाहु स्वामकार्त्तिक उन सब जीवोंको शान्त करके वहांसे उठे और धनुष चढ़ाकर उस पर्व्वतकी ओर बाण चलाने लगे। उन्होंने अपने बाणोंसे हिमाचलके पुत्र क्रौंच पर्व्वतको विदीर्ण कर दिया। उसी समय वहांसे हंस और गिद्ध उड़कर मेरु पर्व्वतपर चले गये, उनके बाणोंसे वह पर्व्वत दीन शब्द करता हुआ पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसके गिरनेसे, और पर्व्वतों परभी घोर शब्द होने लगा। बलवानोमें श्रेष्ठ स्वामकार्त्तिक उस घोर शब्दको सुनकरभी कुछ न डरे और शक्तिको लेकर गर्जने लगे। जब उन्होंने उस निर्म्मल शक्तिको उस श्वेत पर्व्वतकी ओर चलाया तो उसके लगनेसे उसका शिखर कटकर गिर पड़ा। महात्मा स्वामकार्त्तिकके बाण और शक्ति लगनेसे वह पर्व्वत डरकर पृथ्वी छोड़ आकाशको उड़ने लगा। अनन्तर पृथ्वीभी कटकर चारों ओर गिरने लगी। उसके पश्चात पृथ्वीभी बहुत दुःख पाने लगी; फिर दीन होकर स्वामकार्त्तिकके पास आई और शरण पाकर पुनः बलवान हो गई। अनन्तर सब पर्व्वतोंने उनको प्रणाम किया और पृथ्वीपर बैठ गए। अनन्तर शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको सब लोगोंने स्वामकार्त्तिकको देखा

२२४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जब महाबलवान, स्वाहासे स्वामकार्त्तिक उत्पन्न हुए, तब पृथ्वीमें अनेक प्रकारके घोर उत्पात उठने लगे। स्त्री और पुरुषोंमें परस्पर बैर होने लगा। शीत और उष्णका कुछ प्रमाण न रहा। आकाश, दिशा और सब पृथ्वी प्रकाशित हो गई। महा ऋषि लोगोंने जब इन घोर उत्पातोंको देखा तो घबड़ाकर लोकोंकी शान्तिके निमित्त शान्ति शान्त कहने लगे। जो ऋषि लोग उस चत्ररथ बनमें रहते थे, वे सब कहने लगे, कि अग्निने यह हमारे वास्ते परम अनर्थ किया है। वे लोग कहने लगे

कि अग्निने छः ऋषियोंकी स्त्रियोंसे इस बालकको उत्पन्न किया है ; कोई कहने लगे कि वह तो गरुड़ी थी। जिन पुरुषोंने उस स्वाहा देवीके रूपको देखा था, वे लोग कहने लगे कि यह कर्म्म स्वाहा देवीका ही है। जब उस गरुड़ीने ये सब वचन सुने तब स्वामकार्त्तिकके पास जाकर कहने लगी कि मैंही तेरी माता हूं। जब सप्त ऋषियोंने सुना कि इस प्रकार हमारी स्त्रियोंके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ तब अपनी अपनी स्त्रियोंको सबने छोड़ दिया परन्तु भगवान वशिष्ठने अरुन्धती देवीको नहीं छोड़ा। जब सब वनवासी कहने लगे कि सप्त ऋषियोंकी स्त्रियोंसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ है, तब स्वाहा देवीने जाकर कहा कि यह पुत्र हमारा है। परन्तु इस बात पर किसी ऋषिकी विश्वास न हुआ। इन सब वृत्तान्तको विश्वामित्र मुनि भली भांति जानते थे, क्योंकि उन्होंने उस सप्त ऋषितोंको यज्ञमें अग्निको कामवश हुआ देखा था और अग्निके पीछे गुप्त रूपसे वनकोभी गए थे, और वहीं स्वाहादेवीका सब चरित्रभी देखा था। तब उन्होंने सब वृत्तान्त सप्त ऋषियोंसे कह सुनाया, अनन्तर विश्वामित्रही पहले स्वामकार्त्तिकको शरण गए, और एक दिव्य स्तोत्रभी बनाया। विश्वामित्र महा मुनिने स्वामकार्त्तिकको १३ जात कर्म्म और मङ्गल कर्म्मभी किये। विश्वामित्र मुनिने स्वामकार्त्तिकका महात्मा कुक्कुट और देवीका साधनभी वहीं किया ; और पार्षदोंका पूजनभी किया। विश्वामित्र मुनिने यह सब कर्म्म लोकके हितके निमित्त किया। इस लिये विश्वामित्र मुनि स्वामकार्त्तिकके बड़े प्रिय हुए। अनन्तर विश्वामित्र मुनिने स्वाहाका सब रूप जानकर सप्त ऋषियोंसे कहा कि तुम्हारी काई स्त्रियोंका दोष नहीं है, उन्होंने विश्वामित्रके वचन सुन अपनी अपनी स्त्रीकी ले लिया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब देवतोंने सुना कि स्वामार्त्तिक उत्पन्न हुए, तब सब इन्द्रके पास जाकर कहने लगे, कि हे शक्र! कार्त्तिकेय बहुत बलवान हैं, इस लिये इनको शीघ्रही जीत लीजिये, बिलम्ब न कीजिये, यदि आप इन्हें न मारेंगे तो यही इन्द्र हो जायगा। हे महा-बल! यह हमारे सहित तीनों लोकोंको जीत लेगा। इद्र बोले, हे देवतो! यह बालक बहुत बलवान है ; हम और लोकोंके कर्त्ता ब्रह्माभी इसको युद्धमें नहीं मार सकते हैं। हम इस बालकके बलकोभी नहीं सह सकते। देवता लोग कहने लगे, हे इन्द्र! क्या तुममें इतना बल नहीं है, जो इस लड़केको जीत सको? इस लिये अब जितनी लोक माता हैं, सब स्वामकार्तिकके पास जायं और उसके बलको नाश करें। सब लोक माता उनके वचनको ग्रहण करके कार्तिकेयके पास गईं परन्तु उनका अनन्त बल देखकर सब दुःखित हो गईं और उनका जीतनेमें असमर्थ समझकर उन्हीके शरण गईं और उनसे कहने लगीं कि हे महा-बल! तुम हमारे पुत्रहो जाओ। तुम सब लोकोंको प्रसन्न करो, हम सब तुम्हारे प्रेमसे विकल हैं ; तुम हमारा दूध पिओ। उनके वचन सुन भगवान स्वामकार्त्तिकने उनका दूध पीनेकी इच्छा करी। अनन्तर उनका दूध पीकर उनकी बहुत प्रशंसा करी। उसी समय अपने पिता अग्निको आते हुए देखा, तब अग्निने स्वामकार्त्तिककी बड़ी प्रशंसा करी और लोक माताओंके सहित उनके चारों ओर रक्षा करनेको बैठ गए। लोक माताओंके क्रोधसे जो स्त्री उत्पन्न हुई थीं वह हाथमें त्रिशूल लेकर स्वामकार्त्तिककी पुत्रके समान रक्षा करने लगीं। जो लाल समुद्रकी कन्या थी वहभी स्वाम कार्त्तिककी पुत्रके समान रक्षा करने लगी। यह कन्या बड़ी कठिन स्वाभाव वाली और रक्त पीनेवाली थी और नैगमेय नामक

अग्नि बकरेका मुह बनाकर उस बालककी खेलौनेके समान खेलाने लगी।

१२५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ग्रह, उपग्रह, ऋषि लोकमाता और अग्नि आदिक देवता तथा पार्षद लोग बहुत प्रसन्न हुए। इनको आदि लेकर औरभी सब देवता लोग और लोकमाता कार्त्तिकेयके चारों ओर बैठ गए। जब देवराज इन्द्रने अपने विजयमें सन्देह देखा। तब ऐरावत पर चढ़ सब देवतोंको सङ्ग ले और वज्र धारण करके कार्त्तिकेयके मारनेको इच्छासे शीघ्र चलने लगे। जब कार्त्तिकेयने महाउग्र, महातेजस्वी, महानाद करनेवाली विचित्र ध्वजा, कवच, और धनुषधारिणी सेनाको देखा, तो उसको मारनेको चले। हे युधिष्ठिर! जब महाबलवान इन्द्रने कार्त्तिकेयको आते देखा, तब उनके मारनेकी इच्छासे, और देवतोंको प्रसन्न करनेको इच्छासे गर्जने लगे। इन्द्रका शब्द सुनकर सब ऋषि और देवता लोग उनको पूजा करने लगे। इस प्रकार इन्द्र कार्त्तिकेयके पास पहुंचे, वहां पहुंचकर भी इन्द्रने देवतोंके सहित सिंहके समान शब्द किया। उस शब्दको सुनकर कार्त्तिकेयभी समुद्रके समान गर्जने लगे। उनके शब्दको सुनकर समुद्रके समान देवतोंकी सेना घबड़ा गई, और चेतनारहित होकर इधर उधर घूमने लगी। जब अग्निके पुत्र कार्त्तिकेयने देखा कि देवता लोग हमें मारनेको आए हैं, तब उन्होंने बड़ी कठिन घोर अग्निकी ज्वाला उनकी ओरको छोड़ो; उससे सब देवतोंकी सेना जलने लगी और कांप कांप कर पृथ्वी पर गिरने लगी किसीका सिर; किसीका शरीर, किसीका वाहन, किसीका शस्त्र जलने लगा। उस समय जलते हुए देवतोंकी ऐसी शोभा भई जैसे गिरते हुए तारोंकी शोभा होती है; अनन्तर जलते हुए देवता कार्त्तिकेयकी शरण गए। जब सब देवतोंने इन्द्रको छोड़ दिया तो युद्धकी शान्ति हो गई। इन्द्रने कार्त्तिकेयको वज्र मारा; वह वज्र कार्त्तिकेयके दहने कन्धेमें लगा। तब महात्मा कार्त्तिकेयके कन्धेसे एक नवीन पुरुष उत्पन्न हुआ। वह युवा सोनेका कवच पहने शक्ति और दिव्य कुण्डल धारण किये था। जो पुरुष वज्रके लगनेसे उत्पन्न हुआ था उसका नाम विशाख हुआ। जब इन्द्रने अग्निके समान दूसरे पुरुषको देखा, तो हाथ जोड़कर कार्त्तिकेयकी शरण गए। तब कार्त्तिकेयने सेनाके सहित उन्हें अभय दान दिया। तब सब देवतालोगोंने प्रसन्न होकर कार्त्तिकेयको प्रणाम किया।

२२६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अब कार्त्तिकेयके पार्षदोंके नाम सुनिये। ये सब विचित्र रूपवाले हैं, इनका जन्म वज्र लगनेके समय कार्त्तिकेयके शरीरसे हुआ था, यही बड़े कठोर पार्षद लोग बालकोंको और गर्भोंको नष्ट कर देते हैं। उसी समय वज्र लगनेसे कार्त्तिकेयके शरीरसे महा बलवान कन्याभी उत्पन्न हुई थीं। उन कुमारोंने विशाखको अपना पिता माना। अनन्तर वे भगवान छागमुख होकर कार्त्तिकेयकी रणमें रक्षा करने लगे। पश्चात वह सब कन्या, अपने पुत्र, और मातृगणोंके सहित आनन्द करने लगीं। उसी दिनसे संसारके पुरुषोंने महाबलवान कार्त्तिकेयको सब बालकोंका पिता मान लिया है, उसी दिनसे पुत्रोंकी इच्छा रखनेवाले और पुत्रवाले पुरुष कार्त्तिकेयकी पूजा करने लगे। जो आगसे कन्या उत्पन्न हुई थीं, वे सब कार्त्तिकेयके पास आकर कहने लगीं कि हम लोग क्या करें। कुमारी बोलीं,

हे कार्त्तिकेय! हमलोग बहुत उत्तम हैं; इससे सब जगतकी माता होना चाहती हैं, तुम हमारे इस प्रियकार्य्यको सिद्ध करो। कार्त्तिकेय बोले, बहुत अच्छा, तुम लोग सब अलग अलग हो जाओ। उत्तम बुद्धिमान कार्त्तिकेय बार बार कहने लगे कि तुम लोग आधी शिवा और आधी अशिवाके नामसे प्रसिद्ध होओ। तब लोकमाता कार्त्तिकेयको अपना अपना पुत्र मानकर चली गईं।

उनके नाम ये हैं,—काकी, हलिमा, मालिनी, वृंहिलता, आर्य्या, पलाला, और वैमित्रा। यही सात लोक माता कहाती हैं। इनका जो शिशु नामक पुत्र हुआ वह बड़ा भयङ्कर लाल नेत्रवाला और दारुण स्वभाव था। यह पुत्र कार्त्तिकेयके प्रसादसे उत्पन्न हुआ था; यह कार्त्तिकेय और लोकमातासे उत्पन्न हुए आठ वीर हैं। छागसुख अग्निके सहित नौ होते हैं। हे राजन्! कार्त्तिकेयके छः सुखोंमेंसे जो बीचका सुख हैं, वह बकरेका है; लोकमाता सदाही उसकी पूजा करती रहती हैं; यह सुख छःहों सुखोंसे उत्तम है। विशाखने इसीसे दिव्य शक्तिको बनाया था। इस प्रकारसे यह सब वृत्तान्त शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको हुआ और षष्ठीको महाघोर युद्ध हुआ।

२२७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अनन्तर महा तेजस्वी कार्त्तिकेय सोनेकी माला, कवच, और मुकुट धारण करके एक स्थानपर बैठे। उस समय महा तेजस्वी लाल नेत्रवाले, लाल वस्त्र धारी तीक्ष्णदांतवाले, मनोहर, सब लक्षणोंसे युक्त, तीन लोकके प्यारे वरदान देनेवाले शूर, वीर, युवा, धनुषधारी कार्त्तिकेयकी सेवा करनेको साक्षात रूप धारण करके लक्ष्मी आईं। उस समय महा यशस्वी कार्त्तिकेय शोभासे युक्त ऐसे शोभायमान हुए, जैसे पूर्णमासीके चन्द्रमा। उसी समय महात्मा ऋषियोंने कार्त्तिकेयकी पूजा करी और ऐसा कहने लगे।

ऋषि लोग बोले, हे हिरण्यगर्भ! तुम्हारा कल्याण हो; तुम जगतका कल्याण करो; तुमने छःही दिन जन्म लेनेके पश्चात सब लोकोंको वशमें कर लिया; हे देवश्रेष्ठ! तुमने फिर उन सब देवतोंको अभय दान दिया है; इस लिये तुम इन्द्र हो जाओ; तब हम लोगोंको किसीका भी भय नहीं होगा। कार्त्तिकेय बोले, हे ऋषियो! इन्द्र तीन लोकका कौनसा हित करता है, और किस प्रकार देवतोंको रक्षा करता है। ऋषि लोग बोले, इन्द्र सब प्रजामें तेज और बलको स्थापन करता है, जब प्रसन्न होता है, तब सब कामोंको सिद्ध करता है; दुष्टोंका नाश और साधुओंका पालन करता है; वही बलनाशक इन्द्र सब प्रजाका शासन करता है; सूर्य्यके अभावमें सूर्य्य, चन्द्रमाके अभावमें चन्द्रमा, अग्निके अभावमें अग्नि, वायु, पृथ्वी, जलके अभावमें उन्हीका रूप धारण कर लेता है; यही सब इन्द्रके कार्य्य हैं; इन्द्रही सबसे अधिक बलवान है, तुम सब बलवानोंमें श्रेष्ठ हो; इस लिये तुमही हमारे इन्द्र हो जाओ। इन्द्र बोले, हे महाबाहो! हे सत्तम! तुम हम लोगोंको सुख देनेवाले हो इस लिये तुमही इन्द्रासनपर अपना अभिषेक करो। कार्त्तिकेय बोले, हे शक्र! हमको इन्द्र होनेकी इच्छा नहीं है; तुमही तीनो लोकोंका राज्य करो हम तुम्हारे दास हैं; तुम सदा विजयकी इच्छा रखो। इन्द्र बोले, हे वीर! हे तात! हे महाबल! तुम्हारा बल विचित्र है; तुह देवतोंके शत्रुओंको जीतो क्योंकि तुम्हारा अधिक बल देखकर लोक हमारा निरादर करने लगे, जब हम निर्बल होकर इन्द्रासनपर बैठेंगे तो सब लोक सावधान होकर हमारे और तुम्हारे

भेदका यत्न करेंगे; जब हममें तुममें भेद हो जायगा तब सब लोक दो दल हो जायगा; उस समयमें हमारा तुम्हारा अवश्यही युद्ध होगा; उस युद्धमें तुम हमको अवश्य जीतोगे इस लिये तुम अभीसे इन्द्र हो जाओ; इसमें विलम्ब मत करो। कार्त्तिकेय बोले, हे इन्द्र! तुम्हारा कल्याण हो; तुमही हमारे और तीन लोकके राजा हो; हम तुम्हारे दास हैं; कहो कौन सी आज्ञा पालन करें; इन्द्र बोले हे महाबल! हे स्कन्द! यदि तुम सत्य सत्य यह बात निश्चय करके कहते हो, तो हम तुम्हारी आज्ञासे इन्द्र होंगे और यदि तुम हमारी आज्ञा पालन करना चाहते हो,तो सुनो; हमारी यही इच्छा है कि तुम देवतोंके सेनापति बनो। कार्त्तिकेय बोले, हे इन्द्र! दानवोंके नाश, देवतोंकी कार्य्यसिद्धि, तथा गौ और ब्राह्मणोंके हितार्थ हमको देवतोंका सेनापति बनाओ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उसी समय सब देवतोंके सहित इन्द्रने स्वामकार्त्तिकको सेनापति किया उस समय ऋषियोंसे पूजित कार्त्तिकेय अत्यन्त शोभायमान हुए, वह सोनेका छत्र उनके सिरपर लगा हुआ ऐसा विराजमान हुआ जैसे साक्षात अग्निका मण्डल। विश्वकर्म्माकी बनाई हुई सोनेकी माला साक्षात यशस्वी शिवने अपने हाथसे पहिराई। उस समय शिव पार्व्वतीके सहित आए थे उन्होंनेभी कार्त्तिकेयकी पूजा करी। ब्राह्मणोंने शिवका नाम अग्नि लिखा है, इस लिये कार्त्तिकेय शिवहीके पुत्र हुए। शिवने जो वीर्य्य त्याग किया था वही श्वेत पर्व्वत हो गया था; उस पर्व्वतपर कृतिकाने अग्निको इन्द्रीको बनाया था। सब देवतोंने शिवसे कार्त्तिकेयको पूजित देखकर कहा कि अग्निमें प्रवेश करके शिवने इस पुत्रको उत्पन्न किया है; उसी दिनसे सब लोग कार्त्तिकेयको शिवका पुत्र कहने लगे। हे भारत! शिव, अग्नि, स्वाहा देवी, और छः माताओंसे कार्त्तिकेयका जन्म हुआ है। ये कार्त्तिकेय सब देवतोंमें श्रेष्ठ और शिवके पुत्र हुए। निर्म्मल लाल वस्त्र धारण किये अग्निनन्दन कार्त्तिकेय ऐसे शोभायमान हुए जैसे लाल मेघोंके बीचमें सूर्य्य। उसी समय अग्निने एक कुक्कुट दिया और एक लाल ध्वजा दी। वह ध्वजा रथपर लगकर ऐसी शोभायमान हुई, जैसी फैली हुई प्रलय कालकी अग्नि। जो सब प्राणियोंकी चेष्टा और शान्ति है, वही शक्ति अपना रूप धारण करके कार्त्तिकेयके आगे आई, वही शक्ति उनके संग उत्पन्न हुए कवचमें प्रवेशकर गई और वही शक्ति युद्धके समय सदा प्रगट हो जाती है। हे नरनाथ। शक्ति, धर्म्म, बल, तेज, शोभा, सत्य, बढ़ती, ब्राह्मणता, चेतनता, भक्तोंकी रक्षा, दुष्टोंका नाश करना और लोकोंका पालन करना, ये सब गुण कार्त्तिकेयके जन्महीसे उत्पन्न हुए, थे, हे महाराज! इस प्रकार सब देवतोंने कार्त्तिकेयका अभिषेक किया। उस समय कार्त्तिकेय सब भूषणोंको धारण करके ऐसे शोभायमान हुए जैसे प्रसन्न चन्द्रमाका मण्डल। उस समय देवतोंके बाजे बजने लगे देवता तथा गन्धर्व्व गाने लगे और अप्सरा नाचने लगीं। इनको आदिले औरभी बहुत लोग प्रसन्न हुए। उस समय देवता और पिशाचोंके बीचमें बैठकर अग्निनन्दन कार्त्तिकेय बहुत शोभायमान हुए, और देवता उनको देखने लगे। उस समय कार्त्तिकेयकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी प्रातःकाल उदय होते हुए सूर्य्यकी। अनन्तर इनके पास सहस्रों देवतोंकी सेना आने लगी। वे सब लोग चारों ओरसे कहने लगे कि तुम हमारे स्वामी हो; तब कार्त्तिकेयने उन सबको शान्त किया। उन्होंनेभी कार्त्तिकेयकी शान्ति और पूजा करी। जब इन्द्र कार्त्तिकेयका अभिषेक कर चुके, तब उस देवसेना कन्याका स्मरण किया जिसको उन्होंने राक्षससे छुड़ाया था;

इन्द्रने विचारा कि ब्रह्माने इसीको इस कन्याके लिये पति बनाया था। ऐसा विचारकर इन्द्र उस कन्याको आभूषण पहिराकर कार्तिकेयके पास ले आये ; तब इन्द्र कार्तिकेयसे कहने लगे कि हे देवतोंमें श्रेष्ठ! यह कन्या है, जब तुम उत्पन्न नहीं हुए थे, तबही ब्रह्माने तुम्हारे लिये इसको बनाया था ; इस लिये तुम इसका दहना हाथ विधिके सहित अपने कमलके समान हाथसे ग्रहण करो। इन्द्रके ऐसे वचन सुन कार्त्तिकेयने देवसेनासे विधि पूर्व्वक विवाह किया। उस विवाहमें मन्त्रके जाननेवाले बृहस्पतिने मन्त्र गाये और होम करी, इस प्रकार देवसेना कार्तिकेयकी स्त्री भई। वह विवाह षष्ठी तिथिको हुआ था ; इस लिये इसी तिथिको पहले ब्राह्मण लोग सुख और लक्ष्मीको देनेवाली कहते हैं ; इसीके सिनिवाली, कुहू, सदवृत्ती और अपराजिता नाम हैं। जिस समय देवसेनाने कार्त्तिकेयको अपना पति बनाया, उसी समय लक्ष्मीभी अपना शरीर धारण करके कार्त्तिकेयके पास आई। पञ्चमी तिथिको कार्त्तिकेय लक्ष्मीवान हुए थे, इसीसे उस तिथिका नाम श्रीपञ्चमी है। षष्ठीको कार्तिकेयका विवाह हुआ था, इसीसे षष्ठीको महातिथि कहा है।

२२८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जिस समय कार्त्तिकेय देवतोंके सेनापति हो चुके और परम शोभासे बिराजमान होने लगे उसी समय सप्त ऋषियोंकी स्त्री उनके पास आईं। वे सब धर्म्मकी और व्रतको धारण करनेवाली थीं ; परन्तु ऋषियोंने उनको छोड़ दिया था। वे सब कहने लगीं, हे पुत्र! हम लोगोंको हमारे देव-समान पतियोंने विना कारणही क्रोधवश होकर छोड़ दिया है, इस लिये हम लोग धर्म्मसे नष्ट हो गई हैं ; किसीने हमारे पतियोंसे कह दिया कि तुम हमारेही गर्भसे उत्पन्न हुए हो, इन सब सत्य-बातोंको सुनकर तुम हमारी रक्षा करो, हे प्रभो! तुम्हारी कृपासे हमको अक्षय स्वर्ग होगा, हम सब तुमको अपना पुत्र बनाना चाहती हैं ; यह कार्य्य करके तुम अऋण हो जाओ। कार्त्तिकेय बोले, हे निन्दारहित ब्राह्मणियों! तुम सब हमारी माता हो, हम तुम्हारे पुत्र हैं, और जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो सब सिद्ध होगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कार्त्तिकेयने इन्द्रसे कहा कि, हे इन्द्र! हम तुम्हारा कौन सा कार्य्य सिद्ध करें। इन्द्र बोले, हे कार्त्तिकेय! अभिजित रोहिणीसे छोटी है, परन्तु वह रोहिणीसे बड़ी होना चाहती है, इसी लिये वह तप करनेको बनमें गई है, इसी लिये मैं घबड़ा रहा हूं, क्योंकि अभिजित नक्षत्र आकाशसे नष्ट होगया है, रोहिणी उससे बड़ी होना चाहती है, इसी लिये वह तप करने को वनमें गई है इसी लिये तुम ब्रह्माके यहां जाकर समयका विचार करो। ब्रह्माने पहले धनिष्ठाको आदि गिना है। सबसे पहली रोहिणी थी इस प्रकार यह संख्या स्थित है। इन्द्रके यह वचन सुनकर कृत्तिका आकाशको चली गई। वही कृत्तिका सात सिरके समान दिखाई देती है, उसका देवता अग्नि है। विनताने कार्त्तिकेयसे कहा कि तुम हमारे पिण्ड देनेवाले पुत्र हो, इस लिये मैं सदा तुम्हारे सङ्ग रहना चाहती हूं।

कार्त्तिकेय बोले, तुमने कहा सो ऐसाही होगा, हम तुम्हें प्रणाम करते हैं, तुम हमें पुत्रप्रेमसे पालन करो और पुत्रवधूसे पूजित होकर यहां सुखसे रहो।

मार्कण्डेय मुनि बोले, इसके पश्चात सब लोकमाता कार्त्तिकेयसे कहने लगीं कि हम सब लोकोंकी माता हैं, और सब पण्डित लोग

स्तुति करते हैं हम तुम्हारी माता होना चाहती हैं, तुम हमारी पूजा करो।

कार्त्तिकेय बोले, हे लोकमाता! तुम सब हमारी माता हो और हम तुम सबके पुत्र हैं, जो तुम्हारी इच्छा हो सो मुझसे कहो मैं उसको पूर्ण करूंगा। लोकमाता बोलीं, पहले जो लोकमाता थीं उनके जो स्थान थे सो हमको मिलें और उनको न मिलें; हमारी सब लोक पूजा करें और उनकी न करें। हे देवसिंह! उन्होंने तुम्हारे कारणसे हमारी सन्तानको छीन लिया है सो हमें फिर दो।

कार्त्तिकेय बोले, वह सब सन्तान नष्ट हो गई, अब तुम लोगोंको नहीं मिल सकती हैं, यदि तुम लोगोंकी इच्छा हो तो दूसरी प्रजा तुम्हें दें।

लोकमाता बोलीं, हे कार्त्तिकेय! हम उन लोकमाताओंकी प्रजा भोग करना चाहती हैं, तुमको छोड़कर और जो कुछ उनका हो हमको दे दो। कार्त्तिकेय बोले, हम बहुत कष्टसे यह प्रजा तुमको देते हैं, तुम लोग उनकी रक्षा करना, क्योंकि तुमको सब साधू लोग नमस्कार करते हैं।

लोकमाता बोलीं, हे कार्त्तिकेय! तुम्हारा कल्याण हो, हम प्रजाकी तुम्हारी इच्छानुसार रक्षा करेंगी, तुम्हारे संग बहुत दिन तक रहनेको हमारी इच्छा है।

कार्त्तिकेय बोले, जब तक सन्तान १६ वर्षकी हों, तब तक तुम अलग अलग रूप बनाकर उनकी रक्षा करो, हम तुम लोगोंको शिवकी अव्यय आत्माको देंगे उसके सहित सुखसे पूजा-पाकर यहां बसो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उसी समय कार्त्तिकेयके शरीरसे प्रजाको भोग करनेके लिये एक पुरुष उत्पन्न हुआ, उसका सोनेके समान रंग था; वह होतेही भूखसे व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर गया। उसी समय कार्त्तिकेयकी आज्ञासे वह रुद्र रूपी ग्रह हो गया ब्राह्मणोने उसीको स्कन्दापस्मार कहा है। जो बड़ी कठिन विनता है उसीको शकुनी ग्रह कहते हैं। जो पूतना नामक राक्षसी है वह बड़ा दुःख देने वाली और घोर रूपणी है, उसीको पूतना ग्रह भी कहते हैं, जो भयानक रूपवाली पिशाची है उसे शीत पूतना कहते हैं; वह स्त्रियोंके गर्भसे बालकोंको निकाल लेती है। अदितिका नाम रेवती है; उसका ग्रह रैवत है, वह भी बड़ा घोर है और बालकोंको दुःख देता है, जो दिति नामक दैत्योंकी माता है उसका नाम सुखमण्डिका है वह सदा बालकोंको मांस खाया करती है। हे कुरुनन्दन! जो हमने कार्त्तिकेयके उत्पन्न हुए लड़की और लड़के कहे सो सब भी बालकोंको दुःख देने वाले और महा ग्रह हैं वे सब इन स्त्रियोंके पति और बड़े दुष्ट कर्म्म करनेवाले हैं, यही बालकोंको नाश कर देते हैं। हे राजन्! जो सुरभी नामक गौओंकी माता है उसके ऊपर शकुनी चढ़कर पृथ्वीके बालकोंको खाजाता है। हे नरनाथ! सरमा नामक जो कुत्तोंकी माता है वह भी स्त्रियोंको निकाल लेती है। कुरंगनिलया जो वृक्षोंकी माता है वह बड़ी साधु वरदान देनेवाली और जन्तुओंके ऊपर कृपा करने वाली है। इसी लिये पुत्र चाहने वाले पुरुष कुरंजुवेके वृक्षमें उसे प्रणाम करते हैं। ये अन्य अठारह ग्रह हैं; ये सब मांस और मद्यको अत्यन्त प्रिय मानते हैं, और सात दिन तक सूतिका स्थानमें रहते हैं। कद्रु सूक्ष्म रूप धारण करके गर्भमें घुस जाती है, और स्त्रीके गर्भको खाजाती है तब उसके गर्भसे नाग उत्पन्न होता है। जो गन्धर्वोंकी माता है, सो गर्भको लेकर चली जाती है; इसीसे स्त्रियोंका गर्भ छिप जाता है। जो अप्सराओंकी माता है सो गर्भको ग्रहण करती है। इसीसे स्त्रीका गर्भ नष्ट हो जाता है। जो लाल

समुद्रकी कन्या है जिसने कार्त्तिकेयको दूध पिलाया था, उसका नाम लोहितायनी है; उसकी पूजा कदम्ब वृक्षमें होती है। जैसे पुरुषोंमें शिव हैं; तैसेही स्त्रियोंमें आर्य्या है; वह आर्य्या कार्त्तिकेयकी माता है; उसकी पूजा अलग अलग कार्य्योंमें की जाती है; मैंने यह सब ग्रह कहे। जब तक १६ वर्षका बालक होता है, तब तक ये सब दुःख देते हैं। जो हमने पुरुष और स्त्री ग्रह कहे इन सबको स्कन्द ग्रह जानना चाहिये; इन सबकी पूजा धूप, दीप और स्नानसे करनी चाहिये; इनकी शान्तिके निमित्त कार्त्तिकेयके नामसे बलिदान करना चाहिये। इस प्रकार पूजा पाकर ये सब अच्छा फल देते हैं। हे राजेन्द्र! ये सब लोग पूजा पाकर पुरुषोंका वीर्य्य और आयु बढ़ाते हैं। अब हम शिवको नमस्कार करते हैं और उन ग्रहोंका वर्णन करते हैं जो १६ वर्षके अवस्थाके पीछे बालकोंको दुःख देते हैं।

जो पुरुष सोते अथवा जागते हुए देवतोंको देखता है, और फिर शीघ्रही पागल होजाता है, उस ग्रहका नाम देवग्रह है। जो बैठे या सोये हुए पितरोंको देखता है, और फिर उत्पन्न हो जाता है, उसे पितृग्रहका दोष जानना चाहिये। जो सिद्धोंका अपमान करता है, और जिसे सिद्ध लोग क्रोधित होकर शाप देते हैं, फिर जो पागल हो जाता है, वह सिद्ध ग्रहका दोष है। जो पागल अनेक सुगन्धियोंको सूंघे और अनेक रसोंको खाय उसे राक्षस ग्रह जानना चाहिये। जिसके शरीरमें गन्धर्व्व प्रवेश करता है और वह शीघ्रही पागल हो जाता है, उसे गन्धर्व्व ग्रह जानना चाहिये। जिसके ऊपर प्रेत चढ़ता है, और वह पुरुष पागल हो जाता है, उसपर पैशाच ग्रह जानना चाहिये, जिस पुरुषपर समय बिगड़नेसे यक्ष लोग आते हैं; और वह पागल हो जाता है, उसको यक्ष ग्रहका दोष है। जो पुरुष वात, पित्त, और कफके दोषोंसे पागल हो जाता है, उसकी चिकित्सा शास्त्रानुसार करनी चाहिये। जो पुरुष बिकलतासे, भयसे, और कठोर वस्तुके देखनेसे पागल हो जाता है, उसके चित्तको शान्त करना चाहिये। कोई ग्रह खेलनेकी इच्छा करता है, कोई खानेकी इच्छा करता है, और कोई साधारण इच्छा रखता है; इस प्रकार ग्रहोंकी तीन इच्छा होती हैं। ७० वर्षकी अवस्था तक पुरुषोंको ये सब ग्रह दुःख देते हैं; इसके पीछे ज्वरही ग्रहके समान हो जाता है। जो पुरुष इन्द्रियजित, पवित्र, दाता, सदा आलसरहित, श्रद्धावान और आस्तिक होता है, उसे ग्रह लोग छोड़ देते हैं; हमने यह सब ग्रहोंका विधान कहा। जो पुरुष भगवान शिवके भक्त हैं, उनको ग्रह दुःख नहीं देते।

२२९ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जिस समय कार्त्तिकेयने लोकमाताओंका प्रिय कार्य्य किया, उसी समय स्वाहा देवीने कुमारसे कहा कि तुम हमारे गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्र हो, इस लिये मैं तुम्हारे दुर्लभ प्रेमको चाहती हूं। तब कार्त्तिकेयने उनसे कहा कि तुम हमारे किस प्रकारके प्रेमको चाहती हो? स्वाहादेवी बोलीं, हे महाभुज! मैं दक्षकी प्यारी कन्या हूं मेरा नाम स्वाहा है, मैं बाल्यावस्थाहीसे अग्निको अपना पति बनाना चाहती थी, हे पुत्र! वह मुझको नहीं जानते थे, कि यह मेरी इच्छा करती है, हे पुत्र! मैं सदाही अग्निके सङ्ग बसना चाहती हूं।

कार्त्तिकेय बोले, हे स्वाहे! ब्राह्मण लोग यज्ञोंमें मन्त्रोंके सहित जो हव्य और कव्य देंगे, उसमें स्वाहा शब्द उच्चारण करेंगे। इसी प्रकारसे तू आजसे अग्निके संग बसेगी। हे

सुन्दरी! अच्छे कर्म करनेवाले महात्मा लोग आजसे ऐसाही करेंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! स्वामकार्त्तिकेयके ऐसे वचन सुनकर स्वाहा देवी बहुत सन्तुष्ट हुई और कार्त्तिकेयने उनकी बहुत पूजा करी। उसी दिनसे स्वाहा देवी अपने पति अग्निके सङ्ग रहती हैं। उन्होंनेभी कार्त्तिकेयकी पूजा करी। अनन्तर प्रजापति ब्रह्माने कार्तिकेयसे कहा कि तुम त्रिपुरासुरके नाश करनेवाले अपने पिता महादेवके पास जाओ; महादेवने अग्निका और पार्व्वतीने स्वाहादेवीका रूप धारण करके तुमको उत्पन्न किया है; तुमको युद्धमें कोई नहीं जीत सकता; जो शिवने अपने वीर्य्यको पार्व्वतीकी योनिमें स्थापन किया था, वह इसीसे इस पतिका नाम ईजिक है; जो वीर्य्य शेष रह गया, वह लाल समुद्रमें गिर गया था, इस प्रकार इस वीर्य्यके पांच टुकड़े हो गये थे; इसी लिये अनेक प्रकारके ग्रहभी उत्पन्नहुए हैं, ये जो मांस खानेवाले,हैं; ये सब तुम्हारे पार्षद हों। पिताकेप्यारे कार्त्तिकेयने उनके वचनोंको स्वीकार करके अपने पिता महादेवकी पूजा करी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जो पुरुष धनकी इच्छा रखते हैं; उन्हें उन गणोंकी पूजा आकके फलोंसे करनी चाहिये; जो लोग किसी रोगको शान्त करना चाहते हैं, वे सामान्य पूजा करें। मिञ्जिक और अमिञ्जिक ये दोनो शिवसे उत्पन्न हुए हैं, इस लिये बालकोंके हित चाहनेवाले पुरुषोंको उचित है कि इन दोनोंको सदा प्रणाम करें। सन्तान चाहनेवाले पुरुषोंको उचित है; कि जो मांसभक्षिणी वृक्षवासिनी, वृद्धि नामक देवी हैं, उनको वृक्षोंमें प्रणाम करें। हमने इस प्रकारसे असंख्य पिशाचोंके गण कहे; अब हम घण्टा और पताकाका जन्म कहते हैं; आप सुनिये।

ऐरावतको जो दो घण्टे हैं, उनका नाम वैजयन्त है। वे दोनो बुद्धिमान कार्त्तिकेयको दिये गए थे। उनमेंसे एक विशाखका है. और एक कार्त्तिकेयका है। कार्त्तिकेयके घण्टेका नाम पताक और विशाखके घण्टेका नाम लोहिता है। देवतोंने जो कार्त्तिकेयको खेल दिये थे, उन्हीसे सब देवता और पिशाचोंके सहित कार्त्तिकेय खेलने लगे। महा तेजस्वी वीर कार्त्तिकेयसे वह उत्तम बनवाला पर्व्वत शोभायमान हो गया। उस समय उस पर्व्वतकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सूर्य्यके निकलनेसे उत्तम गुफावाले मन्दराचलकी। फले हुए, सन्तानक कनेर, पारिजात, गुड़हल, अशोक और कदम्बादि वृक्षोंके बनसे तथा अनेक प्रकारके दिव्य पशु और पक्षियोंसे वह श्वेत पर्व्वत बहुत शोभायमान हुआ, उस पर्व्वत पर मेघ, बाजे और उछलते हुए समुद्रके समान शब्दवाले सब देवता, देवऋषि, दिव्य गन्धर्व्व अप्सरा और लोग नाचने लगे, और प्रसन्न होकर गाने लगे। वह शब्द उस पर्व्वत पर पूरित हो गया। इस प्रकारसे इन्द्रके सहित सब जगत उस श्वेत पर्व्वतपर कार्त्तिकेयको देखने लगा, इससे कभी उन लोगोंको दुःख नहीं होता था।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जिस समय भगवान कार्त्तिकेयका सेनापति पद पर अभिषेक हुआ उसी दिन भगवान शिवभी पार्व्वतीके सहित सूर्य्यके समान तेजस्वी रथपर चढ़ प्रसन्न होकर भद्र बटको चले गए। उनके उस उत्तम रथमें एक सहस्र सिंह जुड़े थे। वह रथ उत्तम समय पाकर स्वच्छ आकाशको उड़ने लगा। उसके चलनेसे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह आकाशको खा जायगा। रथसे समस्त चर और अचर डरने लगे। वे सिंह अपने गलेके बालोंको फलाकर आकाशमें उड़ने लगे। उस समय पार्व्वतीके सहित महादेव उस रथमें बैठे हुए ऐसे शोभित हुए जैसे इन्द्र-धनुषके

सहित मेघोंके बीचमें बिजलीके सहित सूर्य्य। उनके आगे, सब गुह्यकोंके सहित भगवान कुबेर पीछे चले। कुबेर देवता पुष्पक विमानके ऊपर चढ़कर चले। वरदान देनेवाले वृष-वाहन भगवान शिवके पीछे ऐरावतपर चढ़कर सब देवतोंके सहित इन्द्र चले, और उनकी दहनी ओर माला आदि सब आभूषणोंको पहिरकर जृम्भक नामक यक्ष और राक्षसोंको सङ्ग लेकर अमोघ नामक महायक्ष चले। इनके दहनी ओर विचित्र युद्ध करनेवाले अनेक देवता रुद्र और वसु लोग चले! महा घोर रूपधारी यमराज मृत्यु सब रोगोंके सहित शिवको चारों ओरसे घेरकर चले। शिवके पीछे महाघोर तीन धारवाला विजय नामक त्रिशूल चला। उसके पीछे उग्र फांसीको धारण करनेवाले जलके राजा भगवान वरुण जल जन्तुओंके सहित चले। विजय नामक त्रिशूलके पीछे शिवका पट्टिश चला। गदा मूषल और शक्ति आदिक उत्तम शस्त्रोंके सहित पट्टिशके पीछे उत्तम प्रकाशवाला शिवका छत्र चला। उसके पीछे महाऋषियोंसे सेवित कमण्डलु चला। उसके पीछे शोभासे भरा हुआ दण्ड चला, इन सबके पीछे भृगु और अङ्गिरादिक ऋषियोंके सहित विमल रथपर चढ़कर शिव चले। इसके चलतेही इनके तेजसे सब देवता लोग प्रसन्न होने लगे। उनके पीछे ऋषि, देवता गन्धर्व्व, सर्प, नदी, तलाव, समुद्र, अप्सरा, नक्षत्र, ग्रह, देवतोंके बालक और अनेक प्रकारकी स्त्रियां चलीं। वे सब सुन्दरी स्त्रियां शिवके ऊपर फूल बर्षाने लगीं। शिवको नमस्कार करके मेघभी उनके पीछेही चले। शिवके सफेद छत्रको चन्द्रमाने धारण किया, चमरोंको वायु और अग्निने हाथमें लिया। हे राजन्! उनके पीछे राजऋषियोंके सहित स्तुति करते हुए लक्ष्मीसे भरे इन्द्र चले। पार्व्वतीके पीछे गौरी, विद्या, केशिनी गान्धारी और मित्रसा चलीं। उनके पीछे कवियोंकी जितनी विद्या हैं वे सब चलीं। उनके पीछे सब लोकोंके सुख देनेवाले पिङ्गल नामक यक्षराज चले। इस प्रकारसे सुखपूर्व्वक भगवान शिव कैलाशसे चले। शिवके आगे और पीछे किसीकी गति नहीं हुई शिव-को जगतके लोग अच्छे कर्म्मोंसे प्राप्त करते हैं; शिव परम देवता हैं; उनहींका नाम शिव, रुद्र, ईश और पितामह है; जगतके लोग उन्हीं महादेवको अनेक प्रकारसे पूजते हैं। इस प्रकारसे देवतोंके सेनापति कृत्तिकाके पुत्र ब्राह्मणोंके जाननेवाले भगवान कार्त्तिकेयभी देवतोंकी सेनाके सहित शिवके पीछे चले। इसके अनन्तर भगवान शिवने कार्त्तिकेयसे कहा कि तुम सदा आलस्य रहित होकर सातवें वायु स्कन्धकी रक्षा करो।

कार्त्तिकेय बोले, हे नाथ! हम सातवें वायु स्कन्धकी रक्षा करेंगे और जो कुछ हमारे योग्य काम हो सो हमें शीघ्र कहिये।

श्रीशिवजी बोले, हे पुत्र! तुम सदा हमारे कार्य्योंको देखते रहो; ऐसा करनेसे और हमारी भक्ति करनेसे तुम्हारा परम कल्याण होगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कार्त्तिकेयसे ऐसा कहकर और उनको अपने हृदयसे लगाकर शिवने विदा किया। जब कार्त्तिकेय चले गये तो वहां बहुत उत्पात होने लगे। हे महा-राज! उस उत्पातसे सब देवता मोहित हो गए। उसी समय आकाश और सब तारे जलने लगे, और तीनो लोक मूर्खके समान जड़ हो गये। पृथ्वी हिलने लगी और पृथ्वीमेंसे एक घोर शब्द होने लगा। समस्त जगतमें अन्ध-कार हो गया। इस घोर उत्पातको देखकर शिव और महा भाग्यवती पार्व्वती तथा और भी देवता आदिक सब घबड़ा गए। जब इस प्रकार सब लोग मूर्च्छित हो गए, उसी समय एक पर्व्वत और मेघके समान शरीरवाला राक्षस

दिखाई दिया। वह अनेक प्रकारके शस्त्रोंको धारण किये और गर्ज्जता हुआ शिव और देवतोंकी ओर दौड़ा। उसके सङ्ग औरभी अनेक राक्षस थे। वह एक राक्षसोंको सेना थो। वह सब राक्षस लोग देवतोंको सेनापर बाण बरसाने लगे। उसी समय देवतोंको सेनापर पर्व्वत, शतघ्नी, प्रास, खङ्ग और परिघ आदि अनेक शस्त्र वर्षने लगे, उन शस्त्रोंके लगनेसे क्षण भरमें युद्धसे देवतोंकी सेना विमुख हो गई, और भागने लगी। किसीका घोड़ा किसीका हाथी, किसीका रथ, और किसीका शस्त्र कट गया। उस समय दानवोंसे पीड़ित देवतोंको सेनाकी ऐसो शोभा हुई जैसे आगसे जलते हुए बनकी। जैसे जलते हुए बनमें वृक्ष गिरते हैं, तैसेही सिर और हाथके हीन देवता लोग गिरने और भागने लगे। वे लोग युद्धसे पीड़ित होकर भागने लगे, परन्तु उन्हें कोई अपना स्वामी न दीख पड़ा। जब इन्द्रने देवतोंको भागते हुए देखा, तब बलिके मारनेवाले इन्द्र अपने दलको धीरज देकर कहने लगे, हे शूरवीरो! तुम्हारा कल्याण हो, भयको छोड़ दो और शस्त्रोंको धारण करो तुम लोग युद्ध करनेकी इच्छा करो और किसी दुःखको धारण मत करो; इन दुष्ट घोर राक्षसोंको जीत लो तुम लोगोंका कल्याण हो,तुम सब हमारे सहित इन राक्षसोंसे लड़नेको चलो। इन्द्रके वचन सुनकर देवतोंको विश्वास हुआ और इन्द्रको आगे करके दानवोंसे युद्ध करना आरम्भ किया। उस समय सब देवता महाबली मरुत, महाभाग साध्य और वसु लोग दानवोंसे युद्ध करने लगे। क्रोधित देवतोंने जो शस्त्र चलाए सो राक्षसोंके शरीरमें प्रविश करके रुधिर पीने लगे। उनके शरीरोंको छेद करके तीक्ष्ण बाण पृथ्वीपर गिरने लगे। उस समय उनकी ऐसी शोभा दिखाई देती थी जैसे पर्व्वतोंसे सर्प गिरते हैं। उस समय उन मरे हुए राक्षसोंके शरीर बाणोंसे कट कट कर पृथ्वीमें इस प्रकारसे गिरने लगे, जैसे आकाशसे बादल गिरता है। उस समय समस्त दानवोंकी सेना देवतोंके बाणोंसे व्याकुल होकर भागने लगी। तब सब देवता लोग प्रसन्न होकर गर्जने लगे, और अनेक बाजोंको बजाने लगे। इस प्रकार देवता और दानवोंमें घोर युद्ध हुआ। उस समय उस युद्धभूमिमें मांसका कीचड़ हो गया था। देवतोंको दानव और दानवोंको देवता मारने लगे। उसी समय भेरी आदिक अनेक बाजे बजने लगे, और दानव लोग सिंहके समान घोर शब्द करने लगे। उसी समय उस घोर दानवोंकी सेनामेंसे महाबली महिष नामक दानव निकला। वह एक भारी पर्व्वत लेकर देवतोंकी ओर दौड़ा। उसको मेघोंके बीचमें सूर्य्यके समान आते हुए देखकर अनेक देवता लोग उसकी ओर दौड़े। महिषने भी देवतोंकी ओर दौड़ कर उस पर्व्वतको फेंका। हे राजन्! उस पर्व्वतके गिरनेसे दश सहस्र देवता मर गए। उस समय दानवोंके सहित महिषने सबको हराया था। वह फिर देवतोंको ओर ऐसा दौड़ा जैसे छोटे हरिनकी ओर सिंह दौड़े। उसको आते देख इन्द्रादिक देवता डरसे शस्त्रोंको छोड़कर भागे। तब वह महिष क्रोध करके शिवके रथकी ओर दौड़ा और शिवके रथको पकड़ लिया। जिस समय महिषासुर शिवके रथको ओर दौड़ा था उसी समय पृथ्वी और आकाशसे घोर शब्द होने लगा, ऋषि लोग डरने लगे; उस समय मेघके समान शरीरवाले राक्षस लोग गर्ज्जने लगे; उस समय सब जगत चेतनारहित हो गया; उस समय भगवान शिवने महिषासुरको मारना आरम्भ किया; परन्तु उस दुष्टकी मृत्यु कार्त्तिकेयके हाथसे थो, इसलिये शिवने कार्त्तिकेयको स्मरण किया। महिषासुरने भी शिवके रथको देखकर घोर शब्द किया; उससे दैत्य

लोग प्रसन्न हुए और देवता लोग डरे। जब देवतोंके लिये ऐसा भयानक समय उपस्थित हुआ, तब क्रोधसे सूर्य्यके समान प्रकाशमान कार्त्तिकेय आये। वे लाल कपड़े और लाल माला पहिरे थे; उनके घोड़े लाल थे। महाबाहु कार्त्तिकेय सोनेका कवच पहिन कर, सूर्य्यके समान प्रकाशमान सोनेके वर्णवाले रथ पर बैठकर यज्ञमें आए, उनको देखतेही दैत्योंकी सब सेना भागने लगी। उसी समय महा बलवान कार्त्तिकेयने महिषको मारनेवाली प्रकाशमान घोर शक्तिको छोड़ा। उसी समय उस शक्तिने महिषासुरको काटकर पृथ्वीपर गिरा दिया। सिरके कटतेही महिषासुर गिरकर मर गया। उस सिरके गिरनेसे उत्तर कुरुदेशका १६ योजनका द्वार बन्ध हो गया; इसीसे वह देश जाने योग्य नहीं रहा; अबतकभी मनुष्य उस कुरुदेशमें उसी द्वारसे सुखपूर्व्वक जाते हैं। वह शक्ति अनेक दानवोंको मारकर फिर कार्त्तिकेयके हाथमें आगई। फिर बुद्धिमान कार्त्तिकेयने अपने वाणोंसे अनेक दानवोंको मारा फिर कार्त्तिकेयके घोर पार्षदोंने सहस्रों डरे हुए दानवोंको मार खाया। उन्होंने क्षण भरमें सब दानवोंको नाश कर दिया। जैसे अन्धकारको सूर्य्य, वृक्षोंको अग्नि और मेघोंका वायु नष्ट कर देते हैं, तैसेही कार्त्तिकेयने अपने बलसे दानवोंको नाश कर दिया। कार्त्तिकेयने इन सबको मारकर शिवको प्रणाम किया, देवतोंने उनकी स्तुति करी। उस समय कार्त्तिकेयकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे प्रकाशमान सूर्य्यकी। जिस समय शत्रुओंको नाश करके कार्त्तिकेय शिवके पास गए, उसी समय इन्द्रने कार्त्तिकेयको अपने हृदयसे लगाकर कहा, हे कार्त्तिकेय! तुमने महिषासुरको मारा उसको ब्रह्माने वरदान दिया था। हे जीतनेवालोंमें श्रेष्ठ! इसने देवतोंको तिनकेके समान मान रखा था। हे महाबाहु! तुमने इस देवतोंके कांटेको नाश किया, जिन्होंने हमको पहले दुःख दिया था उन सब दैत्योंको तुमने मारा। ये सब महिषके सन्तान थे और तुम्हारे गणोंनेभी सैकड़ों दैत्योंको खाया। तुमको युद्धमें कोई नहीं जीत सकता है तुम भगवान शिवके समान हो। हे देव! तुम्हारा जो यह प्रथम कर्म्म है सो प्रसिद्ध हो जायगा और तुम्हारी अक्षय कीर्त्तिभी तीनो लोकोंमें प्रसिद्ध होगी। हे महाबाहो! सब देवता लोग तुम्हारे वशमें रहेंगे। कार्त्तिकेयको ऐसी स्तुतिकर और भगवान शिवकी आज्ञा लेकर इन्द्र देवतोंके सहित चले गए। भगवान शिवभी भद्रवटको गए। देवता लोगभी अपने अपने घरको चले गए। भगवान शिवने चलते समय देवतोंसे कहा कि तुम कार्त्तिकेयको हमारे समान देखना। कार्त्तिकेयने एकही दिनमें सब दानवोंको मारकर तीनो लोकोंको जीत लिया, तब सब ऋषि लोगोंको पूजा करने लगे। जो ब्राह्मण कार्त्तिकेयके जन्मकी इस कथाको पढ़ते हैं, वे सब इस लोकमें सुख पाकर मरनेके पीछे कार्त्तिकेयके लोकको पाते हैं।

२३० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन! हे द्विजोत्तम! हम महात्मा कार्त्तिकेयके उन नामोंको सुनना चाहते हैं जो तीनो लोकोंमें विख्यात हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुन महातपस्वी मार्कण्डेय कहने लगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, आग्नेय, स्कन्द, दीप्तकीर्त्ति, अनामय, मयूरकेतु, धर्म्मात्मा, भूतेश, महिषनाशन, कामोजतु, कामद, कान्त, सत्यवादी, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, चण्ड, दीप्तवर्ण, सुभावन, अमा, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्त-शक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत, कूटमोहन,

षष्ठीप्रिय, पवित्र, मातृवत्स, कन्याभर्ता, स्वाहा-पुत्र, विभक्त, खेतीसुत, प्रभूनेता, विशाख, नगमेय, दुर्द्धर, सुव्रत, बाल, रणप्रिय, आकाशगामी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवणोद्भव, विश्वा, देवसेनापति, वासुदेवप्रिय और प्रिय कर्त्ता। ये कार्त्तिकेयके दिव्य नाम हैं। इनको जो कोई पढ़ता है, उसको निःसन्देह स्वर्ग, कीर्त्ति और धन मिलता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हम उन कार्त्तिकेयकी इन नामोंसे स्तुति करते हैं जो ब्राह्मण और शक्तिके सहित निवास करते हैं। हे कुरुप्रवोर! जो कार्त्तिकेय छः सुखवाले शक्तिको धारण करते हैं, जो बड़े वीर हैं आप उनकी स्तुति सुनिये।

हे कार्त्तिकेय! तुम ब्राह्मणभक्त विद-विधिसे उत्पन्न हुए, ब्रह्मके जाननेवाले, ब्रह्मा और शिवके भक्त, वेदपाठियोंमें श्रेष्ठ, ब्रह्माके प्यारे, ब्राह्मणोंके समान सत्यव्रत धारी, और ब्राह्मणोंकी मोक्ष देनेवाले हो। तुम स्वाहा, स्वधा, पवित्र, मन्त्रोंसे पूजित, जगत्में विख्यात और छः जिह्वावाले हो। तुम वर्ष, अमृत, छः महीने, पक्ष, मास, अयन, और दिशा हो! तुम कमल-नेत्र, कमल सुख, सहस्र सुख, सहस्र बाहु, लोकपाल, यक्ष तथा राक्षस और देवतोंके स्वामी हो। तुम सेनाके स्वामी, महा तेजस्वी, जगतके स्वामी, जगतके उत्पन्न करने वाले, सहस्रमुख, सहस्र तुष्टि और सहस्र वस्तुओंको खानेवाले हो। हे देव! तुम्हारे सहस्र सिर हैं, तुम अनन्तरूप, सहस्र चरणवाले, और शस्त्रधारी हो। तुम गङ्गा, स्वाहा, पृथ्वी और कृत्तिकाके पुत्र हो। हे छः सुख! तुम कुक्कटके सङ्ग खेलते हो, तुम अपनी इच्छानुसार शरीर धारण करते हो, तुमही शिक्षा हो, तुमही चन्द्रमा, वायु, धर्म्म, पर्व्वत और इन्द्र हो। तुम सनातनोंसेभी सनातन हो, स्वामियोंकेभी स्वामी हो। तुम सत्यकर्त्ता, दैत्य नाशक शत्रुओंके जीतने वाले, और देवतोंमें श्रेष्ठ हो। तुम सूक्ष्म, तप, ब्रह्मके जाननेवाले और ब्रह्म हो। हे महात्मन्! तुम्हारे तेजसे अर्थ धर्म्म और काम पूरित होते हैं। हे लोकनाथ! तुमसे सब जगत व्याप्त है, हमने अपनी शक्तिके अनुसार तुम्हारी स्तुति करी। तुम्हारे बारह नेत्र और बारह हाथ हैं; हम तुमको प्रणाम करते हैं; इससे आगे हम तुम्हारी गतिको नहीं जानते है। जो ब्राह्मण सावधान होकर इस कार्त्तिकेयके स्तोत्रको पढ़े, सुने या सुनावे वह धन, आयु प्रकाशमानयश शत्रुजय, पुत्र, पुष्टि और सन्तोषको प्राप्त होकर अन्तमें कार्त्तिकेयके लोकको जाता है।

२३१ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय समास्या पर्व्व समाप्त।

अब द्रौपदि सत्यभामा पर्व्व लिखते हैं

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जहां महात्मा ब्राह्मण और पाण्डव लोग बैठे थे, वहां द्रौपदी सत्यभामा सङ्ग आईं वे दोनो हंसती हुई सुखसे एक स्थान पर बैठ गईं। हे राजेन्द्र! वे दोनो बहुत दिनोंमें मिली थीं इस लिये परस्पर प्रिय बातें करने लगीं वे दोनो कुरुवंशी और यदुवंशियोंकी उत्तम उत्तम कथा कहने लगीं, अनन्तर कृष्णकी प्यारी पटरानी सत्राजितकी पुत्री सत्यभामा द्रुपदकी पुत्री द्रौपदीसे बोली, हे द्रौपदि! तुम पाण्डवोंके सङ्ग कैसे रहती हो। हे सुन्दरि! ये पांचोंही लोकपालोंके समान हैं और परस्पर बहुतही प्रीति रखते हैं कहो ये पांचो तुम्हारे वशमें कैसे रहते हैं, तुम्हारे ऊपर क्रोध तो नहीं करते? हे सुन्दरी! ये पांचो तुम्हारे वशमें कैसे रहते हैं? ये पांचो सुन्दर हैं इन पांचोको तुम अपने वशमें कैसे रखती हो ये सब हमसे कहो। हे पाञ्चालि! व्रत, तप, स्नान, मन्त्र, औषधि, विद्या, जप, होम, ये सब तुम हमसे

कहो, अथवा और कोई सौभाग्य बढ़नेको ऐसी युक्ति कहो जिससे कृष्णा सदा हमारे वशमें रहें, महा यशस्विनी सत्यभामा ऐसा कहकर चुप हो रही, तब पतिव्रता द्रौपदी बोली, हे सत्य भामे! तुम हमसे दुष्ट स्त्रियोंके समान कर्म्म पंकती हो, जिस मार्गमें असत कर्म्म हैं उसमें कोई उत्तर किस प्रकार दे सकता है? तुमको ऐसे सन्देह और प्रश्न नहीं करने चाहिये, क्योंकि तुम कृष्णाकी प्यारी स्त्री और बुद्धिमती हो। यदि पति इस बातको जान जाय कि हमारी स्त्री मन्त्र करती है तो वह उससे ऐसे घबड़ाने लगता है, जैसे घरमें बैठे हुए सर्पसे। घबड़ाए हुए पुरुषको शान्ति कहां? और शान्ति रहितको सुख कहांसे होगा? इस लिये मन्त्रसे पति स्त्रीके वशमें नहीं हो सकता, शत्रुओंकी दी हुई औषधिभी शरीरको नाश करने वाली और अनेक रोगोंको उत्पन्न करती हैं उनको यदि पुरुष जिह्वा अथवा त्वचासे सेवन करे तो उसमें जो चूर्ण हो उनसे वह पुरुष अवश्य नष्ट हो जाता है, अनेक स्त्रियोंने अपने पतियोंको जलोदरी, कुष्टी, बालवाले, नपुंसक, मूर्ख बहरे और अन्धे कर दिया है, वे स्त्री महा पापिनी हैं पापियोंके सङ्ग ऐसे ऐसे कर्म्म करनेवाली हैं। स्त्रियोंको कदापि अपने पतियोंके सङ्ग ऐसे कर्म्म नहीं करने चाहिये। हे सत्यभामे! हे यशस्विनि! मैं जिस सत्यवृत्तिसे महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग बर्त्ताव करती हूं, उस सबको तुम सुनो।

मैं सदा काम, क्रोध और अहङ्कारको छोड़कर स्त्रियोंके सहित पाण्डवोंकी सेवा करती हूं। मैं अपने पतियोंको सदा विनय पूर्व्वक सेवती हूं और अपने आत्माको सदा अपने वशमें रखती हूं। मैं अभिमानरहित होकर पतियोंके चित्तकी रक्षा करती हूं, मैं अपने पतियोंकी बुरी बात, बुरे स्थान, बुरी दृष्टि बुरी चेष्टा, बुरी गति और बुरे चिन्होंसे डरती रहती हूं। मैं अग्नि, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान महा-तेजस्वी दृष्टि मात्रसे शत्रुको नाश करनेवाले महा वीर्य्यवान प्रतापी पतियोंकी सेवा करती हूं। चाहे देवता हो, मनुष्य हो, चाहे सुन्दर हो या आभूषण धारण किये हो और कैसाही द्रव्यवान क्यों न हो परन्तु मैं दूसरे पुरुषसे प्रेम नहीं करती। मैं अपने पतियोंसे पहले स्नान और भोजन कभी नहीं करती, मैं उनको बिना बिठलाये कभी नहीं बैठती। जब मेरे पति किसीखेत, गांव अथवा बनसे घरमें आते हैं, तब मैं उठकर खड़ी हो जाती हूं, तथा उनको आसन वा जल देती हूं। मैं अपने घरके बरतनोंको धोती हूं, अन्नको निर्म्मल रखती हूं और उनको समयपर सब देती हूं। अपने शरीरको वशमें रखती हूं, अपने अन्नको छिपाकर रखती हूं और अपने घरको बुहारती रहती हूं; मैं वचनसे भी दुष्ट स्त्रियोंके समान अपने पतियोंका निरादर नहीं करती; मैं अपने पतियोंकी सेवामें तनकभी आलस नहीं करती हूं मैं कभी बिना हंसीको बातपर नहीं हंसती हूं; कभी द्वारपर खड़ी नहीं होती; मुझे बागमें रहना अच्छा नहीं लगता; मैं कभी अधिक नहीं हंसती; मैं क्रोधके स्थानमें कभी नहीं जाती; मैं सदा सत्य बोलती हूं और पतियोंकी सेवा करती हूं, मुझे पतियोंसे अलग रहना अच्छा नहीं लगता; जब मेरे पति कभी कुटुम्बके निमित्त कहीं परदेशको जाते हैं, तब मैं अपने मनको स्थिर करके व्रत करती हूं; जिसको पति नहीं खाते और मेरे पति जिन वस्तुवोंको सेवा नहीं करते, मैं भी उन वस्तुओंको छोड़ देती हूं। हे सुन्दरि! मैं उपदेशके अनुसार सब काम करती हूं; मैं सदा आभूषण पहरकर पतिका प्रियकार्य्य करती हूं मेरी सासने जो कुछ कुछ कुटुम्बकेवास्ते धर्म्म कहे थे मैं वही सब करती हूं,

भिक्षा पूजा, श्राद्ध पर्वोंमें भोजन आदिका बनाना, सेवकोंका मान्य और सबका आदर तथा सेवा दिन रात आलस्य रहित होकर करती हूं, मैं अपने चित्तको स्थिर करके सदा विनय और नियमोंकी धारण करती हूं; मेरे पति भले, पण्डित, सत्य, और धर्म्मके पालनेवाले हैं; और वेही क्रोधमें सर्पके समान हैं; मैं सबको सेवा करती हूं। मेरी यह सम्मति है कि सदा पतिके आश्रयसे रहनाही स्त्रियोंका सनातन धर्म्म है; स्त्रियोंकी पतिही देवता हैं, पतिका अप्रिय कार्य्य नहीं करना चाहिये; मैं कभी अपने पतियोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं करती हूं; अत्यन्त दुःख होनेपर भी कभी उनको बुरे शब्द नहीं कहती हूं, अपनी सास और ससुरकी सेवा करती हूं, हे सुन्दरि! मैं सदा सावधान रहती हूं; नित्य उठकर पतियोंकी सेवा करती हूं; और बूढ़ोंकी भी सेवा करती हूं; इसीसे मेरे पति मेरे वशमें रहते हैं; वीरमाता और सत्यवादिनी अपनी सास कुन्तीकी सेवा मैं अपने हाथोंसे करती हूं मैं आपही उनको भोजन और वस्त्र देती हूं; मैं कभी अपनी सासका निरादर नहीं करती हूं; मैं कभी अपनी सासको भोजन और वस्त्र देनेमें विलम्ब नहीं करती हूं, मैं कभी अपनी पृथ्वीके समान सासके नहीं बोलती हूं; हमारे घरमें पहले आठ सहस्र ब्राह्मण नित्य सोनेके पात्रोंमें भोजन करते थे, अठासी हजार गृहस्थ वेदपाठी ब्राह्मण भोजन करते थे; और अस्सी तथा तीस ब्राह्मण और भोजन करते थे; दश सहस्र ब्रह्मचारी और ऊर्द्धरेता यति सोनेके पात्रोंमें पका हुआ अन्न पाते थे, उन सब वेदपाठी ब्राह्मणोंको मैं खान पान और वस्त्रोंसे पूजती थो; महात्मा कुन्ती-नन्दन महाराज युधिष्ठिरकी एक लाख दासी थो वे सब शंखके समान कण्ठवाली, आभूषणधारिणी गलेमें सोनेके आभूषण पहिने और बहुत मूल्यकी माला धारण करनेवाली थीं। वे सब परम सुन्दरी, चन्दन लगानेवाली, मणिजटित स्वर्णके आभूषण पहिने नाचने गानेमें निपुण थीं। उन सबके नाम भोजन वस्त्र और कर्मोंको मैं जानती हूं, बुद्धिमान कुन्तीनन्दनकी और भी एक लाख दासी हैं, जो रात्रि दिन हाथमें पात्र लिये अतिथियोंको भोजन कराया करती हैं। जो एक लाख हाथी महाराज युधिष्ठिरके पीछे चलते थे और जो इन्द्रप्रस्थमें रहते थे, उन सबकी संख्या और नियमोंको मैं जानती हूं और उन सबको अपनी आज्ञामें रखती थो। महाराज युधिष्ठिरके यह सब सामग्री संग रहती थी, मैं रणवासके दासोंके सहित और मन्त्रियोंसे लेकर अपने राज्यके ग्वालों पर्य्यन्त सब दासोंके कार्य्योंको भली भांति जानती हूं; मैं महाराजके राज्यके आय और व्ययको नित्यही देखती थी। हे कल्याणि! हे यशस्विनि! मैं पाण्डवोंके सब कर्म्मोंको जानती हूं। भरतकुलसिंह पाण्डव सब कुटुम्बका भार मेरेही ऊपर छोड़ कर आप केवल उपासना करते थे। हे सुन्दरि! मैं दुष्ट कर्म्मोंको और आयुके नाश करनेवाले कर्म्मोंको कभी नहीं करती हूं। मैं अपने सब सुखोंको छोड़कर रातदिन परिश्रम करती हूं। जो वर्षाके समान सदा भरा रहने वाला रत्न पूरित समुद्रके समान धर्म्म करनेवाले मेरे पतियोंका जो कोष है मैं उस सबको जानती हूं। चाहे रात्रि हो वा दिन हो। मैं सदा ही अपने पतियोंकी सेवा करती हूं। मैं कभी अपने पतियोंको भूखा और प्यासा नहीं रहने देती हूं। पाण्डवोंकी सेवा करनेमें मैं रात्रि और दिनको समान ही समझती हूं; मैं प्रातःकाल उनसे पहले उठती और रात्रिको सबसे पीछे सोती हूं। हे सत्यभामे! मेरा प्रतिदिनका यही काम है मैं इन्हीं सब कार्य्योंसे अपने पतियोंको वशमें रखती हूं और दुष्ट स्त्रियोंके कार्य्योंको कभी नहीं करती हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदी के धर्म्म सहित बचन सुनकर धर्म्मचारिणी सत्यभामा बोलीं, हे पाञ्चालि! हम तुम्हारी शरण हैं; हमने हंसीसे ये सब तुमसे कहा था।

२३२ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, हे सत्यभामे! मैं जो तुमसे मार्ग कहती हूं, इसमें कुछ भ्रम नहीं है; यही पतिके वश करनेका प्रधान कार्य्य है। हे सखि! यदि तुम अपने पतिको दूसरी स्त्रियोंसे छुड़ाना चाहती हो, तो इसी मार्गपर चलो। हे सखि! तीनो लोकोंमें पतिके समान कोई देवता नहीं हैं; इनके प्रसन्न होनेसे सब काम सिद्ध होते हैं; कुपित होनेसे सर्व्वनाश हो जाता है। उसीके प्रसन्न होनेसे अनेक प्रकारके भोग, शय्या उत्तम दर्शन, वस्त्र, माला, गन्ध, स्वर्ग, यह लोक और परम कीर्त्ति प्राप्त होती है। हे सत्यभामे! सुख करनेसे सुख नहीं मिलता; इससे पतिव्रता स्त्री दुःख भोगकर सुखको प्राप्त होती हैं। सो तुम प्रेम, प्रीति और सेवासे कृष्णको प्रसन्न करो। तुम उनको उत्तम उत्तम माला पहनावो और धीरे धीरे उनको प्रसन्न करो; उनके शरीरपर उत्तम उत्तम गन्ध लगावो और औरभी उत्तम उत्तम कर्म्म करो, जिसमें कृष्ण यह जानें कि ये हमारी प्रिया है, वेही सब कर्म्म तुमको करने चाहिये। जब तुम अपने पतिका शब्द द्वारपर सुनो उसी समय अपने द्वारपर खड़ीं हो जावो; जब तुम्हारे पति आसनपर बैठ जायं, तब उनके पैर धोओ। जब तुम्हारे पति किसी कार्य्यको दासीको भेजें, तब तुम उठकर आपही उसे कर लिया करो; ऐसा करनेसे कृष्ण जानेंगे कि सत्यभामा हमारो मनसे सेवा करती है। यदि तुम्हारे पति तुमसे कोई साधारण बातभी कहें तौभी तुम उसको किसी से मत कहना। यदि कोई तुम्हारी सौत कृष्णसे कुछ कहे तो उससे तुम कुछ विरक्त मत होना; तुम उन सबको अनेक प्रकारके भोजन बनाकर खिलाना। जो तुम्हारे पतिके भक्त, प्यारे और मित्र हों उन सबको अच्छा भोजन दिया करो और जो तुम्हारे पतिसे द्वेष करते हों, उनसे अलग रहनेको इच्छा करते हों, कपट करके अलग रहते हों, उन पुरुषोंके सङ्ग कभी थोड़ी भूलसे भो मत होना। बहुत बोलनेको त्याग कर दो। यद्यपि प्रद्युम्न और साम्ब तुम्हारे पुत्र हैं, परन्तु उनके सङ्गभी एकान्तमें मत बैठना; कुलीन, पापरहित और पतिव्रता स्त्रियोंको अपनी सखी बनावो; दुष्ट पराया निरादर करनेवाले, बहुत भोजन करनेवाले, चोरोंको पास मत आने दो; ये जो धर्म्म हमने तुमसे कहा सो यश और सौभाग्यका बढ़ानेवाला है, इससे सब काम सिद्ध होते हैं और शत्रुवोंका नाश होता है। तुम बहुत मूल्यवाले आभूषण पहर कर तथा उत्तम गन्ध और माला धारण करके अपने पतिकी सेवा करो।

२३३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! मार्कण्डेय आदि ऋषि और महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग अनेक उत्तम बातोलाप करके श्रीकृष्ण उनसे विदा हुए। जब रथपर चढ़नेका समय हुआ, तब उन्होंने सत्यभामाको बुलाया। सत्यभामा द्रौपदीसे मिलकर प्रेमके सहित मीठे बचन कहने लगीं, हे कृष्णे! तुम किसी बातसे घबड़ाना नहीं तुम कभी दुःख मत उठाना, कभो रातिमें नहीं जागना, थोड़ेही समयमें देव तुल्य पाण्डव लोग सब पृथ्वीको जोतेंगे और तुम महारायी बनोगी; हे द्रौपदि! तुम्हारे समान शील और लक्षणवाली स्त्री बहुत दिन तक दुःख नहीं भोगतीं; मैंने सुना है कि तुम अवश्यही इस सब भूमिको वैरियोंसे रहित करके अपने पतियोंके सहित

भोग करोगी; हे द्रुपदनन्दिनि! धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारकर और सब बैरको पूरा करके महाराज युधिष्ठिर राजा होंगे; इस उत्सवको तुम आप देखोगी; जो कुरुवंशियोंकी स्त्री अभिमानसे मोहित होकर तुमको चलते देखकर हंसी थीं, उन सबके सङ्कल्प नष्ट हो जायंगे; हे कृष्णे! दुःखके समयमें जिन्होंने तुम्हारे अप्रिय कार्य्य किये हैं, वे सब यमलोकको जायंगे; तुम्हारे जो प्रतिविन्ध, श्रुतसोम, श्रुतकर्म्मा, शतानीक और श्रुतसेन पुत्र हैं वे सब कुशलपूर्व्वक शस्त्रविद्या सीख चुके हैं; अभिमन्युके समान प्रीतिपूर्व्वक द्वारिकामें रहते हैं; जैसे तुम उन्हें प्रेम करती हो वैसेही सुभद्राभी तुमसे परम प्रीति करती हैं, वह तुम्हारे दुःख और सुखसे दुःखी होती हैं; प्रद्युम्नकी माता भी तुम्हारे पुत्रोंको सब प्रकारसे मानती हैं और श्रीकृष्णभी उनपर बहुत ध्यान रखते हैं। हमारे ससुर वसुदेवजी तुम्हारे पुत्रोंके भोजन और वस्त्रोंका सदा ध्यान रखते हैं, बलराम आदि सब यदुवंशी तुम्हारे पुत्रोंको मानते हैं; हे भामिनि! हम तुम्हारे पुत्रोंको प्रद्युम्नके समान मानती हैं।

इस प्रकारसे अनेक सत्य और प्यारे वचन कहकर सत्यभामा कृष्णके रथकी ओर चलीं। कृष्णकी प्यारी सत्यभामाने द्रौपदीको प्रदक्षिणा करी और प्रणाम किया। अनन्तर श्रीकृष्णके रथपर बैठ गई। श्रीकृष्णनेभी हंसकर द्रौपदीको प्रसन्न किया। फिर अपने रथपर चढ़कर द्वारकाको चले गये।

२३४ अध्याय समाप्त।

द्रौपदि सत्यभामा सम्वादपर्व्व समाप्त।

अब घोषयात्रा पर्व्व लिखते हैं।

महाराज जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम! पुरुषोंमें श्रेष्ठ! पाण्डवलोग जब इस प्रकार बनमें रहकर शीत, उष्ण, वायु और घामसे दुबले होकर उस पवित्र तालावके तटपर पहुंचे तब उसके पश्चात् उन्होंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन बोले, जब महात्मा पाण्डव लोग उस पवित्र तालाव पर पहुंचे, तब अपने सङ्गके सब पुरुषोंको विदा करदिया और वहां उन्होंने अपना घर बना लिया और आस पासके वन तथा नदियोंको देखते हुए घूमने लगे। महात्मा वीर पाण्डवोंके पास उस बनमें वेदके जाननेवाले महात्मा ब्राह्मण लोग आये। उन्होंने उन सब ब्राह्मणोंकी पूजा करी। एकदिन एक कथा जाननेवाला ब्राह्मण पृथ्वीमें घुमता हुआ कौरवोंके पास गया। उसने वहां जाकर विचित्रवीर्य्यके पुत्र महाराज धृतराष्ट्रको पंहुचा। अनन्तर कुरुकुल श्रेष्ठ बूढ़े महाराज धृतराष्ट्रने उस ब्राह्मणका बहुत सत्कार किया और बैठनेको आसन देकर पाण्डवोंका कुशल पंछा। तब उस ब्राह्मणने सब पाण्डवोंकी कथा सुनाई। जब महाराजने पाण्डवोंको सुना कि वायु और घामसे परम दुर्ब्बल हो गए हैं, और घोर दुःखमें पड़े हैं, वह वीरपत्नी द्रौपदी अनाथके समान क्लेशोंको भोग रही है, तब महाराज विचित्रवीर्य्यके पुत्र धृतराष्ट्रको बहुत कृपा आई। राजवंशी पाण्डवोंको इस प्रकार बनमें दुःखकी नदीमें बहते हुए सुनकर दुःखसे पीड़ित होकर लम्बा स्वांस लेकर हीन वचनसे बोले। महाराजने इस सब कर्म्मको अपना कर्म्म जानकर बहुत दुःख पाया; परन्तु अपने वचनको स्थिर करके कुछ बोले। महाराज कहने लगे, हाय हमारे बड़े पुत्र सत्यबादी, पवित्र, उत्तम कर्म्म करनेवाले, अजातशत्रु धर्म्मराज किस प्रकार पृथ्वीमें सोते होंगे; वे पहले द्वारेनके रोवांकी गद्दी पर सोते थे; जिन इन्द्रके समान महाराज युधिष्ठिरको स्तुति करनेवाले सूत और बन्दियोंके समूह गाते थे; वे अब पृथ्वीमें सोते

होंगे और सिंह आदि मारनेवाले पशुओंके शब्दसे जागते होंगे ; महाक्रोधी भीमसेन वायु और घामसे दुबले हो गये होंगे ; वे किस प्रकार द्रौपदीके आगे पृथ्वीपर सोते होंगे ; निश्चय भीमसेन इस दुःखसे योग्य नहीं थे, इस प्रकार मनस्वी सुकुमार अर्जुनभी धर्मराजके वशमें होकर अपने दुःखी शरीरसे दुःख सहते होंगे और पृथ्वीपर सोते होंगे ; अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी, और भीमको सुखसे भ्रष्ट देखकर महातेजस्वी युधिष्ठिर सांपके समान क्रोधके स्वांस लेते होंगे ; नकुल और सहदेवभी दुःख सहनेके योग्य नहीं हैं ; परन्तु इस समय महा दुःख सह रहे हैं ; वे लोग देवतोंके समान कोमल हैं ; वे लोग निश्चय रात दिन जागते होंगे और शान्त नहीं होंगे, परन्तु सत्य और धर्म्मके वशमें हैं ; वायुके पुत्र, वायुके समान वेगवाले, वायुके समान बलवान, भीमसेन धर्म्मराजके धर्म्मपाशमें बन्धे हुए हैं, तो भी क्रोधके वशमें होकर स्वास लेते होंगे ; वे पृथ्वीमें सोते हुए हमारे पुत्रोंके नाशको इच्छा करते होंगे, परन्तु सत्य और धर्म्मके वशमें होकर कुछ कर नहीं सके ; वे अपने समयको बिता रहे हैं और युद्धका समय देख रहे हैं ; जिस समय महाराज युधिष्ठिरको छलसे जीता था और दुःशासनने कठोर बचनको कहा था वे सब भीमसेनको ऐसा जला रहे हैं जैसे अग्नि ईंधनको जलाती है ; महाराज युधिष्ठिर कभी पापका ध्यान नहीं करेंगे ; और अर्जुनभी उनके सङ्ग रहेंगे, बनमें रहनेसे भीमका क्रोध ऐसा बढ़ेगा जैसे वायु लगनेसे अग्नि बढ़ती है ; भीमसेन उस क्रोधसे जलकर हाथसे हाथको मल रहे होंगे, वे हमारे पुत्र और पौत्रोंके मारनेका विचार करते और घोर गरम गरम सांस लेते होंगे ; गाण्डीव धनुषधारी अर्जुन और भीमसेन काल और यमराजके समान युद्धमें हैं ; वे दोनो अपने शत्रुओंको बाणरूपी करके नहीं सोते होंगे ; वे लोग युद्धमें शत्रुओंकी सेनापर वज्रके समान बाणोंको छोड़ते हैं ; दुर्योधन, शकुनी, कर्ण, और दुःशासन, ये सब महा मूर्ख हैं ; ये लोग केवल अपने प्रयोजनको देखते हैं और हानिको नहीं देखते ; इन्होंने जुवा खेलकर युधिष्ठिरका राज्य छीन लिया है ; पुरुष शुभ और अशुभ कर्म्म करके उनके फलका मार्ग देखता है ; फिर उनका फल पाकर मोहको प्राप्त होनेसे अपने वशमें नहीं रहता है ; फिर उस पुरुषकी मोक्ष कैसे हो सकती है ? जब खेत अच्छी प्रकारसे सींचा जाय, फिर बीज बोया जाय, पश्चात् समयपर जलभी बर्षे, फिर उसमें अन्न क्यों नहीं उत्पन्न होगा ? यदि प्रारब्धही उलट जाय तो अन्न नहीं उत्पन्न हो सकता ; जो अच्छा कर्म्म नहीं था,सोई शकुनीने किया परन्तु उत्तम कर्म्म करने वाले युधिष्ठिरने उस समयभी अच्छा कर्म्म किया और मैंने अपने दुष्ट पुत्रके वशमें होकर ऐसा कुकर्म्म किया, जिससे कुरुवंशका अन्त समय आगया । निश्चय वायु बहताही है, चाहे उसे कोई चलावे वा न चलावे ; गर्भिणी सन्तान उत्पन्न करतीही है ; निश्चय दिन होनेसे रात्रिका नाश और रात्रि होनेसे दिनका नाश होताही है ; यदि पुरुषको ज्ञान हो तो किस प्रकारसे धन इकट्ठा हो सकता है, दूसरे राजा लोग किस प्रकारसे इकट्ठा करेंगे और किस प्रकारसे कोई किसीको देगा ; प्राप्तिका जो समय है, सो भी अनर्थका हो जायगा ; तब सब कर्म्म किस प्रकारसे और कहां सिद्ध होंगे वह धन किस प्रकारसे बंट सकता है और किस प्रकारसे उसका खर्च हो सकता है, तथापि उसकी रक्षा करनी होती ही है ; क्योंकि रक्षा न करनेसे वह सहस्रों मार्ग बनाकर निकल जाता है, इससे किये हुए कर्म्मका फल अवश्य होता है । देखो अर्जुनका कैसा बल है, यह बलसे इन्द्रलोक हो आया ; वहांसे चार प्रकारके दिव्य

शस्त्र सीखके पुनः इस लोकमें आगया; ऐसा कौन पुरुष है,जो इसी शरीरसे स्वर्गमें जाय और फिर आनेकी इच्छा करे? दिव्यज्ञानवाले अर्जुनने अनेक मूर्ख कौरवोंको कालके वशमें देखकर क्रोध नहीं किया; धनुषधारी अर्जुन, वह घोर वेगवाला गाण्डीव धनुष और वे अर्जुनके दिव्य बाण इस लोकमें इन तीनोंका तेज कौन सह सकता है! राजाके यह वचन सुन कर सुबलपुत्र शकुनीने कर्णसे सब कह सुनाये। वह मूर्ख सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुआ।

२३५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज धृतराष्ट्रके ऐसे वचन सुन शकुनीने कर्ण और दुर्य्योधनसे ऐसा कहा। हे भारत! तुमने अपने बलसे वीर पाण्डवोंको बनबास दिया, अब इस समस्त पृथ्वीका इस प्रकार भोग करो जैसे इन्द्र स्वर्गका भोग करता है। हे नरनाथ! पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर, और दक्षिणके रहनेवाले सब राजा तुमको कर देते हैं, जो प्रकाशमान लक्ष्मी पहिले पाण्डवोंके पास थी सो भाइयोंके सहित आपने प्राप्त करी है, हे राजन्! हम लोगोंने जो लक्ष्मी इन्द्रप्रस्थमें युधिष्ठिरके पास देखी थी सो सब तुम्हारे पास दीखती है; हे राजेन्द्र! तुम्हारे शत्रु लोग बहुत समय तक दुःख भोगेंगे। हे महाबाहो! तुमने अपनी बुद्धि और बलसे राजा युधिष्ठिरकी लक्ष्मीको छीन लिया है। हे शत्रुनाशन! आज सब राजालोग तुम्हारे वशमें हैं; वे सब लोग कहते हैं कि "हे महाराज! हम आपके आज्ञापालक हैं; कहिये कौनसा काम करें"; हम लोग आपके आज्ञापालक हैं। आज समुद्र, पर्व्वत, वन, गांव, नगर, और खानोंके सहित सब पृथ्वी तुम्हारे वशमें है। जिस प्रकार ब्राह्मण और राजोंसे पूजित सूर्य्य प्रकाशित होता है, तैसेही आप अपने बलसे प्रकाशमान हैं। जैसे रुद्रोंके सहित जल, मरुतोंके सहित इन्द्र और तारोंके बीचमें चन्द्रमा प्रकाशित होता है, तैसेही कुरुवंशियोंके बीचमें आप विराजमान हैं। जो लोग तुम्हारी आज्ञा नहीं पालते और जो आपके वचन को नहीं मानते वे ही पाण्डव लोग लक्ष्मीसे रहित होकर बनमें बसते हैं। हे महाराज! हम लोगोंने सुना है कि पाण्डवलोग बनबासी ब्राह्मणोंके सहित द्वैत बनमें एक तलावके तटपर बसते हैं। हे महाराज! आप अपनी लक्ष्मीसे सूर्य्यके समान तेजस्वी होकर पाण्डवोंको पीड़ा देनेके लिये द्वैत बनको चलिये। हे नरनाथ! आप राज्यमें स्थित हैं,पाण्डव लोग राज्यसे भ्रष्ट हैं; आप लक्ष्मीसे युक्त; वे लक्ष्मीसे हीन हैं, और आप परम बुद्धिसे भरे हैं, अब वहां चलकर बुद्धिहीन पाण्डवोंको देखिये, आपको नहुष पुत्र ययातिके समान लक्ष्मीसे भरे हुए और अपने पुरुषोंके सहित विराजमान होन पाण्डव लोग देखें; हे नरनाथ! जिसको प्रकाशमान लक्ष्मीको शत्रु और मित्र देखते हैं, वही कार्य्य करनेमें समर्थ होता है, जिस सुखी पुरुषका शत्रु लोग दुःखी होकर देखें, उससे अधिक सुखी कौन होगा? उनको ऐसीही दशा होती है, जैसे किसी पर्व्वत पर चढ़े पुरुषका पृथ्वीमें खड़ा हुआ मनुष्य देखे। हे राजसिंह! पुत्र धन और राज्यके प्राप्त होनेसे इतना सुख नहीं होता, जितना शत्रुओंका दुःख देखनेसे होता है। ऐसा कौन पुरुष है, जो धनवान होकर आश्रमपर बैठे हुए और मुनियोंके वस्त्र पहने हुए अर्जुनको दुखी देख कर प्रसन्न न हो? तुम्हारी सब स्त्रियां अच्छे अच्छे वस्त्र पहनकर वगुले और हरिन के चर्म्मधारिणी दुःखित द्रौपदीको देखें; इससे उनको बहुत दुःख होगा और तुम्हारी स्त्रियोंको आभूषण पहिरे देखकर द्रौपदी

भूषण रहित अपने शरीरकी बहुत निन्दा करेगी; हे राजन्! तुम्हारी स्त्रियोंको देखकर जैसा द्रौपदीको दुःख होगा, तैसा सभामें नहीं हुआ था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! राजा दुर्य्योधनसे ऐसे वचन कहकर शकुनी और कर्ण चुप होगए।

२३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके वचन सुनकर राजा दुर्य्योधन बहुत प्रसन्न हुए और फिर दीन होकर ऐसा बोले। हे कर्ण! तुमने जो कहा सो सब हमारे मनमें है, परन्तु पाण्डवोंके पास जानेको आज्ञा महाराज हमको नहीं देंगे, महाराज धृतराष्ट्र पाण्डवोंके निमित्त रोया करते हैं और उनको हम लोगोंसे अधिक मानते हैं। यदि महाराज हमारी सम्मतिको जान जायंगे तो आनेवाले समयको रक्षा करनेकी कदापि आज्ञा न देंगे; हे महातेजस्वी बनवासी पाण्डवोंके दुःख देनेके सिवा द्वैत बनमें हम लोगोंको और कोई काम नहीं है; तुम जानते हो कि जुएकी समय विदुरने हमसे तुमसे और शकुनीसे कैसे कैसे वचन कहे थे; उन सब वचनोंको और राजाके रोनेको विचारकर, हम चलने और न चलनेकी कुछ नहीं कह सकते हैं; हमभी बहुत प्रसन्न हों, जो द्रौपदीके सहित भीम और अर्जुनको बनमें दुःख पाते देखें। हम इस सब पृथ्वीको पाकर इतने प्रसन्न नहीं होंगे, जितने वगुले वा हरिनका चर्म्म ओढ़े पाण्डवोंको देखकर। इससे और अधिक सुख क्या होगा जो मैं द्रुपदकी पुत्री द्रौपदीको गेरुवा वस्त्र पहिने हुए बनमें बैठी देखूं? हे कर्ण! मुझे इससे अधिक और क्या सुख होगा जो मुझे धर्म्मराज युधिष्ठिर और भीमसेन परमलक्ष्मीके युक्त देखें? परन्तु मुझे कोई द्वैत बनमें चलनेका उपाय नहीं दीखता, जिससे राजा हमें बनमें जानेकी आज्ञा दें। इस लिये तुम दुःशासन और शकुनीके सहित कोई ऐसा उत्तम उपाय विचारो जिससे हम लोग बनको जा सकें; मैं भी बन जानेकी आज्ञा मांगनेके लिये प्रातःकालही महाराजके पास जाऊंगा यदि वहां कुरुकुल श्रेष्ठ भीष्म बैठे होंगे तो उनसे सब वृत्तान्त कहूंगा; इससे तुम और शकुनी कोई उत्तम उपाय विचारो; पश्चात् भीष्म और महाराजके वचन सुनकर और भीष्मकी आज्ञा लेकर चलनेका विचार करेंगे। अनन्तर सबने राजाके वचनको स्वीकार किया और सब लोग अपने अपने घरको चले गए। प्रातःकाल होतेही कर्ण राजाके पास आए और हंसकर कहने लगे, हे पृथ्वीनाथ! हमने एक उपाय विचारा है, उसको आप सुनिये। द्वैत बनमें गौ और ग्वाले रहते हैं, वे सब आपका मार्ग देख रहे होंगे, इस लिये राजासे यही कहना चाहिये, तो वे हमको जानेकी आज्ञा देंगे; हे पृथ्वीनाथ! आप उनसे कहना कि, हे महाराज! "हमें गौ देखने जाना आवश्यक है," तब वे आपको जानेकी आज्ञा देंगे। कर्ण और दुर्य्योधनका ऐसा निश्चय सुनकर शकुनी बोले, हमने इस उपायको बहुत उत्तम सोचा है; अब महाराज हम लोगोंको अवश्य जानेको आज्ञा देंगे। ऐसा निश्चय करके वे सब लोग ताली बजाकर हंसने लगे। अनन्तर सब राजा धृतराष्ट्रके पास गए।

२३७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराजके पास जाकर उन सबने कुशल पूछी और राजाने उनसे कुशल प्रश्न किया। तब उनमेंसे समंग नामक ग्वालेने कहा कि, हे महाराज! सब गौ समीपही हैं। इसके पश्चात राजोंमें श्रेष्ठ नरनाथ धृतराष्ट्रसे कर्ण

और शकुनी कहने लगे, हे कुरुकुलश्रेष्ठ! आज कल्ह गाय बैल रमणीय बनमें हैं, उनको देखने तथा नवीन बछड़ोंको संख्या चिह्न देनेका समय भी आगया है, और इस समय आपके पुत्रको आहेर करनाभी उचित है, आप दुर्य्योधनको जानेकी आज्ञा दीजिये। महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे तात! आहेर खेलना तो उचितही है, परन्तु ग्वालोंके विश्वासपर नहीं जाना चाहिये, क्योंकि हमने सुना है कि पुरुषसिंह पाण्डव लोग भी वहां ही हैं। इस लिये हमारी यह इच्छा नहीं है कि तुम लोग आपही बनको जाओ। हे राधा-पुत्र! उन सब लोगोंको तुमने छलसे जीता है और वे लोग बनमें रहते रहते बहुत दुर्ब्बल होगये हैं; वे लोग नित्यही तप करते हैं; पाण्डव महारथ हैं; मुझे विश्वास है कि धर्म्म-राज युधिष्ठिर कभी क्रोध नहीं करेंगे, परन्तु भीमसेन महाक्रोधी है और द्रुपदकी पुत्री साचात अग्निही है; और तुम लोग अभिमानसे मोहित हो; इससे उनका अपराध अवश्यही करोगे, तब वे तुम सब लोगोंको अपने तपसे भस्म कर देंगे, यदि वे पाचों भाई शस्त्र धारण करके और कवच पहर कर क्रोध करेंगे, तो तुम लोगोंको वाणोंसे भस्म कर देंगे। यदि तुम सब लोग इकट्ठे होकर उनसे युद्ध करोगे तो बहुत अधर्म्म होगा और जीत नहीं सकोगे; महाबाहु अर्ज्जुन इन्द्रलोकसे सब शस्त्रोंको सीखकर बनमें आये हैं; जब अर्ज्जुनने शस्त्र विद्या नहीं सीखी थी, तभी उसने सब पृथ्वीको जीत लिया था, फिर अबतो सब शस्त्रविद्या सीख ली है; वह महारथ अर्ज्जुन अब तुम लोगोंको क्यों न मारेगा? यदि तुम लोग हमारे वचन सुनकर वहां जाओगे तो महा दुःख उत्पन्न होगा; क्योंकि पाण्डव लोग बन-वाससे घबड़ा रहे हैं, अथवा कोई तुम्हारी सेनाका एरुष युधिष्ठिरकी कुछ हानि करेगा तो वही मूर्खतारूपी दोष तुम्हारा नाश कर देगा। हे दुर्य्योधन! इस लिये हमारी यह इच्छा नहीं है, कि तुम आपही वहां जाओ, वरन् अन्य उत्तम पुरुष गौ और बैलोंकी संख्या करनेको जायं।

शकुनी बोले, हे महाराज! युधिष्ठिर बहुत धर्म्म जाननेवाले हैं, और उन्होंने सभामें प्रतिज्ञा करी है, इससे वे अवश्यही १२ वर्ष बनमें रहेंगे, सब पाण्डव लोग धर्म्मात्मा और उत्तम कार्य्य करनेवाले हैं; इससे कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर हम लोगों पर कभी क्रोध नहीं करेंगे; हम लोगोंकी इच्छा आखेट खेलनेकी नहीं है; हम केवल गौ और बछड़ोंको गिनने जाते हैं; हम लोग वहां जाकर कोई अनर्थ नहीं करेंगे और न पाण्डवोंके आश्रम पर जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शकुनीके ऐसे वचन सुन महाराज धृतराष्ट्रने मन्त्रियोंके सहित दुर्य्योधनको बन जानेकी आज्ञा दी; परन्तु प्रसन्न होकर जानेको न कहा। गान्धारीपुत्र दुर्य्योधन पिताकी आज्ञा पाकर कर्ण दुःशासन बुद्धिमान शकुनी तथा अन्य सब भाइयोंके सहित बनको चले। भरतकुलश्रेष्ठ दुर्य्योधन के संग बहुत सेना और सहस्रों स्त्रियां भी चलीं। जब महाबाहु दुर्य्योधन द्वैत बनमें तालाव देखनेको चले, तब नगरनिवासी लोग-भी स्त्रियोंके सहित उनके पीछे चले। दुर्य्यो-धनके सङ्ग आठ सहस्र रथ तीन सहस्र हाथी नौ सहस्र घोड़े और अनेक सहस्र पैदल चले। महाराज दुर्य्योधनके सङ्ग छकड़े, बाजार, बनिये, भाट, और सैकड़ों सहस्रों आखेट करनेवालेभी चले। दुर्य्योधनके चलनेके समय ऐसा घोर शब्द हुआ, जैसा बर्षा कालमें घोर बायुका शब्द होता है। उस समय दुर्य्योधनकी सेना दो कोसमें ठहरी।

२३८ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! दुर्य्योधन इस प्रकारसे बनको देखते हुए अपनी गोशालाके पास पहुंचे और गौवोंके समोपही जल वृक्ष और सब गुणसे भरे हुए स्थानमें डेरा किया। महाराजके पासही कर्ण शकुनी और उनके सब भाइयोंके डेरे हुए। अनन्तर दुर्य्योधनने सहस्रों गौवोंको देखा और उनके अङ्ग तथा चिह्नभी देखे और नवीन बछड़ोंको संख्या चिन्ह दिये और पुराने बछड़ोंकोभी गिना और फिर उस गिनतोको नई गिनतोसे मिलाया। जिन गौओंके नोचे छोटे छोटे बछड़े थे, उनको गिनतो अलग अलग करी; उनमें जो तीन वर्षके बछड़े थे उनको अपने सङ्ग ले लिया और शेष बछड़ोंको गिनकर वहीं छोड़ दिया। अनन्तर कुरुकुल श्रेष्ठ दुर्य्योधन ग्वालोंसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। पश्चात् दुर्य्योधनके सङ्गवाले नगरनिवासी और देवतोंके तुल्य सेनाके लोग उस वनमें इच्छानुसार खेलने लगे। अनन्तर गानेवाले और नाचनेवाले ग्वाले और उनकी कन्या आभूषण पहरकर दुर्य्योधनके पास आईं। तब राजाने स्त्रियोंके सहित प्रसन्न होकर उन सबको उचित धन, भोजन और अनेक प्रकारकी पीनेकी वस्तु दो। तब उन सब ग्वालोंने राजा दुर्य्योधनको भंसे, रीछ, हरिन, नीलगाय और वराहोंकी गिनती बताई। तब उस रमणीय बनमें दुर्य्योधनने अपने बाणोंसे हाथी आदि अनेक जन्तुओंको मारा और हरिनोंको पकड़वाया। इस प्रकार दूध दहीको भोजन करते हुए और सुन्दर बनको देखते हुए बनके मतवाले भौंरे, और मतवारे मोरोंके शब्द सुनते हुए क्रमसे पवित्र द्वैतबनमें पहुंचे। वहां मतवाले भौंरे और मोर शब्द कर रहे थे। वह बन मौलसरी, पुन्नाग आदि रमणीय वृक्षोंसे भरा था। उसी बनमें परम ऋद्धिसे भरे हुए, साक्षात वज्रधारी इन्द्रके समान प्रतापी महाराज युधिष्ठिरभी निवास करते थे। उस दिन कुरुकुलश्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिर बारह दिनका राजर्षियज्ञ कर रहे थे, उस यज्ञको उन्होंने दिव्य विधिसे आरम्भकिया था। बुद्धिमान पृथ्वोनाथ महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदो और अपने भाइयोंके सहित उसी तड़ागपर यज्ञ आरम्भ किया था। हे भारत! उसी समय दुर्य्योधनने अपने सहस्रों सेवकोंको आज्ञा दी कि तुम लोग शीघ्र विहार करनेके लिये स्थान ढूंढ़ो। वे सब लोग उनके बचनको स्वीकार करके स्थान ढूंढ़नेके लिये उसी द्वैतबनके तलावकी ओर जाने लगे। जिस समय उन्होंने बनमें प्रवेश किया, उसी समय गन्धर्व्व लोग निवारण करने लगे। जिस समय दुर्य्योधनकी सेनाने उस वनमें प्रवेश किया था, उससे पहिलेही अलकापुरोसे चलकर गन्धर्व्वराज अपनी सेना सहित वहां आये थे। उनके सङ्ग अनेक अप्सरा और देवतोंके पुत्रभी थे; उन सबसे उस तलावका तट भरा हुआ था और वे लोग वहां विहार कर रहे थे। राजा दुर्य्योधनके सेवक यह सब देखकर वहांसे लौट गये और राजासे सब समाचार कह सुनाया। राजाने उनके वचन सुनकर महायुद्ध करनेवाले सैनिकोंको भेजा और आज्ञा दी कि गन्धर्व्वोंको बनसे निकाल दो, वे सब राजाके वचन सुनकर गन्धर्व्वोंके पास गये और ऐसा कहने लगे कि, महाराज धृतराष्ट्रके पुत्र महाबलवान राजा दुर्य्योधन यहां विहार करनेको आना चाहते हैं; इसलिये तुम लोग भाग जाओ। उनके ऐसे बचन सुन गन्धर्व्व लोग हंसने लगे और कठोर वचन कहने लगे कि, तुम्हारा दुर्य्योधन नामक राजा महामूर्ख है, वह कुछभी नहीं जानता; जो स्वर्गमें रहनेवाले हम लोगोंपर बनियोंके समान आज्ञा करता है, और तुम लोगभी मूर्ख हो, निःसन्देह तुम लोगोंको कुछभी बुद्धि नहीं है, जो उस मूर्खके वचनोंको हम लोगोंसे कहने आये हो। इस

लिये तुम लोग उस कुरुवंशी राजाके पास लौट जाओ, नहीं तो हम अभी तुम सबको यमराजके पास भेजेंगे। वे सब गन्धर्व्वोंके वचन सुन राजा दुर्य्योधनके पास गये।

२३९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब उन सब सैनिकोंने गन्धर्व्वोंके सब वचन दुर्य्योधनसे कह सुनाए, और जब प्रतावान धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनने देखा कि मेरी सेनाको गन्धर्व्वोंने निवारण कर दिया, तब महा क्रोधसे भर गए और अपनी सेनाको आज्ञा दी कि हमारा अप्रिय कार्य्य करनेवाले इन अधर्म्मी गन्धर्व्वोंको मारो, यदि साक्षात इन्द्र भी देवतोंके साथ विहार करते हों तो उन्हें भी यहांसे निकाल दो। दुर्य्योधनकी आज्ञा सुनतेही धृतराष्ट्रके सब पुत्र और महा बलवान सहस्रों योद्धा लोग युद्धको उपस्थित हुए। तब उन सब लोगोंने गन्धर्व्वोंको अपने बलसे व्याकुल करके और अपने घोर शब्दसे दशों दिशाओंको पूर्ण करके, उस वनमें प्रवेश किया। तब उन गन्धर्व्वोंने इन सबको शान्तिपूर्व्वक निवारण किया; परन्तु ये उनका निरादर करके वनमें घुस गए। जब धृतराष्ट्रके पुत्रोंने उनके वचनोंको न सुना, तब उन गन्धर्व्वोंने जाकर चित्रसेनसे कह दिया। महा क्रोधी गन्धर्व्वराज चित्रसेनने सुनतेही सब गन्धर्व्वोंको आज्ञा दी कि, इन अधर्म्मी कौरवोंको मारो। हे भारत! गन्धर्व्वराजकी ऐसी आज्ञा सुन गन्धर्वलोग शस्त्र लेकर कौरवोंकी ओर दौड़े। जब कौरवोंने शीघ्रगामी गन्धर्व्वोंको शस्त्र लिये अपनी ओर आते देखा, तब सब लोग इधर उधर भागने लगे! परन्तु सूतपुत्र कर्ण युद्धको छोड़कर न भागा। जब कर्णने उस महासेनाको आते हुए देखा, तो घोर बाणोंको बर्षा करके, उसे निवारण करने लगा। सूतपुत्र कर्णने क्षुरप्र, वत्सदन्त और लोहेके बाणोंसे क्षण भरमें गन्धर्व्वोंकी सेनाको व्याकुल कर दिया। महारथ कर्णके बाणोंसे अनेक गन्धर्व्वोंके सिर पृथ्वी पर गिर गये बुद्धिमान कर्णके बाणोंसे व्याकुल होकर सहस्रों गन्धर्व्व लोग फिर युद्ध करनेको लौटे, उस समय वह समस्त रणभूमि गन्धर्व्वोंसे भरी हुई दीखती थी। जिस समय चित्रसेनकी सेना फिर लौटी, तब राजा दुर्य्योधन, सुबलपुत्र शकुनी, दुःशासन और विकर्ण आदि धृतराष्ट्रके पुत्र गरुड़के समान रथोंपर बैठकर गन्धर्व्वोंको मारने लगे, दुर्य्योधनको सेना कर्णको आगे करके महायुद्ध करने लगे। उस समय दुर्य्योधनकी सेनाने रथयुद्ध किया दुर्य्योधनकी सेनाने गन्धर्व्वोंकी सेनाको अपने बाणोंसे जीत लिया। तब गन्धर्व्व लोगभी उनसे घोर युद्ध करने लगे। यह युद्ध महाघोर और लोमहर्षण हुआ। तब दुर्य्योधनकी सेनाके बाणोंसे पीड़ित होकर गन्धर्व्व लोग ढीले पड़ गये दुर्य्योधनके सैनिक लोग गन्धर्व्वोंको व्याकुल देखकर गर्जने लगे, जब महाक्रोधी चित्रसेनने देखा कि गन्धर्व्व लोग युद्धमें व्याकुल होगए, तब क्रोध करके और उन सबके मारनेकी इच्छा करके आपही उठा; चित्रसेनने उस समय गन्धर्व्वों मायाको प्रकाश किया। चित्रसेनकी उस मायासे सब कौरव लोग मोहित होगये। हे भारत! उस समय दुर्य्योधनके एक एक योधाके सङ्ग दश दश गन्धर्व्व युद्ध करने लगे। हे राजन्! उस समय गन्धर्व्वोंके बाणोंसे दुर्य्योधनकी सब सेना पीड़ित हो गई और योद्धा जीनेकी इच्छासे भागे। जब दुर्य्योधनकी सब सेना इधर उधर भागने लगी, तब अकेला कर्णही पर्व्वतके समान खड़ा रहा। उस समय दुर्य्योधन कर्ण और सुबलपुत्र शकुनी अत्यन्त घावोंसे पीड़ित होकर भी युद्ध करते रहे। तब सहस्रों गन्धर्व्व लोग इकट्ठे होकर कर्णके मारनेकी इच्छासे केवल कर्णहीसे युद्ध करने लगे। महाबलवान गन्धर्व्व

लोग चारों ओरसे कर्णके ऊपर खड्ग, परिघ, शूल, और गदा छोड़ने लगे। किसीने कर्णके रथके पहिये, किसीने ध्वजा, किसीने धुरी, किसीने घोड़े किसीने सारथी, किसीने छत्र, किसीने कलश, और किसीने रथके बन्धन काट डाले। उस समय सूतपुत्र कर्णका रथ कटकर तिलके समान हो गया। तब कर्ण खड्ग और ढाल लेकर रथसे नीचे उतरा और विकर्णके रथपर चढ़कर युद्धसे भागा।

२४० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जिस समय महारथ कर्ण गन्धर्व्वोंसे हारकर और युद्धको छोड़कर भागा, उस समय दुर्य्योधनके देखते देखते उनकी सब सेना भाग गई। उस घोर युद्धसे केवल महाराज दुर्य्योधन-ही नहीं भागे, जब दुर्य्योधनने उस महासेनाको अपनी ओर आते देखा तब बाणोंकी घोर वर्षा करने लगे। गन्धर्व्वोंने उनकी बाण वर्षापर कुछभी ध्यान नहीं दिया और उनको चारों ओरसे घेरकर मारने लगे। उस समय दुर्य्योधनके रथके पहिये धुरी, ध्वजा, सारथी, घोड़े और जुआ तिल तिल होकर पृथ्वीपर गिर गये और दुर्य्योधनभी मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरे तब महाबाहु चित्रसेनने उनको जीतेही पकड़ लिया। जिस समय महाराज दुर्य्योधन पकड़े गए, उस समय रथपर बैठे हुए दुःशासनकोभी गन्धर्व्वोंने पकड़ लिया विविंशती, चित्रसेन, विन्द, और अनुविन्द, तथा और सब राजस्त्रियोंको पकड़कर चित्रसेनने चल दिया। उस समय दुर्य्योधनकी सब सेना भाग गई। जिस समय राजा पकड़े गये उस समय दुर्य्योधनके सङ्गके छकड़े, बनियें सब वाहन और सेनाके सब लोग पाण्डवोंको शरण गये।

सेनाके लोग बोले, हे महाबाहो! हे युधिष्ठिर! महा बलवान धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनको गन्धर्व्व लोग पकड़े लिये जाते हैं, आप लोग उनको छुड़ाइये। दुःशासन, दुर्विसह, दुर्जय, दुर्मुख, और सब राजस्त्रियोंको बांधकर गन्धर्व्व लोग लिये जाते हैं, आप लोग छुड़ाइये, इस प्रकारसे रोते हुए दुर्य्योधनके मन्त्री लोग महाराज युधिष्ठिरकी शरण गए। इस प्रकारसे दुर्य्योधनके बूढ़े मन्त्रियोंको दीन और युधिष्ठिरसे भीख मांगते देखकर भीमसेन बोले, बहुत यत्न करके हाथी और घोड़ोंको इकट्ठा करके जो कार्य्य हमको करना था, सो गन्धर्व्वोंहीने कर लिया, जहां कुछ और होना था तहांही कुछ और हो गया। यह जुआ खिलानेवाले राजा धृतराष्ट्रकी बुरी सम्मतिका फल हुआ; हम लोगोंने यह सुना था कि असमर्थोंके शत्रुओंको कोई दूसरा ही मार देता है, परन्तु गन्धर्व्वोंने यह अमानुष कर्म्म हमारे आगेही किया; हमारी प्रारब्धसे जगतमें हमारे बैठे बैठे हमारे सिरसे इस बोझको उतार दिया। हम लोग शीत, बात और घामको सहकर दुर्बल हो गये हैं और यह दुर्बुद्धि सुखी होकर हम दुःखियोंको देखने आया था; महा अधर्मी दुरात्मा दुर्य्योधनके जो लोग सङ्गी हैं, वे ही इस समय उसका निरादर देख रहे हैं; जिन्होंने यह शिक्षा दी है; उन लोगोंने बड़ा अधर्म्म किया है। हम तुम लोगोंसे आगे कहते हैं किन्तु पाण्डव लोग बड़े निठुर हैं। जिस समय कुन्तीनन्दन भीमसेन क्रोधमें भरकर ऐसा कह रहे थे, उसी समय राजा युधिष्ठिरने कहा कि, यह समय कठोरवचनका नहीं है।

२४१ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे तात! कौरव लोग इस समय हमारी शरण आये हैं, ये लोग भयसे व्याकुल होकर शरणकी इच्छा करते हैं, तब तुम ऐसे वचन इनसे क्यों कहते हो?

हे वृकोदर! अपने वंशमें अनेक प्रकार कलह और भेद हुआ जाते हैं, परन्तु कुलके धर्म्म नष्ट नहीं होते हैं। यदि कोई अन्य पुरुष अपने कुलके पुरुषको किसी प्रकारका दुःख देना चाहे तो वंशमें अच्छे लोग उसको नहीं सह सकते हैं; मूर्ख दुर्य्योधन जानता था, कि हम लोग यहां बहुत दिनोंसे रहते हैं, तौभी उसने हमारा निरादर करके यह अप्रिय कार्य्य किया; दुर्य्योधनके पकड़े जानेसे और स्त्रियोंके अन्यत्र जानेसे हमारा वंश नष्ट हो जायगा। हे पुरुषसिंहो! शरणागतकी रक्षा करनेको और वंशका उद्धार करनेको तुम लोग शीघ्र उठो, देर मत करो; सब युद्धकी सामग्री ठीक कर लो। अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और तुम चारों वीर अपराजित हो; तुम लोग शीघ्रही पकड़े हुए दुर्य्योधनको छुड़ाओ; हे पुरुषसिंहो! ये धृतराष्ट्रके पुत्रोंके निर्म्मल रथ शस्त्रोंके सहित खड़े हैं; इन सबपर सोनेकी ध्वजा लगी हैं; शस्त्रविद्या जाननेवाले सूत बैठे हैं; तुम लोग आलस्य-रहित होकर इन रथोंपर बैठकर गन्धर्व्वोंसे युद्ध करनेका सङ्कल्प करो। हे वृकोदर! सामान्य क्षत्रीय लोगभी शरण आये-की अपनी शक्तिके अनुसार रक्षा करते हैं, तब तुम क्यों नहीं रक्षा करते हो? ऐसा कौन उत्तम पुरुष होगा, जिसके आगे हाथ जोड़कर शत्रु शरण मांगे और वह उसकी रक्षा न करे? देवतासे वरदान पाना, राज्य पाना, पुत्रका उत्पन्न होना, और शत्रुको किसी दुःखसे छुड़ाना ये चारों आनन्द समान हैं। हे भीम! इससे अधिक आनन्द क्या होगा जो दुर्य्योधन तुम्हारी शरण आया है और तुम्हारे बाहुबलसे अपने जीनेकी इच्छा करता है? हे वीर यदि मैं यज्ञ न करता होता तो आपही युद्धको जाता; मुझे इसमें कुछ विचार नहीं है। हे भीम! तुम शान्तिहीसे दुर्य्योधनको छुड़ा लेना; यदि ऐसे न छुड़ा सको तो औरभी यत्न करना; यदि गन्धर्व्वराज शान्तिसे दुर्य्योधनको न छोड़े तो कोमल युद्ध करके छुड़ा लेना; यदि कोमल युद्धसेभी न छोड़े तो घोर युद्ध करके शत्रुओंको अपने वशमें कर लेना और दुर्य्योधनको छुड़ा लेना; हे वृकोदर! हमारी इतनाही उपदेश करनेकी शक्ति है, क्योंकि इस समय हमारे यज्ञका कार्य्य फैल रहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले महाराज युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुन अर्ज्जुनने ऐसा उत्तर दिया और कौरवोंके छुड़ानेकी प्रतिज्ञा की।

अर्ज्जुन बोले, यदि गन्धर्व्व लोग दुर्य्योधनको शान्तिसे नहीं छोड़ेंगे तो आज भूमि गन्धर्व्व-राजके रुधिरको पीयेगी। सत्यवादी अर्ज्जुनकी ऐसी प्रतिज्ञा सुनकर कौरव लोग बहुत प्रसन्न हुए।

२४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुन भीमसेन आदि बहुत प्रसन्न होकर उठे! पुरुषसिंह महारथ पाण्डवोंने सोनेसे खिंचे हुए विचित्र और अभेद्य कवचोंको पहना और दिव्य शस्त्रोंको धारण किया। अनन्तर वे सब लोग धनुष धारण करके ध्वजा सहित रथोंपर बैठे उस समय पाण्डवोंकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे जलती हुई अग्निकी। वे लोग उत्तम घोड़ों-वाले अच्छे सारथियोंसे युक्त रथोंपर बैठकर शीघ्र चले। उस समय महारथ पाण्डवोंको युद्ध करनेको चलते हुए देख कौरवोंकी सेना गर्ज्जने लगी और जीते हुए महारथ गन्धर्व्व लोगभी क्षण भरमें विडरके समान उस बनमें आये। चारों पाण्डवोंको युद्धमें आते हुए देखते ही गन्धर्व्व लोग लौटे। चारों वीर पाण्डवोंको लोकपालोंके समान उद्यत देखकर गन्धर्व्वोंने अपनी सेनाको उद्यत किया। बुद्धिमान युधिष्ठिरके वचनके अनुसार पाण्डवोंने

पहले कोमल युद्ध किया, परन्तु मूर्ख गन्धर्व्वोंने दुर्य्योधनको छोड़ना स्वीकार न किया। तब शत्रुनाशन अर्ज्जुनने महावीर गन्धर्वोंसे शान्तिपूर्व्वक कहा कि मेरे भाई राजा दुर्य्योधनको छोड़ दो। यशस्वी अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन गन्धर्व्व लोग हंसकर अर्ज्जुनसे कहने लगे, हे तात! हम केवल इन्द्रहीकी आज्ञा मानते हैं और उन्हीकी आज्ञासे सुखपूर्व्वक पृथ्वीपर घूमते हैं; हे भारत! वे हमको जैसी आज्ञा देते हैं वैसाही हम हम करते हैं; उनके सिवा और हमको आज्ञा देनेवाला पृथ्वीमें कोई नहीं है। गन्धर्वोंके ऐसे वचन सुन कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन फिर कहने लगे, गन्धर्व्व राजने जो नीच कर्म्म किया सो उनके योग्य नहीं था दूसरेकी स्त्रियांको पकड़ना, मनुष्योंके सङ्ग रहना यह उनको उचित नहीं; इस लिये तुम लोग महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञासे महापराक्रमी धृतराष्ट्रकेपुत्रोंको, और उनको स्त्रियोंको छोड़ दो। हे गन्धर्वो! यदि तुम शान्त भावसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नहीं छोड़ोगे, तो हम दुर्य्योधनको अपने बलसे छुड़ा लेंगे। ऐसा कहकर अर्ज्जुन गन्धर्व्वों पर तीक्ष्ण बाण छोड़ने लगे, बलवान गन्धर्व्व लोगभी पाण्डवोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे और पाण्डव लोगभी गन्धर्वोंके ऊपर बाण छोड़ने लगे, उस समय बलवान पाण्डवों और गन्धर्वोंका घोर युद्ध होने लगा।

२४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब सोनेकी माला पहिरे गन्धर्वोंने पाण्डवोंको चारों ओरसे घेरकर दिव्य बाण चलाना आरम्भ किया, उस युद्धमें एक ओर चार पाण्डव और एक ओर सहस्रों गन्धर्व्व थे; परन्तु जो चारही युद्ध करते रहे,यह बड़ी अद्भुत बात हुई। तब गन्धर्व्वोंने जैसे कर्ण और दुर्य्योधनके रथको घेरा था तैसेही बाणोंकी वर्षा करके पाण्डवोंको भी घेर लिया। जब पुरुषसिंह पाण्डवोंने सहस्रों गन्धर्व्वोंको अपनी ओर आते देखा, तब बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी। गन्धर्व्व लोग पाण्डवोंके बाणोंसे पीड़ित होकर उनके रथोंके पास न आसके क्रोधी अर्ज्जुनने क्रोधी गन्धर्व्वोंके ऊपर दिव्य अस्त्र चलाये। उन बाणोंके लगनेसे सहस्रों गन्धर्व्व लोग मर गये। अनन्तर बलवान अर्ज्जुनने अग्निबाण चलाया,उससे अनेक गन्धर्व्व लोग मर गये। इसी प्रकार महा धनुषधारी भीमनेभी अनेक गन्धर्वोंको तीक्ष्ण बाणोंसे मारा। गन्धर्व्व लोग महारथ पाण्डवोंके दिव्य बाणोंसे पीड़ित होकर दुर्य्योधनको सङ्ग लेकर आकाशको उड़ गये। जब अर्ज्जुनने गन्धर्वोंको आकाशको ओर उड़ते देखा, तो चारों ओरसे बाणोंके जालमें फांस लिया। वे लोग बाणोंके जालमें ऐसे फँस गये जैसे पक्षी लोग पिंजरेमें फँसते हैं। तब उन लोगोंने अर्ज्जुनके ऊपर गदा शक्ति, और खड्गोंकी वर्षा करी। परम शस्त्रोंके जाननेवाले अर्ज्जुन उस शस्त्रवृष्टिको काटकर अपने बाणोंसे गन्धर्वोंको सेनाको काटने लगे। उस समय आकाशसे गिरते हुए शिर, पैर, और हाथोंकी ऐसी वृष्टि हुई जैसे कहीं पत्थर बर्षते हों। उस समय गन्धर्व्वोंको बहुत भय उत्पन्न हुआ। भूमिमें खड़े हुए महात्मा अर्ज्जुनके बाणोंसे गन्धर्व्व लोग पीड़ित हो गए। तब उन्होंने आकाशसे अर्ज्जुनके ऊपर बाण बर्षाये। महातेजस्वी अर्ज्जुनने उनको बाण वर्षाको काटकर अपने बाणोंसे उनका शरीर काटना आरम्भ किया। कुरुनन्दन अर्ज्जुनने स्थूणाकर्ण इन्द्रजाल, सौर, आग्नेय, और सौम्य बाण चलाये। उस समय गन्धर्व्व लोग अर्ज्जुनके बाणोंसे ऐसे पीड़ित हुए जैसे इन्द्रके बाणोंसे दैत्य पीड़ित होते हैं। जो गन्धर्व्व आकाशको उड़ते थे उनको अर्ज्जुन अपने बाणोंसे रोकते थे, जो संग्

युद्ध करनेको आते थे, उनको भी अर्ज्जुन अपने बाणोंसे निवारण कर देते थे। गन्धर्वोंको अर्ज्जुनके बाणोंसे पीड़ित देखकर गन्धर्व्वराज चित्रसेन गदा लेकर अर्ज्जुनकी ओर दौड़े। जब अर्ज्जुनने उनको अपनी ओर आते देखा, तब उनकी लोहेकी गदाको अपने बाणसे काटकर सात टुकड़े कर दिये। जब चित्रसेन गन्धर्व्वने अपनी गदाको अर्ज्जुनके तेज बाणोंसे कटा हुआ देखा, तो मायासे अपने शरीरको छिपा लिया और अर्ज्जुनसे युद्ध करने लगे। तब वीर अर्ज्जुनने अपने दिव्य बाणोंसे गन्धर्व्वके दिव्य बाणोंको काट दिया। तब महात्मा अर्ज्जुनके बाणोंसे निवारण होकर गन्धर्व्वराज अपनी मायासे अन्तर्धान हो गया; तब अर्ज्जुनने अपने दिव्य आकाशगामी बाणोंसे बाण चलाते हुए गन्धर्व्व-राजको मारा। उस समय अर्ज्जुनने क्रोध करके अन्तर्हीन चित्रसेनके ऊपर शब्दभेदी बाण छोड़े। जब अर्ज्जुनका प्यारा मित्र चित्रसेन महात्मा अर्ज्जुनके बाणोंसे बहुत पीड़ित हुआ, तब अपने शरीरको प्रगट कर दिया और बोला, मैं तुम्हारा प्यारा सखा चित्रसेन हूं। कुलकुलासिंह अर्ज्जुनने अपने प्यारे मित्र चित्रसेनको युद्धमें दुर्ब्बल देखा तो अपने बाणको लौटा लिया; जब पाण्डवोंने देखा, कि अर्ज्जुनने अपने शस्त्रको रोक लिया, तब सबने अपने धनुष, बाण और घोड़ोंको रोक दिया; चित्रसेन, भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवने परस्पर प्रेम किया और रथोंहीमें बैठ रहे।

२४४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे-जय! तब महा तेजस्वी और धनुषधारी अर्ज्जुनने गन्धर्वोंके मध्यमें हंसकर चित्रसेनसे कहा, हे वीर! तुमने यह क्या बुरा कर्म्म किया जो कौरवोंको पकड़ लिया; तुमने स्त्रियोंके सहित दुर्य्योधनको पकड़ा। चित्रसेन बोला, हे अर्ज्जुन! हमने इस दुष्ट दुर्य्योधन और कर्णका यह अभिप्राय जाना था, कि यह आप लोगोंको वनवाससे दुःखित देखकर क्लेश देनेको आया है; इसने यह विचारा था, कि पाण्डव लोग दुःखी हैं, इस लिये हम उनको देखने चलें, और ये सब लोग यशस्विनी द्रौपदीको देखनेके लिये आये थे; इन सबके अभिप्रायको जान कर इन्द्रने मुझसे कहा, कि तुम द्वैत बनमें जाओ और मन्त्रियों सहित दर्य्योधनको पकड़ लाओ और युद्धमें भाइयोंके सहित अर्ज्जुनकी रक्षा करना, क्योंकि वह तुम्हारा प्यारा मित्र और प्रिय है; हे अर्ज्जुन! हम इन्द्रकी इस आज्ञाको मानकर यहां आये हैं; हम इन्द्रकी आज्ञासे इस दुष्टको बांधकर इन्द्रके यहां ले जायंगे।

अर्ज्जुन बोले, हे चित्रसेन! यदि तुम हमारा प्रिय करना चाहते हो तो महाराज धर्म्मराजकी आज्ञासे हमारे भाई दुर्य्योधनको छोड़ दो।

चित्रसेन बोले, यह महापापी, सदा असन्तापी है; यह सदा धर्म्मराज और द्रौपदीको निन्दा किया करता है; इस लिये यह छोड़नेके योग्य नहीं है; इसकी इच्छाओंको महाराज युधिष्ठिर नहीं जानते हैं; इस लिये हम सब धर्म्मराजके पास चलते हैं, वे जैसी आज्ञा देंगे वैसाही किया जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब वे सब महाराज युधिष्ठिरके पास गए और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया। महाराजने गन्धर्वोंका वचन सुन सब कौरवोंको छुड़ा दिया और गन्धर्वोंकी बहुत प्रशंसा करी।

महाराज बोले, तुम सब लोग बहुत बड़े बलवान और समर्थ हो; तुम लोगोंने हमारी प्रारब्धहोसे इस दुष्ट दुर्य्योधनको भाई और बान्धवोंके सहित नहीं मारा, तुम लोगोंने जो इस दुरात्माको छोड़ दिया, इससे हमारे कुलका निरादर नहीं हुआ; अब तुम लोगोंकी

जो इच्छा हो सो मांग लो, हम तुम लोगों-को देखकर बहुत प्रसन्न हुए; अपनी इच्छा-नुसार हमसे सब वस्तु प्राप्त करके यहांसे शीघ्र चले जाओ। महाराज बुद्धिमान धर्म्मराजकी आज्ञा पाकर गन्धर्व्व लोग बहुत प्रसन्न हुए और अप्सराओंको सङ्ग लेकर चले गये। युद्धमें कौरवोंने जिन गन्धर्वोंको मारा था, इन्द्रने उन सबपर अमृतकी वर्षा करी तवावे सब जी गये। पाण्डवोंने अपने भाइयोंको और रानियोंको छुड़ाकर बहुत सुख पाया। उस समय कुरु-कुलकी स्त्री और कुमारोंने महारथ पाण्ड-वोंकी बहुत प्रशंसा करी। पाण्डव लोग उस यज्ञमें ऐसे विराजमान हुए जैसे देहधारी अग्नि। अनन्तर गन्धर्व्वोंसे छुटे हुए दुर्य्योधनसे भाइयोंके सहित महाराजने शान्तिपूर्व्वक ऐसे वचन कहे, हे तात! ऐसा साहस फिर कभी मत करना, क्योंकि साहसी पुरुषको सुख नहीं होता; हे कुरुनन्दन! तुम्हारा कल्याण हो; अब तुम घरको जाओ; और मनमें किसी प्रकारका दुःख मत करना।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्म-राज युधिष्ठिरकी आज्ञा दुर्य्योधनने पाकर धर्म्मराजको प्रणाम किया और लज्जासे नीचा मुंह करके नगरको चला। उस समय दुर्य्यो-धनकी ऐसी दुर्द्दशा हो गई थी, मानो इसकी किसी इन्द्रीमें कुछ शक्ति नहीं है। जब दुर्य्यो-धन चला गया; तब वीर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर भाई और तपोधन ब्राह्मणोंसे पूजित होकर प्रसन्नता पूर्व्वक उस वनमें ऐसे विहार करने लगे जैसे देवतोंके सहित इन्द्र।

२४५ अध्याय समाप्त।

— ——

महाराज जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम! जान पड़ता है, कि जो दुरात्मा दुर्य्योधन सदा अभि-मानके वशमें रहता था, जो सदा अपनी प्रशंसा किया करता था जो सदा अभिमानी रहता था, जो अपने बल और उदारतासे पाण्डवोंको नीच मानता था, जो पापी दुर्य्योधन सदा अहङ्कारकी बात करता था, उसको जब शत्रुओंने जीतकर बांध लिया और फिर पाण्डवोंने छुड़ाया तब उसको हस्तिनापुरमें जाना बड़ा कठिन हुआ होगा। हे वैशम्पायन! लज्जा और शोकसे व्याकुल दुर्य्योधनने किस प्रकार नगरमें प्रवेश किया? इस कथाको विस्तार पूर्व्वक कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जब धृतराष्ट्र पुत्र दुर्य्योधन धर्म्मराजसे विदा हुए, तब लज्जासे नीचामुंह करके दुःखसे रोते हुए चले। उस समय राजा दुर्य्योधनकी बुद्धि शोकसे नष्ट हो गई थी, वे अपने निरादरको सोचते हुए, चतुरङ्गिणी सेनाके सहित नगरको चले। थोड़ी दूर जाकर घास और जल सहित स्थानमें डेरा किया। वहां हाथी घोड़े, रथ और पेदलोंको उचित स्थानमें ठहराकर, आप एक रमणीय सुन्दर स्थानमें अग्निके समान प्रकाशमान पलङ्गपर बैठ गये। उस समय दुर्य्योधनकी शोभा ऐसी हो रही थी, जैसे राहुसे ग्रहण किये हुए चन्द्रमाकी। उसी समय कर्ण आकर ऐसा बोले, हे गान्धारीपुत्र! तुम प्रारब्धहीसे जीते हो, प्रारब्धहीसे हम फेर तुमसे मिले हैं, प्रारब्धहीसे तुमने कामरूपी गन्धर्वोंको युद्धमें जीता। हे कुरुनन्दन! युद्धमें विजय करनेवाले तुम्हारे महारथ भाइयोंको हम प्रारब्धहीसे देखते हैं; हम तुम्हारे साम-नेही गन्धर्वोंके युद्धमें भाग आये थे; हम भागती हुई सेनाको स्थिर नहीं कर सके; मेरे शरीरमें बाणोंके बहुत घाव हो गए थे, इस लिये हम युद्धसे भाग गए थे, हे भारत! यह बहुत आश्चर्य्यकी बात है, कि जो आप लोग स्त्री, सेना और वाहनोंके सहित उस अमानुष युद्धसे बच आए; आपके शरीरमें कहीं घाव-भी नहीं हुआ; हे महाराज! आपने अपने

भाइयोंके सहित इस युद्धमें जो कर्म्म किया, इसका करनेवाला इस लोकमें और कोई नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके ऐसे बचन सुन राजा दुर्य्योधन रोकर कहने लगे।

२४६ अध्याय समाप्त।

राजा दुर्य्योधन बोले,हे राधापुत्र ! तुम इस वृत्तान्तको नहीं जानते हो; इस लिये हम तुम्हारे वचनका निरादर नहीं करते हैं, क्योंकि तुम यह जानते हो कि गन्धर्वोंको हमने अपने बलसे जीता है। हे महाबाहो ! हमारे भाइयोंने बहुत समय तब गन्धर्वोंसे युद्ध किया, परन्तु जब गन्धर्वोंने मायायुद्ध किया और वे लोग आकाशको चले गये तब हम लोग उनके सङ्ग युद्ध नहीं कर सके; तब हमलोग हार गये और उन्होंने हमको बांध लिया, हमारे दास, पुत्र स्त्री, मन्त्री, सेना और वाहन सब पकड़े गए; उस समय हम लोग बहुत दुःखित हुए और गन्धर्व्व लोग हमको लेकर आकाशको उड़ गए; उसी समय हमारे महारथ मन्त्रियोंने युद्ध करनेवाले पाण्डवोंसे दीन होकर कहा किहे पाण्डवो ! ये धृतराष्ट्रके पुत्र महाराज दर्य्योधनको भाई, मन्त्री, और स्त्रियोंके सहित पकड़कर गन्धर्व्व लोग आकाश को लिये जाते हैं; आप लोगोंका कल्याण हो, स्त्रियोंके सहित राजाको छुड़ाइये; देखो इन गन्धर्वोंने कौरवोंकी सब स्त्रियोंको पकड़ लिया है, इनके छुड़ानेमें आप लोग कुछ विचार मत कीजिये। मन्त्रियोंके ऐसे वचन सुन धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने अपने भाइयोंको प्रसन्न करके हमारे छुड़ानेकी आज्ञा दी, अनन्तर पुरुषसिंह पाण्डव लोग उस स्थानपर आकर शान्तिपूर्व्वक ऐसा बोले, यद्यपि ये लोग महारथ और युद्धमें समर्थ थे, तो भी उन लोगोंने शान्तिपूर्वक गंधर्वोंसे हम लोगोको मांगा। जब गंधर्वोंने हम लगोंको न छोड़ा तो अर्जुन, भीम, नकुल, और बलवान सहदेवने गन्धर्वोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी; उस समय उन गन्धर्व्वोंने युद्धको छोड़ दिया और प्रसन्नता सहित हम लोगोंको लेकर स्वर्गको चले; तब हम लोग बहुत दूर नहीं गये; उस समय हम लोगोंने देखा कि गन्धर्व्व लोग पाण्डवोंके बाणोंमें फंस गये और अर्जुन दिव्य बाण चला रहे हैं; जब गन्धर्वोंने सब दिशाओंको अर्जुनके तीक्ष्ण बाणोंसे पूरित देखा तब प्रगट हो गया। अनन्तर चित्रसेन और अर्जुन मिले और एक दूसरेसे कुशल पूंछने लगे; तब लोगोंने युद्धके वस्त्र उतार लिये और एक हो गए; अनन्तर अर्जुनने चित्रसेनको और चित्रसेनने अर्जुनकी पूजा करी।

२४७ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, चित्रसेनसे मिलकर शत्रुनाशन अर्जुनने हंसकर वीरोंके समान ऐसे बचन कहे, हे वीर गन्धर्व्वश्रेष्ठ ! आप हमारे भाइयोंको छोड़ दीजिये, क्योंकि पाण्डवोंके जीते हुए, इन लोगोंकी ऐसी दुर्दशा नहीं होनी चाहिये, हे कर्ण ! महावीर अर्जुनके ऐसे बचन सुन चित्रसेन गन्धर्व्वने वे सब बातें कह सुनाई जो हम लोगोंने चलते समय विचारी थी; चित्रसेन गन्धर्व्वने कहा कि ये तुम लोगोंको दुःखसे व्याकुल देखनेको आये थे; हे कर्ण ! जिस समय गन्धर्व्वने यह सब समाचार कहा उस समय मेरी लज्जासे यह दशा हुई कि मैं पृथ्वीमें घुस जाऊं; अनन्तर पाण्डव और गन्धर्व्व युधिष्ठिरके पास आये और हमारी सब बातोंको उनसे निवेदन किया; मैं स्त्रियोंके आगे दीन भावसे शत्रुओंके वशमें हुआ, इससे बढ़के और अधिक दुःख मुझे क्या होगा, जो मैं युधिष्ठिरके आगे बांधकर खड़ा किया गया ! जिनका मैंने सदा

निरादर किया था, जिनका मैं सदासे शत्रु हूं, उन्होंहीने मुझ दुर्बुद्धिको शत्रुओंके हाथसे छुड़ाया, उन्होंहीने मुझको जीवदान दिया; हे वीर! यदि मैं उस युद्धमें मर जाता तो बहुत अच्छा होता, परन्तु यह निरादर बहुत बुरा हुआ; यदि मुझको गन्धर्व्व लोग युद्धमें मार डालते, तो पृथ्वीमें मेरा यश बहुत फैलता और इन्द्र लोकमें अक्षय सुख प्राप्त होता; हे पुरुषसिंह! अब हमने जो निश्चय किया है सो तुम सुनो; अब हम इस स्थान पर रहकर व्रत करेंगे; तुम लोग घरको जाओ; हमारे सब भाई लोग भी हस्तिनापुरको जायं; कर्णादिक जो हमारे मित्र और बान्धव हैं, वे सब दुःशासनको अगाड़ी करके हस्तिनापुरको जायं; मैं शत्रुओंसे निरादर पाकर हस्तिनापुरको नहीं जाऊंगा; मैं अपने मित्रोंको प्रसन्न और शत्रुओंको दुःखी करता था सो अब शत्रुओंको सुख और मित्रोंको दुःख देनेवाला हो गया; मैं हस्तिनापुरमें जाकर राजासे क्या कहूंगा? भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य; अश्वत्थामा, विदुर, सञ्जय, बाल्हीक, भूरिश्रवा तथा और जो वृद्ध ब्राह्मण हैं, एवम योगी तथा मूर्ख और महात्मा लोग जो हैं वे सब हमको देखकर क्या कहेंगे? और मैं उन्हें क्या उत्तर दूंगा? जो हम पहले शत्रुओंके सिर पर रहे हैं और उनकी छातीपर अपना पराक्रम प्रगट किया है, और अब अपनेही दोषसे नष्ट हो गये, अब उन लोगोंसे जाकर हम क्या कहेंगे? दुष्ट लोग। लक्ष्मी, विद्या और ऐश्वर्य्यको पाकर बहुत दिन तक सुख नहीं भोगते; इसीसे हम अभिमानमें भर गए थे, हमने यह बहुत बुरा कर्म्म किया; यह कर्म्म हमारे योग्य नहीं था इसीसे अब हमको महा संशय उत्पन्न हुआ है, इस कर्म्मको हमनेही अपनी मूर्खता और दुर्बुद्धिसे किया है; इस लिये अब यहीं अन्न, जल छोड़कर प्राणत्याग कर देंगे, ऐसा कौन बुद्धिमान होगा जो शत्रुओंसे जीवदान पाकर जीता रहे? हम परम अभिमानी और शक्तिसे हीन हैं, इसी लिये शत्रुलोग हमको हंसते हैं; महाबलवान पाण्डव लोगोंने निरादरके सहित हमारी ओर देखा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर महाराज दुर्य्योधनने दुःशासनसे कहा कि हे दुःशासन। हे भारत! तुम हमारे वचनोंको सुनो; अब हम तुम्हारा अभिषेक करते हैं; तुम आजसे राजा हो जाओ तुम कर्ण और शकुनीको अपना सहायक बनाकर समस्त पृथ्वीका पालन करो। हे दुःशासन! तुम अपने भाइयोंका इस प्रकार पालन करना जैसे इन्द्र मरुतोंको पालते हैं, तुम्हारे भाई लोगभी तुम्हारी ऐसीही सेवा करेंगे जैसे देवता लोग इन्द्रकी, तुम सदा सावधान होकर ब्राह्मणोंकी सेवा करना, बन्धु और मित्रोंकी सदा पालना अपनी जातिके ऊपर ऐसीही दृष्टि रखना जैसे विष्णु देवतोंके उपर रखते हैं, बूढ़ोंकी अच्छे प्रकार सेवा करना; अब तुम मित्रोंको प्रसन्न करो और शत्रुओंको दुःख देकर पृथ्वीका पालन करो। ऐसा कहकर दुःशासनको अपने हृदयसे लगाया और जानेकी आज्ञा दी, दुर्य्योधनके ऐसे वचन सुन दुःशासन बहुत दीन हुए और आंखोंमें आंसू भरकर रोते हुए हाथ जोड़कर दुर्य्योधनके चरणपर गिर पड़े और बड़े भाईसे बोले, कि आप प्रसन्न हूजिये। ऐसा कहकर पृथ्वीपर गिर गए फिर अपनी आंसुओंसे दुर्य्योधनके चरणोंको धोते हुए दुःशासन बोले, कि जो आप कहते हैं, सो आपके कहनेके अनुसार नहीं होगा; चाहे पृथ्वी फट जाय स्वर्गके टुकड़े हो जायं, सूर्य्य, शीतल और चन्द्रमा उष्ण हो जाय, चाहे वायु अपनी गतिको छोड़ दे, चाहे हिमाचल चलने लगे, चाहे समुद्रका पानी सूख जाय, चाहे अग्नि ठंडी हो जाय, परन्तु मैं

आपके विना राज्य नहीं करूंगा। फिर वार वार दुःशासन कहने लगे कि आप प्रसन्न हूजिये, आपही सौ वर्ष तक हमारे राजा रहिये। ऐसा कह कर दुःशासन ऊंचे स्वरसे रोने और अपने बड़े भाईके चरणोंपर गिर पड़े इस प्रकार जहां दुर्य्योधन और दुःशासन रोते थे, तहा दुःखसे भरे कर्ण आए और ऐसा कहने लगे, हे कौरवो! तुम लोग सामान्य पुरुषके समान क्यों रो रहे हो? तुम लोगोंकी क्या मूर्खता प्रगट हुई है? सोच करनेवाले पुरुषका शोक नष्ट नहीं होता, जब सोचसे शोक नष्ट नहीं होता तब सोच करनेसे क्या लाभ है? आपलोग सोचमें क्या सामर्थ देखते हैं? आप लोग स्थिर हूजिये, शोक करके शत्रुओंको प्रसन्न मत कीजिये, हे राजन्! पाण्डवोंने जो आप लोगोंको शत्रुवोंके हाथसे छुड़ाया सो ऐसा करना उनको उचितही था, क्योंकि राज्यमें रहनेवालोंको राजाकी सेवा करनी ही चाहिये; आप उनकी सदा रक्षा करते हैं; इसीसे वे लोग सुखपूर्व्वक बनमें बसते हैं, इस विषयमें आपको साधारण पुरुषोंके समान सोच नहीं करना चाहिये; तुम्हारा व्रत देखकर तुम्हारे भाई लोग दुःख सह रहे हैं। हे राजन्! आपका कल्याण हो उठकर अपने भाइयोंको प्रसन्न करो।

२४८ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, हे राजन्! आपके साहस छोड़नेका कारण हमको नहीं जान पड़ता; इसमें क्या आश्चर्य्य हुआ, जो पाण्डवोंने आपको छुड़ा दिया? हे महाराज! राजा लोग तो शत्रुवोंके वशमें होही जाते हैं, तब सेना और प्रजाको उनको छुड़ानाही धर्म्म है; हे शत्रुनाशन! प्रजाका परम धर्म्म है कि राजाके जानते अथवा विना जाने राजाका प्रियकार्य्य करें; प्रधान पुरुष लोग प्रायः शत्रुवोंकी सेनाको घबड़ा देते हैं, फिर आप युद्धोंमें पकड़े जाते हैं, और सेनावाले लोग फिर उनको छुड़ा लेते हैं; जो लोग सेनाके हैं और जो लोग राज्यमें वसते हैं; उन सबको मिलकर राजाका कल्याण करना चाहिये; यदि आपके राज्यमें रहनेवाले पाण्डवोंने अपनी इच्छासे आपको छुड़ा दिया तो उसमें दुःख माननेकी कौनसी बात है? हे राजन्! यह बहुत दुःखकी बात होतो जो राजोंमें श्रेष्ठ आप अपनी सेनाके सहित जाते होते और पाण्डव लोग आपके ऊपर चढ़ाई करते। पाण्डव लोग बड़े शूर वीर बलवान और युद्धमें स्थिर रहनेवाले हैं, वे लोग आपके सहायक हैं, क्योंकि उनके सब रत्नोंका आप भोग करते हैं, देखिये पाण्डव लोग तो वनमें जन्तुवोंके सङ्ग मूर्खसे रहते हैं। हे राजन्! आपका कल्याण हो, अब आप उठनेमें विलम्ब मत करो, राज्यमें रहनेवाले पुरुषोंको अवश्यही राजाकी सेवा करनी चाहिये; हे शत्रुनाशन! हे राजेन्द्र! यदि आप हमारे वाक्योंको न मानेंगे तो हम आपके चरणोंकी सेवा करते हुए, आपके सङ्गही रहेंगे, हे पुरुषसिंह! हे राजेन्द्र! हम आपके विना नहीं जी सकते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब राजा दुर्य्योधनसे कर्णने ऐसे वचन कहे, तब भी महाराजने उठनेकी इच्छा न करी और अपने मनमें विचारा कि अब हम स्वर्गहीको जायंगे।

२४९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाक्रोधी शत्रुनाशन महाराज दुर्य्योधनको इस प्रकार वृत्तिमें बैठे हुए देख सुबलपुत्र शकुनी शान्तिपूर्व्वक कहने लगे, हे कौरव! कर्णने जो कुछ आपसे कहा सो आपने अच्छो प्रकार सुना; आप हमारी उपार्ज्जित करी हुई लक्ष्मीको मूर्खतासे क्यों छोड़ते हैं? हे नरनाथ! हम

जानते हैं कि आप मूर्खतासे अपना प्राण परित्याग करते हैं और हमको यहभी जान पड़ता है, कि आपने बूढ़ोंकी सेवा नहीं करी; जो उपस्थित सुख और दुःखको नहीं रोकता उसका उसी प्रकारसे नाश हो जाता है जैसे मिट्टीका कच्चा बर्त्तन पानीमें गल जाता है। हे राजेन्द्र! भीत, नपुंसक, आलसी, असावधान, व्यसनी, और दुष्ट राजाको प्रजा नहीं मानती आप तो पाण्डवोंका सत्कार करते हैं, इस लिये ऐसे समयमें शोक अनुचित है, क्योंकि पाण्डवोंने अपने धर्म्मके अनुसार ही काम किया है; जहां आपको प्रसन्न होना चाहिये तहां शोक करते हैं, यह बहुत बिपरीत बात है; हे महाराज! आप प्रसन्न हूजिये; शरीरको वृथा नष्ट न कीजिये; अपने पुण्यका स्मरण कीजिये पाण्डवोंका राज्य उनको देकर यश और धर्म्मको प्राप्त कीजिये; ऐसा करनेसे आपको सब कोई कृतज्ञ कहेंगे और पाण्डवोंसे सोभ्रातृ भी बना रहेगा, पाण्डवोंके पितामहका राज्य उनको लौटानेसे जगतमें आपकी कीर्त्ति स्थिर रहेगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शकुनीके ऐसे बचन सुनकर और वीर दुःशासनको चरणोंमें पड़ा हुआ देखकर राजा दुर्योधनने शत्रुनाशन दुःशासनको अपने सुन्दर हाथोंसे उठाकर उनका माथा प्रेमसे संघा, कर्ण और शकुनीके बचन सुनकर राजा दुर्य्योधनको बहुत निराशा हुई और लज्जासे व्याकुल हो गए; अनन्तर क्रोधमें भरके कहने लगे कि मुझे धर्म्म धन, सुख, ऐश्वर्य्य और राज्यसे तथा अनेक प्रकारके भोगोंसे कुछ प्रयोजन नहीं है, तुम लोग हमें दुःख मत दो, तुम लोग घरको चले जाओ। मैंने अपनी बुद्धिको स्थिर करके ये निश्चय किया है, कि अब प्राण छोड़ंगा, अब तुम सब लोग हस्तिनापुरको चले जाओ और हमारे बूढ़ोंकी सेवा करना। राजाका ऐसा बचन सुन के लोग शत्रुनाशन दुर्य्योधनसे कहने लगे कि हे राजेन्द्र! हे भारत! आपको छोड़कर हम लोग नगरमें कैसे प्रवेश करेंगे? इस लिये आपकी जो दशा होगी सोही हम सबकी भी होगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज दुर्य्योधन इस प्रकार मन्त्री, भाई, मित्र और बान्धवोंके अनेक प्रकारके बचन सुनकरभी अपने निश्चयसे चलायमान न हुए। धृतराष्ट्रपुत्र राजसिंह महाराज दुर्य्योधनने पृथ्वीमें कुशाका आसन बिछाया और जल आदिसे पवित्र होकर उसपर बैठे। उस समय महाराजने कुशके आसनपर बैठकर काले हरिणका चमड़ा ओढ़ लिया और अपने बचनको अपने वशमें किया, अर्थात् मौन हो गये। उस समय महाराजने केवल स्वर्ग जानेहीका ध्यान किया। अपने मनको वशमें करके बाहरकी सब क्रियाओंको त्याग दिया। महाराजका ऐसा निश्चय देख देवता, दानव, पातालमें रहनेवाले घोर राक्षस और जिनको देवतोंने पहिले जीता था उन सबने अपने पक्षका नाश बिचारकर अथर्व-वेदकी रीतिसे यज्ञ करना आरम्भ किया। वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंने बृहस्पति और शुक्रके कहे हुए, मन्त्रोंसे अथर्ववेद और उपनिषदोंके अनुसार मन्त्र जपना और यज्ञ करना आरम्भ किया। वेद और वेदाङ्गके जाननेवाले उत्तम ब्रतधारी ब्राह्मण लोग अग्निमें खीर और दूधकी आहुति देने लगे। हे राजन्! इस प्रकार आहुति देनेके समय यज्ञकुण्डसे एक स्त्री उत्पन्न हुई और कहने लगी कि हम क्या करें? तब सब दैत्य प्रसन्न होकर उससे बोले, कि ब्रतमें बैठे हुए धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधन-को हमारे पास ले आवो; वह स्त्री उनके बचन को स्वीकार करके वहांसे चली और क्षण भरमें राजा दुर्य्योधनके पास पहुंची और दुर्य्योधनको लेकर पुनः दानवोंके पास गई,

दुर्य्योधनको देख सब दानव लोग प्रसन्न हुए और अभिमान सहित करने लगे ।

२५० अध्याय समाप्त ।

दानव लोग बोले, हे राजेन्द्र ! भरतकुल-श्रेष्ठ दुर्य्योधन ! आप शूर वीर और महात्मा पुरुषोंसे युक्त होकरभी अन्न जलका परित्याग क्यों करते हैं ? जो पुरुष अपने शरीरका नाश करता है, वह नरकगामी होता है, और पृथ्वीमें उसकी कीर्त्तिभी नष्ट हो जातीहै, आपके समान बुद्धिमान लोग विरुद्ध, पापमय और सर्व्वनाशक कार्य्योंको नहीं करते हैं; हे राजन् ! आप इस धर्म्म अर्थ और सुखको नाश करनेवाली बुद्धिको त्याग दीजिये, इससे आपका प्रताप और यश नाश होजायगा और शत्रुवोंको सुख होगा; हे प्रभो ! अब आप यथार्थ वार्त्ताको सुनिये हम आपके शरीरकी उत्पत्ति-का वर्णन करते हैं । हे राजन् ! पहिले, समयमें हम लोगोंने शिवकी तपस्या करी थी; तब आपको प्राप्त किया था; हे राजेन्द्र ! आपका जो नाभीके ऊपरका शरीर है,सो वज्र-से बना हुआ है; हे पापरहित ! आपका जो नीचेका शरीर है, सो भी अस्त्र और शस्त्रोंसे नहीं कट सकता उसको देवोंने फूलोंसे बनाया है। इसीसे वह स्त्रियोंको बहुत प्यारा है, हे नृपोत्तम ! इस प्रकार आपका शरीर ईश्वर और देवोंने बनाया है, हे राजशार्दूल ! आप देवता हैं मनुष्य नहीं । महा बलवान भगदत्त आदि क्षत्री लोग दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले और महा शूरवीर हैं; वे सब आपके शत्रु-ओंका नाश करेंगे, आप कुछ सन्देह न कीजिये; आपको कुछ भय नहीं है , आपकी सहायताके लिये अनेक दानवोंने पृथ्वीमें अव-तार लिया है; भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपा-चार्य्यके शरीरमें अनेक दानव लोग प्रवेश करेंगे; वे लोग उनके वशमें होकर लज्जा और मोहको छोड़कर आपके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे; हे कुरुकुल श्रेष्ठ ! उस युद्धमें कोई पुत्र भाई, पिता, बान्धव, शिष्य, जाति, बालक और बूढ़ोंको नहीं मानेंगे । सब लोग परस्पर घोर युद्ध करेंगे; वे पुरुषसिंह क्षत्री लोग किसीका मोह नहीं करेंगे, और परवश होकर दूरसे युद्ध करेंगे; उस घोर युद्धमें वीर लोग प्रसन्नभी होंगे, और दुःखी भी होंगे; सब लोग प्रारब्धके वशमें होकर विज्ञानसे रहित हो जायंगे; सब लोग परस्पर कहेंगे कि तुम हमसे जीते नहीं वचोगे; वे सब वीर शस्त्र, अस्त्र, धारण करके बलपूर्व्वक अपनी अपनी श्लाघा करेंगे और जगतका नाश करेंगे, महात्मा पांचो पाण्डवभी घोर युद्ध करेंगे, और उन सबका नाश करेंगे; आज कल्ह अनेक दैत्य और राक्षसोंने क्षत्री जातिमें अवतार लिया है, वे लोग अत्यन्त पराक्रम करके आपके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे, हे पार्थिव ! वे लोग गदा मूशल और बड़े बड़े शस्त्रोंसे लड़ेंगे । हे वीर ! आपके अन्तःकरणमें जो अर्ज्जुनका भय है, हमने उस अर्ज्जुनके मारनेका भी उपाय किया है; जो नरकासुर नामक राक्षस मारा गया था, उसीने अब कर्णका अवतार लिया है, उसी बैरको स्मरण करके अर्ज्जुन और कृष्ण उससे युद्ध करेंगे; समर्थ कर्णभी अपने बलसे अर्ज्जुन-को युद्धमें जीतेगा; कर्ण महारथ और शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ है, इससे सब शत्रुवोंको जीतेगा; इसीको जानकर वज्रधारी इन्द्र अर्ज्जुनकी रक्षा करनेके लिये कर्णसे कुण्डल कवच लेलेंगे; इसी लिये हमलोगोंने भी संसप्तक नामक सहस्रों दैत्य और राक्षसोंको इस कार्य्यपर नियुक्त किया है; आप विचार न करें वे लोग अर्ज्जुनको युद्धमें मारेंगे, हे राजन् ! आप शत्रुओंको मारकर इस पृथ्वीका राज्य करेंगे, हे राजन् ! आप कुछ दुःख मत कीजिये, क्योंकि आप दुःखके योग्य नहीं हैं,

हे कौरव ! आप यदि मर जायगे, तो हमारा बल नष्ट हो जायगा, हे वीर आप चले जाइये ; ऐसी बुद्धि फिर कभी मत करना, आप सदा हमारो गति हैं। इसी प्रकार देवता लोग पाण्डवोंको मानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर दानवोंने राजसिंह दुर्य्योधनको अपने हृदयसे लगा कर बहुत समझाया और पुत्रके समान उनका सम्मान किया। हे राजेन्द्र ! उन्होंने मीठे बचन कहकर दुर्य्योधनकी बुद्धिको स्थिर कर दिया और जानेकी आज्ञा दई, तथा विजय होनेका आशीर्व्वाद दिया। फिर उस स्त्रीने महाराज दुर्य्योधदको उसी स्थानको पहुंचा दिया जहां वे अन्न और जलको छोड़ कर बैठे थे। राजाको वहां पर पहुंचाकर और उनकी आज्ञा लेकर वह चली गई। उस स्त्रीके चले जानेके पश्चात राजा दुर्य्योधनने इन सब बातोंको स्वप्नके समान जाना और अपने मनमें निश्चय किया कि हम पाण्डवोंको युद्धमें जीतेंगे। महाराज दुर्य्योधनने कर्ण और संसप्तकगणको पाण्डवोंके मारनेमें समर्थ और अपना मित्र समझा। इस प्रकार धृतराष्ट्रपुत्र दुर्बुद्धि दुर्य्योधनने अपने मनमें दृढ़ आशा करली। दुर्य्योधनने जाना कि कर्ण नरकासुरका अवतार है, यह अवश्य पाण्डवोंको जीतेगा और यह अर्ज्जुनके मारनेके लिये दुष्ट बुद्धि करता रहता है। महावीर संसप्तक राक्षसभी रज और तमगुणका आश्रय करके भीष्म द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य आदिके शरीरमें प्रवेश करेंगे ; तब उन सबकी बुद्धि पलट जायगी और वे लोग अर्ज्जुनके मारनेका उपाय करेंगे ; वे लोग जैसा हमसे प्रेम करते हैं वैसा पाण्डवोंसे नहीं करते। हे राजन् दुर्य्योधनने इस सब वृत्तान्तको किसीसे नहीं कहा। प्रातःकाल होतेही विकर्त्तनके पुत्रने हाथ जोड़ कर महाराज दुर्य्योधनको प्रसन्न करके उनसे हेतुके सहित ऐसे वचन कहे, कि कोई मरकर शत्रुवोंको नहीं जीतता और जीता हुआ पुरुष अनेक सुख देखता है ; हे कौरव ! मरे हुए पुरुषको सुख और जय कहांसे प्राप्त होंगे ? महाबाहु कर्णने राजा दुर्य्योधनको अपने हाथसे पकड़कर कहा कि हे राजन् ! यह समय शोक भय और मरनेका नहीं है, अब आप उठिये ; क्यों सोते हैं ? और क्यों शोच करते हैं ? आप तो अपने बलसे शत्रुवोंको दुःख देनेवाले हैं ; फिर मरनेकी इच्छा क्यों करते हैं ? यदि आपको युद्धमें अर्ज्जुनका बल देखकर कुछ भय हुवा होता हम आपसे सत्य कहते हैं कि हम युद्धमें अर्ज्जुनको मारेंगे, जब तेरह वर्ष बीत जायंगे, और हम धर्म्मपूर्व्वक शस्त्रोंको ग्रहण करेंगे, तब सब पाण्डवोंको आपके वशमें कर देंगे। कर्णके ऐसे वचन सुन तथा दैत्योंका स्मरणकर और सब लोगोंको प्रणाम करते देख, महाराज दुर्य्योधन उठे। उन्होंने दैत्योंके वचनसे अपने मनमें स्थिर किया कि अब हम पाण्डवोंको अवश्य जीत लेंगे। ऐसा विचार कर राजाने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दई। रथ सारथी, घोड़े और पैदलोंसे भरी हुई वह सेना शोभित हुई। श्वेत छत्र, चमर, पताका, रथ, हाथी, घोड़े और पैदलोंसे वह सेना शोभित होने लगी। उस समय सेनाकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे शरद ऋतुमें मेघ रहित आकाशकी। ब्राह्मण लोग उनको आशीर्व्वाद देने लगे। उस समय धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधन चक्रवर्त्ती महाराज युधिष्ठिरके समान शोभित हुए। राजा दुर्य्योधन लक्ष्मीसे परम प्रकाशमान थे, स्तुति करनेवाले लोगोंसे माला और प्रणामको ग्रहण करते हुए चले। हे राजेन्द्र ! राजा दुर्य्योधनके सङ्ग कर्ण और जुवारी शकुनी चले। राजसिंह दुर्य्योधनके पीछे कुरुकुलश्रेष्ठ दुःशासनादि सो भाई ; भूरिश्रवा सोमदत्त, और

महाराज वाह्लिक आदि कौरव लोग हाथी, रथ, और उत्तम घोड़ोंपर चढ़कर चले। हे राजेन्द्र! वे लोग थोड़ेही समयमें हस्तिना-पुरमें पहुंचे।

२५१ अध्याय समाप्त।

———

महाराज जनमेजय बोले, हे दिजसत्तम! जब महात्मा पाण्डवोंने दुर्य्योधनको छुड़ा दिया और वे लोग बनमें रहने लगे, तब महा धनुष-धारी धृतराष्ट्र पुत्र, विकर्त्तनपुत्र कर्ण, महा बलवान शकुनी, भीष्म द्रोणाचार्य्य और कृपा-चार्य्यने क्या किया? सो से कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जब पाण्डवोंने दुर्य्योधनको छुड़ाया और दुर्य्योधन पाण्डवोंसे विदा होकर हस्तिनापुर पहुचे, उस समय महाराज दुर्य्योधनसे भीष्मने कहा हे तात! जब तुम तपोवनको जाते थे; तब हो हमने कहा था कि तुम्हारा बनको जाना अच्छा नहीं; परन्तु तुमने नहीं माना; हे वीर! इसीसे तुमको शत्रुवोंने अपने बलसे पकड़ लिया; उस समय धर्म्मात्मा पाण्डवोंने ही तुमको छुड़ाया; क्या तुमको इससे लज्जा नहीं हुई? हे गान्धारीपुत्र! हे पृथ्वीनाथ! देखो, तुम्हारे देखतेही कर्ण गन्धर्वोंके युद्धमेंसे हरकर भाग गया; हे राजपुत्र! देखो, जब तुम सेनाके सहित रोते थे, तबही महात्मा पाण्डवोंका पराक्रम तुमने देखा और दुर्बुद्धि सूतपुत्र कर्णका बलभी देख लिया। हे नृप-त्तम! हे धर्म्मप्रिय! धनुर्वेद और तेजमें कर्ण पाण्डवोंके चरणके समानभी नहीं है, हे सन्धिजाननवालोंमें श्रेष्ठ! इस लिये हम महात्मा पाण्डवोंसे सन्धि करना अच्छा समझते हैं; सन्धि करनेसे हमारे कुलकी वृद्धि होगी। हे महाराज! दुर्य्योधन भीष्मके ऐसे वचन सुन हंसकर वहांसे चल दिये और शकु-नीने भी वहांसे चल दिया; जब राजा दुर्य्यो-धन वहांसे चले, तब महाबलवान कर्ण और दुःशासन आदि उठ गये। जब भीष्मने उनको जाते देखा तो वे भी लज्जित होकर वहांसे अपने घरको चले गये। जब भीष्म चले गये, तो राजा दुर्य्योधन मन्त्रियोंके सहित वहीं आकर सम्मति करने लगे। दुर्य्योधन बोले, अब हम लोगोंका कल्याण कैसे होगा? और हमको क्या करना उचित है? हमको किस प्रकार पुण्य लाभ होगा, इसका विचार करना चाहिये। कर्ण बोले; हे दुर्य्योधन! हे कौरव! तुम हमारे बचनोंको सुनो, भीष्म सदा ही हमारो निन्दा और पाण्डवोंको प्रशंसा किया करते हैं; हे नरनाथ! वे तुम्हारे परम द्वेषी हैं; इस लिये मेरा भी द्वेष करते हैं, देखो तुम्हारे आगेही हमको धिक्कार दे रहे थे, हे भारत! शत्रुनाशन! भीष्मने जो तुम्हारे आगे मुझे वचन कहे हैं उनको अब मैं क्षमा नहीं करूंगा; हे राजेन्द्र!, मैं पाण्डवोंका यश और तुम्हारी निन्दा नहीं सुन सकता हूं, इस लिये दास सेना और वाहनोंके सहित विजय करनेको जाता हूं; मैं बन पर्व्वत और महा बनोंके सहित सब पृथ्वीको जीतूंगा, हे राजन्! जिस पृथ्वीको महाबलवान चार पाण्डवोंने जीता था उसको मैं एकलाही जीतूंगा। कुरुकुलाधम, दुर्बुद्धि भीष्म हमारे बलको देखे; जो भीष्म प्रशंसा करनेके अयोग्य पाण्डवोंकी प्रशंसा और निन्दाके अयोग्य हमारी निन्दा करता है वह हमारे बलको देखे और अपनी निन्दा करे। हे राजन्! हम शस्त्रकी सपथ करके सत्य कहते हैं कि आपकी अवश्य विजय होगी। ऐसा सुन महाराज दुर्य्योधनने प्रेम पूर्व्वक कर्णसे कहा कि तुमको धन्य है, क्योंकि तुम महाबली होकरभी हमारा हित चाहते हो, आज हमारा जन्म धन्य हुआ; हे वीर! यदि तुम सब शत्रुवोंको जीतना चाहते हो तो तुम्हारा कल्याण हो, तुम शीघ्र जाओ। बुद्धिमान

दुर्य्योधनके ऐसे वचन सुन कर्णने आज्ञा दी कि यात्राके लिये सब प्रबन्ध किये जायं। उत्तम मुहूर्त शुभ तिथि, शुभदिन और शुभनक्षत्रमें महाधनुषधारी कर्ण विजय करनेको चले। उस समय ब्राह्मण लोग उनको आशीर्वाद देने लगे, कर्णने उत्तम जलमें स्नान किया और ब्राह्मणोंका आशीर्व्वाद सुनकर रथमें बैठे। उनके रथके शब्दसे चर और अचरके सहित तीनों लोक निनादित होगए।

२५२ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब महाधनुषधारी कर्ण सेनाके सहित वहांसे चलकर द्रुपदपुरमें पहुंचे और उस नगरको चारों ओरसे घेर लिया। तब वहां घोर युद्ध करके उन सब वीरोंको अपने वशमें करके सोना चांदी और अनेक प्रकारके रत्न लिये। हे राजेन्द्र! राजा द्रुपदको वशमें करके उनके पासके सब राजोंको जीत लिया और सबसे कर ले लिया। उसके पश्चात् उत्तरको ओर गये। वहां जाके अनेक राजोंको जीत, भगदत्तको अपने वशमें किया। उसके पश्चात राधापत्व पर्व्वतपर चढ़े। वहां हिमाचल आदि सब पर्व्वतोंके राजोंको युद्ध करके अपने वशमें किया और सबसे कर ले लिया उसके पश्चात नेपालके राजासे घोर युद्ध किया और उसकोभी अपने वशमें करके पर्व्वतसे उतरे। फिर पूरबकी ओर गये। वहां अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, मंडिक मिथिला, मगध, कर्कखण्ड, आदि सब राजोंको जीत लिया। तब शैरयोध्य और अहिक्षत्र राजाको अपने वशमें किया। पश्चात् पूर्व्वकी दिशाको छोड़ वत्सभूमिमें पहुंचे। वहां वत्स भूमिको जीतकर मोहनपुर त्रिपुर और अयोध्या आदिके राजोंको जीतकर करले लिया। इन पूर्व्वके महारथोंको जीत करके दक्षिणकी यात्रा करी, वहां रुक्मी राजासे घोर युद्ध हुआ, उस घोर युद्ध होनेके पश्चात् रुक्मीने प्रसन्न होकर कर्णसे कहा कि, हे राजेन्द्र! हम तुम्हारे बलसे बहुत प्रसन्न हैं, इस लिये हम तुम्हारी यज्ञमें कुछ विघ्न नहीं करेंगे; और अपनी प्रतिज्ञाको पालन करेंगे, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम तुम्हे जो धन देते हैं ले जाओ, परन्तु यह धन हम प्रसन्न होकर देते हैं। तब कर्णने राजा रुक्मीके सङ्ग सन्धि कर ली और पाण्ड्य शैलकी ओर चले गये। वहां जाकर-केरल देशके राजा नीलको जीता। फिर वेनुदारिके पुत्रको अपने वशमें किया। अनन्तर दक्षिण दिशाके सब राजोंको जीतकर कर ले लिया। उसके पश्चात शिशुपालके पुत्रको जीता। उसके अनन्तर वहांके सब राजोंको जीता। वहांसे उज्जैनपुरीमें पहुंचे और वहांके राजासे सन्धिकर ली। उसके पश्चात यादवोंको जीता। फिर सब पश्चिमी दिशाको जीत लिया। वहांसे यवन और बरवर देशके राजोंको जीत लिया, और सबसे कर लेलिया। इस प्रकार कर्णने पूरब पश्चिम उत्तर और दक्षिणके सब राजोंको जीत, म्लेच्छ पर्व्वत और वनके सब राजोंको अपने वशमें कर लिया। भद्र रोहितक आग्नेय और मालव देशके सब राजोंको हंसते हंसते अपने वशमें कर लिया। सूतपुत्रने शशक, यवन और नग्न आदि महारथोंको जीता। इस प्रकारसे सब पृथ्वीको जीत पुरुषसिंह महारथ कर्ण हस्तिनापुरको लौटे। जब राजा दुर्य्योधनने उनके आनेका समाचार सुना तो पुत्र और भाइयोंके सहित उनको लेनेको आये, और उनकी विधिवत पूजा की। फिर युद्ध जीतनेवाले कर्णकी बहुत प्रशंसा करके राजा दुर्य्योधन कहने लगे, हे वीर! हमारे लिये जो काम भीष्म, द्रोण, कृप और बाह्लीकने नहीं किया था, सो तुमने किया; हम अधिक क्या कहेंगे तुम हमारे नाथ हो और हम तुमसे सनाथ हुए हैं, हे कर्ण! हे

महावाहो! पाण्डवलोग तुम्हारी सोलहवीं कलाकोभी नहीं पा सकते हैं। पुरुषव्याघ्र और अत्यन्त बड़े हुए राजा लोगभी तुम्हारे समान नहीं हैं। हे महाधनुषधारी! अब तुम धृतराष्ट्र और यशस्विनी गांधारीके दर्शन करो, वह तुम्हारे ऊपर ऐसी कृपा करेंगी जैसे अदिती इन्द्रके ऊपर। हे पृथ्वीनाथ! उस समय हस्तिनापुरमें महा हाहाकार शब्द होने लगा; कोई कर्णकी प्रशंसा और कोई उसकी निन्दा करने लगा, तथा कोई चुपचाप होकर बैठ गया, इस प्रकार शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कर्णने थोड़ेही समयमें पर्व्वत, वन, आकाश, समुद्र, नीचे ऊंचे देश, गांव, नगर, द्वीप, और जलके सहित सब पृथ्वीके देशोंको जीत लिया, अनन्तर धन लेकर राजा दुर्य्योधनसे मिले। हे शत्रुनाशन जनमेजय! रनिवासमें जाकर वीर कर्णने गांधारीके सहित राजा धृतराष्ट्रके दर्शन किये, और उनको पिताके समान प्रणाम किया। राजानेभी प्रेमसे कर्णको अपने हृदयसे लगाकर विदा किया। उस दिनसे दुर्य्योधन और सुबलपुत्र शकुनीने जान लिया कि कर्ण पाण्डवोंको जीत लेगा।

२५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! सूतपुत्र शत्रुनाशन कर्णने इस प्रकार पृथ्वीको जीतकर दुर्य्योधनसे कहा हे शत्रुनाशन! हे दुर्य्योधन! हे कौरव! तुम हमारे वचनोंको सुनो और जो हम कहते हैं सो करो। हे नृपोत्तम! इस समय पृथ्वीमें तुम्हारा शत्रु कोई नहीं है; इस लिये तुम इस पृथ्वीका इस प्रकार पालन करो जैसे शत्रुवोंको नाश करके महात्मा इन्द्र पालन करते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने कर्णसे कहा, हे पुरुषसिंह! जिसके तुम ऐसे सहायक और भक्त हो और जिसके लिये तुम सदा उद्यत रहते हो, उसको कोई बात दुर्लभ नहीं है। मेरे मनमें जो इच्छा है, उसको तुम सुनो। जबसे मैंने राजा युधिष्ठिर का वृहत् राजसूय यज्ञ देखा है, तबसे मेरोभी इच्छा राजसूय यज्ञ करनेकी हुई है, इस लिये तुम राजसूय यज्ञका प्रबन्ध करो। कर्ण बोले हे नृपोत्तम! इस समय सब राजालोग तुम्हारे वशमें हैं, अब तुम ब्राह्मणोंको निमन्त्रण भेजो; हे भरतर्षभ! अब तुम विधिपूर्व्वक यज्ञकी सब सामग्री इकट्ठी करो और महायज्ञ राजसूयका आरम्भ करो। हे पृथ्वीनाथ! कर्णके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने पुरोहितको बुलाकर कहा कि तुम हमारे लिये दक्षिणा और विधिके सहित राजसूय यज्ञका आरम्भ करो। राजाके ऐसे वचन सुन ब्राह्मण श्रेष्ठ पुरोहित कहने लगे, हे कौरवश्रेष्ठ! हे नृपोत्तम! युधिष्ठिरके जीते हुए तुम राजसूय यज्ञ नहीं कर सकते हो; क्योंकि एक कुलमें दो राजसूय नहीं हो सकते और अभी तुम्हारे पिता धृतराष्ट्रभी जीते हैं, इससेभी तुम राजसूय यज्ञ नहीं कर सकते हो। हे पृथ्वीनाथ! हे राजेन्द्र! आप हमारे वचन सुनिये। राजसूयके समान औरभी यज्ञ हैं, यदि सब राजालोग तुम्हारे वशमें हैं तो तुम उसी यज्ञको करो, सब राजा लोग तुमको धन दें। अब एक हल मंगवाइये और उससे यज्ञभूमिको ठीक कराइये और वहांपर उत्तम संस्कार किया हुआ अन्न रखवाइये, वहांपर सावधान होकर सत्पुरुषोंके करने योग्य विष्णुयज्ञका आरम्भ कीजिये; इस यज्ञको सनातन विष्णुके सिवा और किसीने नहीं किया है, यह महायज्ञोंमें श्रेष्ठ राजसूयके समान है, हे राजेन्द्र! हम आपका कल्याण चाहते हैं, ईश्वर करे यह आपका यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो, ब्राह्मणोंके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने कर्ण शकुनी और अपने

भाइयोंसे कहा कि हमको ब्राह्मणोंके सब वचन प्रिय लगते हैं; यदि तुम लोगभी स्वीकार करो तो शीघ्र कहो। राजाके वचन सुन सब लोगोंने स्वीकार किया। तब राजाने हल चलानेवाले और चित्रकारोंको यज्ञशाला बनानेकी आज्ञा दी। उन्होंने वचन सुनते ही सब बना दिया।

२५१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! अनन्तर महा बुद्धिमान विदुरने सब चित्रकारोंके सहित राजा दुर्य्योधनसे निवेदन किया कि हे राजन्! हे भारत! यज्ञशाला बन गई और यज्ञ करनेका समयभी आगया; हमने बहुत धन लगाकर सोनेका हलभी बनवा लिया। विदुरके ऐसे वचन सुन, राजा दुर्य्योधनने यज्ञ आरम्भ होनेकी आज्ञा दी। तब बहुत धन और बहुत अन्नके सहित यज्ञ आरम्भ हुआ। उस यज्ञमें राजा दुर्य्योधनने विधिके अनुसार दीक्षा ली। तब राजा धृतराष्ट्र महा यशस्वी विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण,और यशस्विनी गान्धारी बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर उन्होंने शीघ्र जानेवाले दूतोंको राजा और ब्राह्मणोंके बुलानेको भेजा। वे लोग शीघ्र चलनेवाले वाहनोंपर चढ़कर चल दिये। उनमेंसे एक दूतसे दुःशासनने कहा कि, तुम शीघ्र द्वैत बनको जावो और वहां विधिपूर्व्वक पापी पाण्डवोंको न्योता दे आवो, तथा वहां रहनेवाले ब्राह्मणोंकोभी न्यायके अनुसार निमन्त्रण दीजिया। वह दूत पाण्डवोंके पास गया और प्रणाम करके कहने लगा, हे महाराजोंमें श्रेष्ठ! कुरुकुलोत्तम राजा दुर्य्योधन अपने बलसे पृथ्वीको जीतकर और बहुत धन प्राप्त करके यज्ञ करते हैं; इस लिये वहां अनेक राजा और ब्राह्मण जा रहे हैं हमको महात्मा दुर्य्योधनने आपके समीप भेजा है; महाराज दुर्य्योधन आपको यज्ञमें निमन्त्रण देते हैं और उनकी इच्छा आपको यज्ञमें बुलानेकी है, इस लिये आप चलकर उस यज्ञको देखिये। दूतके वचन सुन राजसिंह राजा युधिष्ठिर बोले; प्रारब्धहीसे राजा दुर्य्योधनने इस उत्तम यज्ञका आरम्भ किया, वह पूर्व्व पुरुषोंकी कीर्त्तिको बढ़ानेवाले हैं, हमलोगोंकी इच्छाभी उस यज्ञमें जानेकी है, परन्तु इस समय किसी प्रकार जा नहीं सकते, क्योंकि हमको तेरह वर्ष बनमें रहकर प्रतिज्ञा पूरी करनी है। महाराजके ऐसे वचन सुन भीम बोले, हे दूत! महाराज धर्म्मराज युधिष्ठिर उस समय हस्तिनापुर जायंगे, जब अस्त्र और शस्त्रोंकी अग्निमें दुर्य्योधनकी आहुति दे चुकेंगे, तेरह वर्षके पश्चात् जब युद्ध होगा उसमें क्रोधी कर्णके सङ्ग धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी आहुति दी जायगी, तभी हम सब लोग हस्तिनापुरको जायंगे, इस यज्ञको महाराज धर्म्मराजही करेंगे, हमारे सब वचन तुम दुर्य्योधनसे कह देना। हे राजन्! और किसी पाण्डवोंने कठोर वचन नहीं कहा। वह दूत वहांसे राजा दुर्य्योधनके पास गया और सब कह सुनाया। अनन्तर अनेक राजा और महाभाग ब्राह्मण लोग हस्तिनापुरमें आये। राजा दुर्य्योधनने उन सबकी पूजा शास्त्रविधि और क्रमके अनुसार करी। राजा लोगभी पूजा पाकर बहुत प्रसन्न हुए। राजा धृतराष्ट्र सब कौरवोंके सहित बहुत प्रसन्न होकर विदुरसे बोले, हे विदुर! जिससे सब लोगोंको सुख मिले और जिससे सब लोग सन्तुष्ट रहें, तुम वैसाही यत्न करो। धर्म्म जाननेवाले विदुरने उनकी आज्ञाको स्वीकार कर प्रमाणके अनुसार सब वर्णोंकी पूजा करी। विदुरने प्रसन्न होकर भोजन, पीनेकी वस्तु, माला, सुगन्धि, और वस्त्रोंका उचित प्रबन्ध कर दिया। राजा दुर्य्योधनने इस प्रकार कुछ दिन डेरोंमें निवास किया, फिर शास्त्र और क्रमके अनुसार सब राजोंको प्रसन्न करके विदा किया; फिर ब्राह्मणोंको धन देकर उनकोभी

बिदा किया। इस प्रकार यज्ञ समाप्त करके कर्ण, शकुनी और अपने भाइयोंके सहित राजा दुर्य्योधनने हस्तिनापुरमें प्रवेश किया।

२५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब महाधनुषधारी राजा दुर्य्योधनने नगरमें प्रवेश किया, तो सूत और नगरवासी उनकी स्तुति करने लगे; उनके ऊपर धानके लावे और चन्दनका चूर्ण बरसने लगा। वहां कोई कहने लगा कि, हे राजन्! यह तुम्हारा यज्ञ प्रारम्भसे निर्विघ्न समाप्त हुआ। कोई कहने लगे, कि यह तुम्हारा यज्ञ युधिष्ठिरकी यज्ञके ऐसा नहीं हुआ; यह युधिष्ठिरके यज्ञके सोलवें भागको भी नहीं पाता है; उनके मित्र कहने लगे, कि यह यज्ञ सब यज्ञसे बढ़कर हुआ है; इसी यज्ञके करनेसे पवित्र होकर ययाति, नहुष, मान्धाता और भरत स्वर्गको गये हैं, इस प्रकारसे अपने मित्रोंके बचन सुनते हुए, राजा दुर्य्योधनने नगरमें प्रवेश किया। फिर अपने घरमें जाकर माता, पिता, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, और बुद्धिमान बिदुरको प्रणाम किया, तथा औरभी सब बूढ़ोंको प्रणाम किया। फिर उनके छोटे भाइयोंने राजा दुर्य्योधनको प्रणाम किया, अनन्तर राजा भाइयोंके सहित मुख्य आसनपर बैठे। उस समय सबके बीचमें खड़े होकर कर्ण राजासे कहने लगे, हे भरतश्रेष्ठ! यह तुम्हारा महायज्ञ प्रारम्भहीसे समाप्त हुआ; अब जिस समय मैं पाण्डवोंको युद्धमें मार चुकूंगा और आप राजसूय यज्ञ करेंगे, तब फिर मैं आपकी पूजा करूंगा। कर्णके बचन सुन महायशस्वी धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन बोले, हे कर्ण! तुमने सत्य कहा, हे नरश्रेष्ठ! जब दुष्ट पाण्डव लोग युद्धमें मारे जायंगे, तब तुम फिर हमारी ऐसी बुद्धि करोगे। ऐसा कहकर राजा दुर्य्योधनने कर्णको अपने हृदयसे लगाया, और राजसूय यज्ञका विचार करने लगे। अनन्तर राजोंमें श्रेष्ठ राजा दुर्य्योधन कौरवोंसे बोले, हे कौरवो! वह कौनसा दिन होगा जब हम यज्ञमें श्रेष्ठ राजसूय यज्ञको करेंगे, यह कर्म पाण्डवोंको मारकर करना होगा। ऐसा सुन कर्ण बोले, हे राजन्! मैं जब तक अर्जुनको युद्धमें नहीं मार लूंगा, तब तक पैर नहीं धोऊंगा, मैं सत्य कहता हूं, कि बिना अर्जुनके मारे मांस नहीं खाऊंगा, और मद्यभी नहीं पीऊंगा। मैं आजसे सुरा और मांसरहित व्रत करता हूं, कि मुझसे जो भिक्षुक जो कुछ मांगेंगे सोही दूंगा। जब इस प्रकारसे कर्णने युद्धमें अर्जुनके मारनेकी प्रतिज्ञा करी, तो महारथ धृतराष्ट्रके पुत्र घोर शब्द करने लगे; उन सबने जाना कि हम पाण्डवोंको जीत लेंगे। अनन्तर महाराज दुर्य्योधनने सभाको बिसर्जन किया, जैसे इन्द्र चैत्ररथमें प्रवेश करते हैं, तैसेही दुर्य्योधननेभी अपने घरमें प्रवेश किया। वे सब लोगभी अपने अपने घरको चले गये। महा धनुषधारी पाण्डवोंने जबसे दूतके बचन सुने थे, तबहीसे परम चिन्ता करने लगे, और उनको किसी समय सुख न प्राप्त हुआ, फिर पाण्डवोंके दूतोंने आकर महाराज युधिष्ठिरसे कर्णकी प्रतिज्ञा कह सुनाई। हे महाराज! कर्णकी प्रतिज्ञा सुन उसका अद्भुत पराक्रम विचार तथा उसके अभेद्य कवचकी चिन्ता करके धर्म्मराज बहुत घबड़ाने लगे। अनन्तर सोचते सोचते और क्लेशोंको विचार महाराजके चित्तको शान्ति न प्राप्त हुई, तब महात्मा धर्म्मराजने अनेक हाथी और मृगोंसे भरे हुए द्वैतबनको छोड़नेकी इच्छा करी। उधर धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनभी अपने वीर भाइयोंके सहित पृथ्वीका राज करने लगे। भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, और युद्ध जीतनेवाले सूतपुत्र कर्णको सङ्ग रहकर राज्यमें सब कार्य्य

करने लगे, महाराज, दुर्य्योधन सब राजोंका प्रिय कार्य्य करने लगे, और अनेक यज्ञ करके ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा देने लगे। तब वीर दुर्य्योधनने अपने मनमें निश्चय किया कि, धनको देना और भोगनाही इसका फल है। ऐसा विचार अपने भाइयोंका प्रियकार्य्य करने लगे।

२५६ अध्याय समाप्त।

घोषयात्रा पर्व्व समाप्त।

अथ मृग स्वप्नोद्भव पर्व्व आरम्भ।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने! दुर्य्योधनको छुड़ाकर महाबलवान पाण्डवोंने उस बनमें बस कर कौन कार्य्य किया, सो आप हमसे कहिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एक दिन कुन्तीपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिर बनमें सो रहे थे, उसी समय रोते हुए हरिन लोग उनके पास आए। उनको रोते हुए हाय जोड़े खड़े देख राजाधिराज धर्म्मराजने पूंछा कि तुम लोग कौन हो? और हमसे क्या कहना चाहते हो? सो कहो। महायशस्वी कुन्तीपुत्र पाण्डवश्रेष्ठ धर्म्मराजके बचन सुन हरिन बोले, हे महाराज! हे भारत! हम लोग हरिण हैं, आपने जबसे इस बनमें बास किया है, तबसे हमारी जाति नष्ट होगई, इसलिये आप दूसरे बनमें निवास कीजिये; आपके भाई लोग शूर, वीर और शस्त्र विद्याके जाननेवाले हैं, उन्होंने वनमें रहनेवाले जन्तुवोंको नाश कर दिया है; हे महामति! अब हम लोग बीजमात्र रह गये हैं; इस लिये आप कृपा कोजिये; हे राजेन्द्र युधिष्ठिर! आपकी कृपासे हम फिर भी बढ़ जायंगे। सब प्राणियोंका हित करनेवाले महाराज धर्म्मराजने जब उन हरिनोंको कांपते डरते और थोड़ा देखा, तो बहुत दुःखसे भरकर कहने लगे कि तुमलोग जैसा कहतेहो हम वैसाहो करेंगे। ऐसा स्वप्न देख कर राजोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर प्रातःकाल उठे, और अपने भाइयोंको बुलाकर हरिनोंके ऊपर कृपा करके कहने लगे कि हमसे स्वप्नमें हरिनोंने ऐसा ऐसा कहा है, कि हमारा वंश नष्ट होगया अब आप हमारे ऊपर कृपा कीजिये, उन्होंने सत्यही कहा है, हम लोगोंको बनमें रहनेवाले जन्तुवों पर कृपा करनी चाहिये; हम लोगोंको अब एक वर्ष और आठ महीने इस बनमें रहते होगए, तबसे हम इन्हीं हरिणोंको खारहे हैं, अब हम लोग फिर मरु देशमें उत्तम काम्यक वनको चलें, वह बन बहुत रमणीय तथा बहुत हरिन और घाससे भरा हुआ है; उसमें जो बिन्दुसर नामक तलाव है, उसके तटपर विहार करके हम लोग शेष समयको बिता देंगे। धर्म्मराजकी आज्ञा सुन, धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोग, ब्राह्मण, सङ्ग रहनेवाले इन्द्र सेनादिक सारथी और दूतोंके सहित वहांसे चल दिये, वे लोग पवित्र, शुद्ध और जलसे भरे हुए मार्गोंसे चलते चलते पवित्र और तपस्वियोंके स्थान काम्यक बनमें पहुंचे। जैसे पुण्यात्मा लोग स्वर्गमें प्रवेश करते हैं, तैसे हो भरतकुलश्रेष्ठ पाण्डवोंने, ब्राह्मणोंके सहित काम्यक बनमें प्रवेश किया।

२५७ अध्याय समाप्त।

मृगस्वप्नोद्भव पर्व्व समाप्त।

अथ ब्रीहिद्रोणि पर्व्व आरम्भ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महात्मा पाण्डवोंको वनमें बसते और दुःख सहते ग्यारह वर्ष बीत गये, सुख करने योग्य पाण्डवोंने फल और मूल खाकर तथा दुःख सहकर इन ग्यारह बर्षोंको व्यतीत किया। महात्मा पाण्डव लोग अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अपने उचित समयको बिचारकर दुःख सहते रहे। महाबाहु राजऋषि युधिष्ठिर अपने कर्म्मका अपराध और अपने भाइयोंका दुःख देखकर कभी सुखसे नहीं सोते थे। उनको

जुएके समय और उससे उत्पन्न हुए दुःखोंके बिचार करनेसे ऐसी पीड़ा होती थो, जैसे हृदयमें बाण लगनेसे। जिस समय महाराजको कर्णके कठोर बचन स्मरण होते थे, उस समय दीन होकर स्वास लेते थे, और क्रोधके विवसे व्याकुल हो जाते थे। अर्जुन, नकुल, सहदेव, यशस्विनी द्रौपदी और महातेजस्वी तथा सबसे अधिक बली भीम युधिष्ठिरके सुखको देखकर दुःख सहते थे। पुरुषसिंह पाण्डव लोग अपने अच्छे समयकी आता हुआ देख, अपने समय-को उत्साह और क्रोधसे बिता रहे थे। उसी समय सत्यवतीके पुत्र महा योगी पाण्डवोंके देखनेकी इच्छावाले, व्यासदेव आए। महात्मा व्यासको आते देख कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर खड़े होगये, और उनको विधिपूर्वक आसन दिया। उनको बिठलाकर इन्द्रीजित धर्मराजभी उनसे कथा सुननेकी इच्छा करके उनके पास बैठ गये। कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने हाथ जोड़कर व्यासकी स्तुति करी। पाण्डवोंको दुर्बल और फलमूल खाते हुए देखकर महाऋषि व्यासको बहुत दया आई, और रोकर कहने लगे, हे युधिष्ठिर! हे महाबाहो! हे धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ! तुम हमारे बचनोंको सुनो, बिना तप किये कोई पुरुष लोकमें सुख नहीं पाता है; प्रायः सब लोग सुख और दुःखहोमें पड़े रहते हैं। कैसा भी बुद्धिमान क्यों न हो, और कैसा भी विद्वान क्यों न हो कोईभी अनन्त सुखको प्राप्त नहीं होता, इस लिये उदय और अस्तका जाननेवाला पण्डित न सोचता है, और न प्रसन्न होता है; इस लिये पुरुषको उचित है कि, सुख और दुःखके समयको बिता दे। जैसे किसान समयके अनुसार सब काम करता है, तैसेही सबको करना चाहिये! तपसे अधिक और कोई बस्तु नहीं है। तपसे मोक्ष प्राप्त होती है, हे भारत! ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो तपसे न मिल सके। हे युधिष्ठिर! महात्माओंने धर्मके ये लक्षण कहे हैं—सत्य, कोमलता, क्रोध न करना, दान दम, शम, किसीके सुखको देखकर दुखी न होना, हिंसा न करना, पवित्रता और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखना, हे महाराज! यही धर्मके दश लक्षण हैं, इन्हींसे महात्मा लोग पवित्र होते हैं; अधर्मी पापी और मूर्खलोग इन दशोंका आदर नहीं करते हैं; इसीसे वे लोग नीच योनियोंमें जन्म लेते हैं और सुखको प्राप्त नहीं होते। इस लोकमें जो कर्म करता है, वही परलोकमें प्राप्त होता है; इस लिये शरीरको तप और नियमोंसे युक्त रखना चाहिये, पुरुष-को उचित है, कि अच्छा समय प्राप्त होनेपर प्रसन्न होकर, और दुष्टताको त्यागकर प्रणाम और पूजाकरे शक्तिके अनुसार दान करे, सत्य-वादीको आयु अधिक होती है, वह अनायासही कोमलताको प्राप्त कर लेता है, क्रोध और दाह रहित पुरुष शीघ्रही बिरक्त हो जाता है, जितेन्द्रिय और शान्त पुरुषको कभी क्लेश नहीं होता। जिसने अपने मनको वशमें कर लिया है, वह दूसरेकी लक्ष्मीको देखकर दुःखी नहीं होता, जो अन्नका विभाग और दान करता है, वह सदा सुखी रहता है, हिंसा न करनेवाले पुरुषको कभी रोग नहीं होता, जो मानने योग्य पुरुषको मान्य करता है, वह उत्तम कुलमें उत्पन्न होता है, जितेन्द्रियको कभी कोई दुःख नहीं होता। जो नियमके अनुसार अपनी बुद्धिको अच्छी करता है, वह उसही उत्तम बुद्धिके प्रभावसे अच्छे कुलमें जन्म लेता है, और उसकी बुद्धिभी अच्छी होती है। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवान्! हे महामुने! दान धर्म और तपमें कौन अधिक गुणवाला है? और कौन अधिक कठिन है? श्री व्यासदेव बोले, हे तात! पृथ्वीमें दानसे कठिन और कोई धर्म नहीं है, क्योंकि पृथ्वीमें पुरुषोंको धनका बहुत लोभ रहता है, और वह धन बहुत कठिनताईसे प्राप्त होता

है। देखो पुरुष अपने प्यारे प्राणोंकी आशा छोड़कर समुद्र और जङ्गलोंमें घुस जाते हैं; हे महामते! कोई पुरुष धनको इच्छासे खेती और गोरचा करते हैं, कोई धनके लोभसे मार्गोमें दौड़ते हैं। और उस दान धर्म्ममें, उसी दुःखसे उत्पन्न हुए धनको त्यागना होता है, इससे हमारी बुद्धिमें दानके समान कोई कठिन धर्म्म नहीं है तथा उत्तम समयमें उत्तम देशमें सत्पात्रको दिया जाता है, वही उत्तम दान कहाता है। जो अन्यायसे उत्पन्न हुआ धन दान दिया जाता है, वह देनेवालेको दुःखसे नहीं छुड़ा सकता है। हे युधिष्ठिर! जो थोड़ा-भी दान उत्तम समयमें सुपात्रको दिया जाता है, और उस समय मन शुद्ध होता है, तो वह दान देनेके पश्चात् अनन्त फलको देता है। यहां हम एक पुराना इतिहास तुमसे कहते हैं, जो द्रोणी धान देनेसे मुद्गलको फल मिला था, सो तुम सुनो।

२५८ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! महात्मा मुद्गलने किस विधिसे और कौनसे समयमें किसको एक द्रोणी धान दान किया था। जिस महात्माके दानधर्म्मसे साक्षात् धर्म्मरूपी भगवान प्रसन्न हुए,हम उनके जन्मको धन्य मानते हैं।

श्रीव्यासदेव बोले, हे राजन्! कुरुक्षेत्रमें एक मुद्गल नामक ब्राह्मण थे। वह जितेन्द्रिय शीलाञ्छ वृत्तिवाले, सत्यवादी, डाह रहित, अतिथिसेवक और क्रियावान थे। उनकी वृत्ति कबूतरके समान थी, अर्थात् अधिक संग्रह नहीं करते थे। महा तपस्वी मुद्गल इष्टी नामक यज्ञ करते थे। वे स्त्री और पुत्रोंके सहित एक पक्षमें भोजन करते थे। वह कबूतरकी वृत्तिसे; एक द्रोणी धान इकट्ठा करते थे, उसीसे छलरहित होकर पूर्णमासी और अमावस्याको यज्ञ करते थे; शेष अतिथि और देवतोंको देते थे, उससे जो बचता था, उसे खाकर अपने शरीरका निर्व्वाह करते थे। महाभाग मुद्गलके आश्रमपर सब पर्वोंमें तीन लोकके स्वामी साक्षात इन्द्र आते थे, महात्मा मुद्गल मुनि शीलोञ्छ वृत्ति करके सब पर्वोंमें यज्ञ समाप्त करके अतिथियोंको अन्न दिया करते थे, और दान करते समय परम प्रसन्न रहते थे। महात्मा मुद्गलका एक द्रोणी धान, अतिथियोंको देखकर बढ़ जाता था, वे दुष्टतासे रहित थे, इसीसे उनके एक द्रोणी अन्नमें सौ पण्डित ब्राह्मण भोजन कर लेते थे। मुनिके त्याग बलसे वह अन्न बढ़ता जाता था। इस प्रकार दान करनेवाले उत्तम वृत्तिधारी महात्मा मुद्गलका नाम सुन कर दिग्वासा दुर्व्वासा उनके पास आए। हे पाण्डव दुर्व्वासाने अद्भुत पागलका वेष बनाया, और अनेक प्रकारकी कठोर वाणी बोलते हुए आए और कहने लगे, हे द्विजोत्तम! हम अन्नकी इच्छा करके तुम्हारे पास आए हैं। महामुनि मुद्गलने कहा, कि आपने बहुत अच्छा किया। ऐसा कहकर दुर्वासाको पाद्य, अर्घ, और आचमन दिया। उसके पश्चात भूखे दुर्व्वासाको, अतिथि मुद्गलने अन्न दिया, और व्रतधारी मुद्गलने, उस पागलमें परम श्रद्धा करी। फिर पागलरूपधारी दुर्व्वासाने, वह स्वाद भरा अन्न सब खालिया। भोजन करनेसे जो अन्न बच रहा उसको उस पागलने अपने शरीरमें लगा लिया, और फिर जिधरसे आया था उधरहीको चला गया। इस प्रकार जब बुद्धिमान शीलोञ्छवृत्ति मुद्गलने दूसरे पक्षमें यज्ञ किया तो फिर उसी प्रकारसे दुर्व्वासा आए, और सब अन्न खागये। तब महात्मा मुद्गल भूखेही रहकर, शीलोञ्छवृत्ति करने लगे। इस प्रकार भूखा रहने पर भी कार्य्य करनेसे भी भूख उनको दुःख न दे सकी। महात्मा

मुद्गलको क्रोध, दुष्टता, अभिमान और बुद्धि भ्रम भी न हुआ; स्त्री पुत्र भी भूखे रहने लगे। इस प्रकार मुनिश्रेष्ठ दुर्व्वासाने छैवार मुद्गलका सब अन्न खा लिया; परन्तु शुद्ध मुद्गलके मनमें कुछ भी बिकार न दिखा, बरन उनका मन सदा शुद्धही पाया। तब महात्मा दुर्व्वासा प्रसन्न होकर मुद्गलसे बोले, कि इस लोकमें तुम्हारे समान शुद्ध दानी कोई नहीं है, तुमने अपने धैर्य्यसे क्षुधाका धर्म्म और जिह्वाकी शक्तिको जीत लिया; यह जिह्वा रसको चाहनेवाली है, इस लिये पुरुषको अवश्यही रसोंकी ओर खींचती है; प्राण भोजनसे स्थिर रहते हैं; मन बड़ा चञ्चल है; मनको एकाग्र करके, इन्द्रियोंको वशमें रखना यही तप कहाता है; परिश्रमसे उत्पन्न किये धनको शुद्ध मनसे देना बहुत कठिन है; तुमने यह सब कर्म्म उचित रीतिसे किया; हम तुमसे बहुत सुखी हुए, तुम्हारे शरीरमें इन्द्रियोंका जीतना, धैर्य्य, अन्नादिक बांटनेकी रीति शम, दम, दया, सत्य, और धर्म्म स्थित हैं; तुमने अपने कर्म्मोंसे स्वर्गलोकको जीत लिया है; तुम परम गतिको प्राप्त हुए हो, तुम्हारे दानको धन्य है, तुम्हारे दानको देवता प्रशंसा करते हैं, तुम इसी शरीरसे स्वर्गको जाओगे; हे सत्तम व्रतधारी! तुम धन्य हो। जिस समय दुर्वासामुनि, मुद्गलसे ऐसा कह रहे थे, उसी समय विमानपर बैठकर देवतोंका दूत आया। वह विमान दिव्य सुगन्ध घण्टे घुंघुरु हंस और सारससे युक्त था, तथा इच्छा अनुसार चलता था, वह देवदूत मुद्गलसे कहने लगा कि हे महामुने! तुमने अपने कर्म्मोंसे इस विमानको प्राप्त किया है, अब इसपर बैठो तुम परमसिद्धिको प्राप्त हुए हो। तब दूतके ऐसे बचन सुन मुद्गल मुनि बोले, हे देवदूत! हमारी इच्छा है, कि आपसे स्वर्गवासियोंके गुणको सुनें, आप कहिये स्वर्गमें रहनेवालोंमें क्या गुण हैं? उनका क्या धर्म्म और क्या निश्चय है? स्वर्गमें क्या सुख और क्या दोष हैं? हे विभो! हम आपको अपना मित्र जानकर ये सब बातें पूछते हैं, क्योंकि कुलीन महात्माओंने मित्रको उद्धार करनेवाला कहा है; हमारे किये हुए प्रश्नोंका जो सत्य और उचित उत्तर हो सो कहिये, उसको सुनकर जो उचित होगा सो करेंगे।

२५८ अध्याय समाप्त।

देवदूत बोले, हे महर्षि! तुम्हारी बुद्धि बहुत अच्छी है, क्योंकि आप मानने योग्य परम उत्तम स्वर्गके सुखको भी मूर्खके समान विचार रहे हैं; इस लोकसे ऊपर स्वर्गलोक है, उसीको स्वर्लोक भी कहते हैं। उसके ऊपर एक देवतोंका मार्ग है, उसमें सदा ही देवतोंके बिमान घूमा करते हैं। हे मुद्गल! उस मार्गमें बिना तप और यज्ञ किये कोई नहीं जा सकता है, वहां असत्यवादी और नास्तिकको गति नहीं है; उस स्थानपर धर्म्मात्मा मनको वशमें करनेवाले, शान्त, जितेन्द्रिय, साधु, दान, धर्म्म करनेवाले और युद्धमें मरे हुए बीरलोग जाते हैं; वहां शम और दमरूपी धर्म्म करनेसे उत्तम कर्म्म करनेवाले महात्मा लोग जाते हैं। हे ब्रह्मन्! देवता साध्य विश्वेदेव, महर्षि, यम, धाम, गन्धर्व्व और अप्सरादि देवजातियोंके लोक भिन्न भिन्न हैं। वे सब लोक परम प्रकाशमान सब सुख और तेजोंसे भरे हुए परम सुन्दर हैं। वहां भयानक और अशुभ वस्तु कुछ नहीं है, वहां मेरु पर्व्वत और देवतोंकी अनेक बाटिका हैं, वह मेरु पर्व्वत सोनेका है। उसके ऊपर नन्दन आदि अनेक बाग लगे हैं, उनमें पुण्य कर्म्म करनेवाले महात्मा लोग बिहार करते हैं, वहां भूख, प्यास, ग्लानि, शीत और गर्मी कुछ नहीं है, वहां बहुत अच्छी सुगन्धि आती हैं; वहांका वायु बहुत शीतल है, वहांके शब्द

कानको बहुत प्यारे लगते हैं। स्वर्गमें शोक पश्चात्ताप और दुःख नहीं है। हे मुने! स्वर्गलोक ऐसा है, उसको महात्मा अपने कर्म्मसे प्राप्त कर सकते हैं, वहांके रहनेवालोंके शरीर कर्म्मके अनुसार अग्निसे होते हैं। वहां कोई माता और पितासे उत्पन्न नहीं होता। वहां किसीको पसीना, दुर्गन्धि, विष्ठा, मूत्र और रज नहीं होते। वहां देवतोंकी दिव्य गन्धवाली और मनोहर माला कभी कुम्हलाती नहीं है, हे ब्राह्मण! स्वर्गवासी लोग दिव्य बिमानोंपर बैठकर घूमते हैं। वहां दाह, शोक, थकाई, मोह और दुष्टता किसीको नहीं है। हे महामुने! उस स्वर्गमें महात्मा लोग निवास करते हैं, हे मुनिराज! इस प्रकार एक लोकके ऊपर दूसरा लोक है, जो जिससे ऊपर है वह अपने नीचेवाले लोकको सुन्दर और अधिक गुणवान मानता है। हे ब्रह्मन्! उन सबके आगे ब्राह्मणोंके लोक परम सुन्दर और तेजसे भरे हैं। उन्हींमें अपने शुभ कर्मोंसे पवित्र होकर ऋषि लोग जाते हैं। उस स्थानमें रिभ नामक देवता रहते हैं, वे देवतोंके भी देवता हैं; उनके लोकसे आगे लोक कोई नहीं है। देवता भी उनकी पूजा करते हैं, वे सब लोक अपनेही तेजसे प्रकाशमान रहते हैं, उनमें सब सिद्धि प्राप्त होती हैं, उनमें रहनेवालोंको स्त्री, धन और किसी वस्तुका दुःख नहीं है, वे लोग कभी आहुति नहीं देते और न अमृत भोजन करते हैं; उनलोगोंका शरीर दिव्य है, उसको कोई नहीं देख सकता है, उन्हें सुखकी कुछ इच्छा नहीं है, वे लोग देवतोंके देवता और सनातन हैं; फलके अन्तमें महा प्रलय होनेसेभी उनका शरीर नष्ट नहीं होता उनको बुढ़ापा, मृत्यु, सुख, प्रीति, दुःख, रोग और द्वेष कुछ नहीं है। हे मुद्गल! देवता लोग भी उस गतिकी इच्छा करते हैं, वह गति परम दुर्लभ और अगोचर है, ये तेतीस प्रकारके देवता हैं, जिनके लोकोंमें बुद्धिमान दानी लोग विधिपूर्व्वक अच्छे कर्म्म नियम और दान करके जाते हैं, वही दानियोंकी उत्तम गति तुमको प्राप्त हुई है। अब तुम अपने तपके तेजसे प्रकाशमान होकर उस सुखको भोग करो। हे बिप्र! यही स्वर्गादि उत्तम लोकोंके सुख हैं,हमने स्वर्गके गुण तुमसे कहे; आगे स्वर्गके दोषोंका वर्णन करते हैं। हे मुद्गल! पुरुष स्वर्गमें जाकर कर्मोंका जो कुछ फल भोगता है उसके आगे और कुछ नहीं कर सकता, इससे कर्म्मका मूलछेद हो जाता है, कर्म्म नष्ट होनेसे वह मनुष्य पुनः पृथ्वीमें गिरा दिया जाता है; यही स्वर्गका बड़ा भारी दोष है, और असन्तोष, दूसरेकी परम लक्ष्मीको देखकर दाह होना, तथा नीचे स्थानमें जन्म होना ये ही परम दोष हैं। वहांसे जो गिराया जाताहै उसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है, और वह रजोगुणसे भर जाता है। जिस समय किसीके स्वर्गसे गिरनेके दिन आते हैं, तब उसकी माला सूखने लगती है; उसी दिनसे उसको अपने गिरनेका भय होजाता है। हे मुद्गल! ये दारुण दुःख ब्रह्मादिक देवतोंको भी होते हैं और इनको छोड़कर स्वर्गमें एक और भी परमश्रेष्ठगुण है कि जो वहांसे गिराया जाता है, उसका जन्म मनुष्यके यहां होता है, मनुष्यमेंभी वह महाभागी और सुखी होता है; यदि वहां उसने अच्छा कर्म्म न किया तो परम नीचताको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मण! यह कर्म्म-भूमि इसीको फलभूमि भी कहते हैं।

मुद्गल बोले, हे देवदूत तुमने स्वर्ग लोकके बहुत दोष वर्णन किया, अब जो निर्दोषलोक हों, उसका वर्णन हमसे कीजिये। देवदूत बोले हे ब्राह्मण! ब्रह्मलोकसे ऊपर विष्णुपद है, वह शुद्ध सनातन और ज्योतिस्वरूप है उसको परब्रह्म कहतेहैं वहां कोई विषयी, पाखण्डी, लोभी, क्रोधी, मोह और द्रोहसे भरा हुआ

प्रवेश नहीं जाता है। परन्तु ममता, अहंकार और वैररहित महात्मा जाते हैं। हमने तुमसे यह सब कहा। हे साधो! अब तुम हमसे जो पूंछोगे सो हम कृपा करके कहेंगे; अब तुम चलनेमें विलम्ब मत करो। श्रीव्यासदेव बोले, देवदूतके ऐसे वचन सुन मुद्गल मुनि अपनी बुद्धिसे विचार करने लगे, और विचार कर देवदूतसे बोले, हे देवदूत! हम तुमको प्रणाम करते हैं, तुम्हारी जहां इच्छा हो वहांको चले जाओ, हम ऐसे दोषोंसे भरे हुए स्वर्गमें जाना नहीं चाहते, हम ऐसे सुखसे सम्बन्ध नहीं रखते जहांसे गिरनेके समय महा दुःख और घोर पश्चात्ताप हो; ऐसे स्थानमें नहीं जाना चाहिये, हम अपने वनहींको स्वर्ग समझते हैं, यहां अनेक देवता घूमनेको आते हैं, जहां जाकर कोई सोच और व्यथा नहीं होती है, जहांसे कभी कोई नहीं गिरता हम उसी स्थानमें जाना चाहते हैं। ऐसा कहकर मुद्गलने देवदूतको विदा किया और आप धर्म्मपूर्व्वक शीलोञ्छ वृत्ति करने लगे। फिर स्तुति, निन्दा ढेला काठ, पत्थर और सोनेको समान ही समझने लगे। इस प्रकार ज्ञान ध्यान और योगसे पवित्र होकर कुछ कालमें पवित्रबुद्धि प्राप्त करिके सनातन मोक्षको प्राप्त हुए। हे कौन्तेय! अब आपभी शोकको परित्याग कीजिये, आप राज्यसे भ्रष्ट हुए हैं, परन्तु फिर उसी राज्यको तपके बलसे पावेंगे। पुरुषको सुखके पश्चात् दुःख और दुःखके पश्चात् सुख हुआ ही करता है, ये दोनों इस प्रकार घूमते हैं जैसे रथके पहिये। हे महापराक्रमी! तेरह वर्षके पश्चात् तुम अपने वंशके राज्यको प्राप्त करोगे, अब तुम अपने मनको दुःखका दूर करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान बुद्धिमान व्यासदेव युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर तप करनेकी इच्छासे फिर अपने आश्रमको चले गये।

२६० अध्याय समाप्त।

आगे द्रौपदी हरण पर्व्व लिखते हैं।

राजा जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम! जब महात्मा पाण्डव लोग इस प्रकार वनमें रहकर मुनियोंसे विचित्र कथा सुनते हुए विहार करते थे, और सूर्य्यकी दी हुई अक्षयटवीके बने हुए अन्नसे द्रौपदीके खानेतक ब्राह्मण और अतिथियोंको तृप्त करते थे, तथा वनमें उत्पन्न हुए अनेक प्रकारके हरिनोंका मांस खाकर रहते थे। तब दुरात्मा दुर्य्योधन आदि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने उनके सङ्ग कैसा वर्त्ताव किया। हे वैशम्पायन! हे भगवान्! हे महामने! आप इन सब कथाओंको हमसे कहिये हम जानते हैं, कि धृतराष्ट्रके पुत्र, शकुनी, दुःशासन और कर्णके वचनोंमें रहते थे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जब दुर्य्योधनने पाण्डवोंकी वृत्ति नगरवासियोंके समान सुनी, तो उनकी ओरसे अपने चित्तमें पाप धारण किया। उसी प्रकार कपटी दुरात्मा कर्ण और दुःशासनादिकोंके सङ्ग अनेक प्रकारके दुष्टसम्मती करने लगा। उसी समय महा तपस्वी महायशस्वी धर्म्मात्मा दुर्व्वासा मुनि अपने दश सहस्र शिष्योंके सहित आए। महा क्रोधी दुर्व्वासाको देख दुर्य्योधन बहुत नम्र भावसे अपने भाइयोंके सहित खड़े हो गये, और उनका अतिथिके समान सत्कार किया। राजा दुर्य्योधन आपही सेवकके समान उनकी सेवा करने लगे। दुर्य्योधन उनके शापसे डरकर दिन रात आलसरहित होकर दुर्व्वासा मुनिका सत्कार करते रहे। कभी दुर्व्वासा मुनि कहते थे, कि हे नराधिप! हमको भूख लगी है, खानेको दो। ऐसा कहकर स्नान करनेको जाते थे, और वहांसे बहुत विलम्ब करके लौटते थे; आकर राजासे कह देते थे कि हमको भूख नहीं है, हम नहीं खायेंगे। कभी अकस्मात कहते थे, कि हमको शीघ्र भोजन कराओ। कभी आधी रातको उठकर भोजन बनवाकर नहीं खाते थे, और उसको

निन्दा करने लगते थे। इस प्रकार व्यवहार करनेवाले दुर्व्वासा मुनिको सेवा करनेसें राजा दुर्य्योधनने कुछ छल और क्रोध न किया। तब दुर्व्वासा मुनि प्रसन्न होकर कहने लगे, हे भारत! तुम्हारा कल्याण हो, जगतमें कोई ऐसी धर्म्मको वस्तु नहीं है, जो हमारे प्रसन्न होनेसे न मिल सके, अब जो तुम्हारी इच्छा हो सो हमसे मांगो हम तुम्हें देंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाऋषि जितेन्द्रित दुर्व्वासा मुनिके ऐसे बचन सुन राजा दुर्य्योधनने जाना कि हमारा जन्म फिर हुआ। उन्होंने पहिलेही कर्ण और दुःशासनसे, यह सम्मति कर रखी थी, कि दुर्व्वासा मुनिसे यह वरदान मागेंगे, अनन्तर राजा दुर्य्योधन बहुत प्रसन्न होकर शिष्य सहित दुर्व्वासासे कहने लगे, हे ब्रह्मन्! जिस प्रकार आप हमारे यहां अतिथि होकर आये हैं, तैसेही हमारे भाई महाराज युधिष्ठिरके यहां जाइये; वे हमारे कुलमें बड़े, श्रेष्ठ, धर्म्मात्मा, गुणवान और शीलवान हैं; आज कल भाइयोंके सहित बनमें वास करते हैं। उनके यहां आप उस समय जाइयेगा, जब यशस्विनी राजपत्नी सुन्दरी द्रौपदी ब्राह्मण और अपने पतियोंको भोजन करा चुकी हों, और आपभी खाकर सुखसे बैठी हों। दुर्व्वासा मुनिने दुर्य्योधनसे कहा, कि तुम्हारी प्रीतिसे हम ऐसाही करेंगे। ऐसा कहकर दुर्व्वासा अपने स्थानको चले गये, और राजा दुर्य्योधनने अपने शरीरको कृतार्थ माना। दुर्य्योधनने प्रसन्न होकर कर्णका हाथ पकड़ लिया, कर्णभी बहुत प्रसन्न होकर भाइयोंके सहित राजासे बोले, हे कौरव! प्रारब्धसे तुम्हारे सब कार्य्य सिद्धि होते हैं, प्रारब्धसे तुम्हारी वृद्धि होती है, प्रारब्धसे तुम्हारे शत्रुलोग घोर दुःख सागरमें पड़े हैं; अब पाण्डव लोग दुर्व्वासाकी क्रोधरूपी अग्निमें जल जायंगे; वे अपने किये हुए पापोंसे अपार अन्धकारमें पड़ेंगे, श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन्! इस प्रकार वे दुर्य्योधनादिक छली लोग बहुत प्रसन्न हुए, और हंसते हंसते अपने घरको चले गये।

२६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर कभी सुखसे बैठे हुए पाण्डवोंके पास दश सहस्र शिष्योंके सहित, दुर्व्वासा मुनि आए। उस समय द्रौपदीभी खा चुकी थी, दुर्व्वासाको आते देख श्रीमान् महाराज युधिष्ठिर भाइयों सहित खड़े होगए, और हाथ जोड़कर उत्तम आसन पर बिठलाया। फिर उनकी यथायोग्य पूजा करके भोजन करनेको कहा, महाराज बोले, हे भगवन्! आप नित्यकर्म्म करके शीघ्र लौट आइये। पापरहित दुर्व्वासा मुनिभी शिष्योंके सहित स्नान करनेको चले गये, और मनमें विचारने लगे, कि ये हमको शिष्योंके सहित कहांसे भोजन करावेंगे। जब मुनि लोग सावधान होकर स्नान करने लगे उसी समय स्त्रियोंमें श्रेष्ठ पतिव्रता द्रौपदी उनके लिये अन्नका सोच करने लगी परन्तु कहीं अन्नका ठीक न देखा। तब द्रौपदीने अपने मनसे कष्ट-विनाशक कृष्णका ध्यान किया। द्रौपदी बोली हे कृष्ण! हे देवकीनन्दन! हे अविनाशी! हे वासुदेव! हे जगन्नाथ! हे शरणागत दुःख विनाशन! हे जगतके आत्मा! हे जगतके कर्त्ता! हे जगतके नाशक! हे नाथ! हे शरणागत पालक! हे गोपाल! हे प्रजापाल! हे परब्रह्म! हे चित्तकी वृत्तियोंको चलानेवाले! मैं तुमको प्रणाम करती हूं, हे श्रेष्ठ! हे वरदानदेनेवाले! हे अनन्त! तुम अशरणोंके शरण देनेवाले हो, हे पुराणपुरुष! तुमको प्राण, मन और इन्द्री नहीं जान सकते हैं, तुम जगतके स्वामी हो, तुमहीको परमस्वामी कहते हैं, तुम शरणागयको रक्षा करते हो,

इस लिये हम तुम्हारी शरण हैं; तुम हमारी रक्षा करो; तुम नीले कमलके समान वरणवाले, लाल कमलके समान नेत्रवाले, पीताम्बर और कौस्तुभ धारी हो, तुम्ही जगतके आदि और अन्त हो, तुम्हीको परायण कहते हैं; तुम्ही ज्योतिः स्वरूप परब्रह्म हो, आप जगतकी आत्मा हो, तुम्हारे सब ओर सुख हैं तुम्ही सब जगतके बीज हो; तुमही सब सम्पदाके स्थान हो, हे देवेश! जो पुरुष तुमको अपना स्वामी मानता है उसको किसी आपत्तिमें भय नहीं होता, जैसे पहिले तुमने मुझको सभामें दुःशासनसे छुड़ाया था, तैसेही इस कष्टसे भी उद्धार करो। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जगतके स्वामी भक्तवत्सल देवतोंके देवता कृष्णने द्रौपदीकी ऐसी स्तुति सुन उनके महाकष्टको जान लिया। अपने वास सेजपर बैठी हुई रुक्मिणीको छोड़ द्वारिकासे श्रीकृष्ण दौड़े और बहुत शीघ्र द्रौपदीके पास आगए। श्रीकृष्णको देखकर द्रौपदीने प्रसन्न होकर प्रणाम किया और दुर्व्वासा मुनिके आनेका सब समाचार कह सुनाया। तब कृष्णने कहा, कि हे द्रौपदी! मैं भूखसे अत्यन्त व्याकुल हो रहा हूं, हमको शीघ्र भोजन दो। तब द्रौपदीने लज्जित होकर कहा कि सूर्य्यकी दी हुई बटूईमें मेरे भोजन करने तक अन्न रहता है, हे देव! अब मैं भोजन कर चुकी हूं, इससे कुछ नहीं है। तब कमलनेत्र कृष्णने कहा, हे द्रौपदी! मुझे बहुत भूख लगी है, इससे विलम्ब करनेका समय नहीं है, शीघ्र बटुई लाकर हमें दिखा दो। तब द्रौपदीने बटुई लाकर दिखादी! कृष्णने उसमें एक चावल लगा हुआ देखकर खालिया और द्रौपदीसे कहा, कि इस चावलसे जगतके आत्मा यज्ञका भोग करने वाले परमेश्वर प्रसन्न हों। पश्चात क्लेश विनाशक महाबाहु कृष्णने सहदेवसे कहा, कि तुम शीघ्र जाओ और सब मुनियोंको भोजनके लिये शीघ्र बुलाओ। तब महायशस्वी सहदेव शीघ्र मुनियोंको बुलाने गये। दुर्व्वासा आदिक मुनिभी स्नान और सन्ध्या कर चुके थे, परन्तु सब मुनि अत्यन्त तृप्त होगये थे और डकार आने लगी थीं। तब दुर्व्वासा मुनिको देखकर सब शिष्य लोग कहने लगे, हे विप्रर्षे! आप राजाके यहां भोजन बनवाकर स्नान करनेको आये हैं और अब कण्ठ तक पेट भर गया। अब वहां जाकर हम कैसे खायेंगे? हम राजाके यहां जाकर उनसे क्या कहेंगे? और क्या करेंगे? दुर्व्वासा मुनि बोले, कि राजर्षि युधिष्ठिरके यहां हम लोगोंने वृथाही भोजन बनवाया; इससे हमने उनका महा अपराध किया है, ऐसा न हो कि वे लोग हमको अपने क्रोध भरे नेत्रोंसे भस्म कर दें; मैं बुद्धिमान राजऋषि अम्बरीषके प्रभावको स्मरण करके हरिभक्तोंसे बहुत डरता हूं; सब पाण्डव लोग महात्मा, धार्म्मिक, शूर, विद्वान, यती और तपस्वी हैं; वे लोग उत्तम आचार करनेवाले और कृष्णके भक्त हैं, इस लिये हम लोगोंको इस प्रकार भस्म कर सकते हैं जैसे रूईके ढेरको अग्नि। इस लिये उन लोगोंको बिना पूछेही भाग जाना चाहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अपने गुरु दुर्व्वासा मुनिके ऐसे बचन सुन, पाण्डवोंसे डरकर सब मुनि लोग दशो दिशाओंको भाग गये; सहदेवभी उनको नदीपर न पाकर उस बनमें चारों ओर ढूंढ़ने लगे। तब वहांके रहनेवाले मुनियोंने सहदेवसे कह दिया, कि वे सब लोग भाग गये। अनन्तर सहदेवने यह सब वृत्तान्त महाराजयुधिष्ठिरसे विवेदन कर दिया। तब महात्मा पाण्डव लोग कुछ समय तक दुर्व्वासाके लौटनेका मार्ग देखते रहे, कि अकस्मात आधी रातको आकर दुर्व्वासा हमको छलेंगे, इस प्रारब्धके दुःखसे हम लोग

कैसे पार होंगे। जहां इस प्रकारसे पाण्डव लोग बिचार कर रहे थे, और बार बार ऊंचे श्वास ले रहे थे, तहां श्रीकृष्ण प्रत्यक्ष होकर आए और कहने लगे, कि हे पाण्डवो! महाक्रोधी दुर्व्वासा मुनि तुम लोगोंको दुःख देंगे, ऐसा बिचार कर और द्रौपदीका ध्यान देखकर मैं शीघ्र तुम्हारे पास आता हूं; दुर्व्वासा मुनिसे तुम लोगोंको किञ्चित भय नहीं है, वे तुम्हारे डरसे पहिलेही भाग गये हैं। जो लोग सदा धर्म्म करते हैं उनको कभी दुःख नहीं होता, तुम्हारा कल्याण हो। हम द्वारिकाको जाते हैं, इस लिये आज्ञा दो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके बचन सुन द्रौपदी सहित सब पाण्डव लोग प्रसन्न हुए और आनन्दपूर्व्वक कृष्णसे कहने लगे, हे गोविन्द! हम दुःखसागरमें डूबते थे, तुमने नावके समान हमारा उद्धार किया, तुम्हारा कल्याण हो द्वारिकाको जाओ। पाण्डवोंकी ऐसी आज्ञाको सुन श्रीकृष्ण द्वारिकाको चले गये। महाभाग पाण्डव लोग भी प्रसन्नता पूर्व्वक बनोंको देखते हुए विहार करने लगे। हे राजन्! तुमने जो पूछा था सो हमने कहा। इस प्रकारसे दुष्ट धृतराष्ट्रपुत्र बनबासी पाण्डवोंके सङ्ग दुर्व्यवहार किया करते थे।

२६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार महारथ भरतकुल श्रेष्ठ पाण्डव लोग उस अनेक हरिनोंसे भरे हुए काम्यक वनमें देवतोंके समान विहार करने लगे। सब ऋतुओंमें उत्पन्न हुए अनेक फूलोंको देखते हुए और अनेक बनोंमें रहते हुए विहार करने लगे। इन्द्रके समान पाण्डव लोग सदाही वनमें आखेट करते थे। एक दिन वे सब पुरुषसिंह शत्रुनाशन पाण्डव लोग चारों दिशाको आखेट खेलने गये थे, और द्रौपदीको तृणविन्दकी आज्ञासे आश्रमहीमें छोड़ गये थे, और महा तेजस्वी पुरोहित धौम्य मुनि भी वहीं रह गये थे। उसी समय महायशस्वी वृद्धक्षत्रके पुत्र सिन्धु देशके राजा विवाह करनेकी इच्छासे शाल्व-देशको जाते थे। उनके सङ्ग राजाओंके योग्य सेना सेवक और अनेक राजपुत्रभी थे, और मार्गमें काम्यक वनमें ठहर गये। उस निर्जन वनमें उन्होंने पाण्डवोंकी प्यारी स्त्री द्रौपदीको अपने द्वारपर खड़ी हुई देखा; द्रौपदी अपने तेजसे प्रकाशमान हो रही थी उसके तेजसे वह वन ऐसा प्रकाशमान हो रहा था, जैसे नीला मेघ बिजुलीसे। उनकी सेनाके सब लोग हाथ जोड़कर द्रौपदीको देखने लगे और कहने लगे, क्या यह कोई अप्सरा है? या देवकन्या है? अथवा देवतोंकी बनाई हुई कोई माया है। द्रौपदीको देखकर सिन्धु देशके राजा वृद्धक्षत्रके पुत्र जयद्रथ विस्मित हो गये, और उनके चित्तमें दुष्टता आगई। अनन्तर जयद्रथने कामसे पीड़ित होकर राजा कोटिकाख्यसे कहा, कि यह सुन्दरी किसकी स्त्री है? हमें जान पड़ता है, कि यह मानुषी है; यदि यह स्त्री हमको मिले तो विवाहसे कुछ प्रयोजन नहीं है, मैं इसीको लेकर अपने घरको चला जाऊंगा, हे सौम्य! तुम इसके पास जाकर पूछो कि तुम कौन हो? कहांकी हो? और इस कांटोंसे भरे हुए बनमें क्यों आई हो? यदि यह लोकसुन्दरी उत्तम सुख दांत और पतली कमरवाली मेरे वशमें हो जाय तो मैं कृतकृत्य हो जाऊंगा; हे कोटिकाख्य! तुम इसके पास जाओ और पूछो कि तुम्हारा स्वामी कौन है। जयद्रथके ऐसे वचन सुन कुण्डलधारी कोटिकाख्य अपने रथसे उतरा और द्रौपदीके पास जाकर इस प्रकार पूछने लगा, जैसे कोई सियार सिंहकी स्त्रीसे पूछता है।

२६३ अध्याय समाप्त।

कोटिकाख्य बोला, हे सुन्दर भौंह वाली! तू कौन है? और इस कदम्बकी शाखाको पकड़े यहां क्यों खड़ी है? तू इस वनमें ऐसी प्रकाशमान है, जैसे रात्रिमें पवनसे कम्पित होकर अग्निकी ज्वाला प्रकाशित होती है; तुम अपने रूपसे अत्यन्त प्रकाशमान हो, क्या इस वनमें तुम कुछभी नहीं डरती हो? तुम कोई देवी हो? कि यक्षी हो? कि दानवी हो? अथवा अप्सरा हो? वा किसी उत्तम दैत्यकी स्त्री हो? अथवा साक्षात सर्पराजकी पुत्री हो? या इस बनकी देवता हो? अथवा किसी निशाचरकी स्त्री हो? या राजा, वरुन, यम, कुबेर, चन्द्रमा, धाता, विधाता, सूर्य्य, इन्द्र, आदि किसीकी स्त्री हो? हम तुमको नहीं जानते, न तुम्हारे स्वामीको जानते हैं, इसीसे यह प्रश्न करते हैं; हे भद्रे! हम तुम्हारे मानको बढ़ाकर तुम्हारे नाथको और तुम्हारी जन्मभूमिको जानना चाहते हैं; तुम हमसे अपने पति बन्धु और कुलका वर्णन करो और यह भी कहो कि तुम इस वनमें क्या करती हो? मैं राजा सुरथका पुत्र हूं, मेरा नाम कोटिकाख्य है; ये जो सोनेके रथमें अग्निके समान तेजस्वी पुरुष बैठा है, जिसके नेत्र कमलके समान सुन्दर हैं, इस वोरका नाम क्षेमङ्कर है, और यह त्रिगर्त्त देशका राजा है, उसके आगे जो महा धनुष-धारी राजपुत्र बैठा है, जिसके नेत्र बहुत बड़े हैं, जो तुम्हारी ओर देख रहा है, वह कुलिन्द देशके राजाका पुत्र है; यह सदाही पर्व्वतपर निवास करता है; यह जो तड़ागके समीप श्याम-सुन्दर युवा पुरुष खड़ा है, सो अयोध्याके राजा सुभवका पुत्र है; हे सुन्दरी! यह सब शत्रुओंका नाश करता है; हे सुभगे! जिसके रथके पीछे बारह सौवीर देशके राजपुत्र जाते हैं, जो लाल घोड़ोंके रथोंपर जलती हुई अग्निके समान बैठे हैं, उनके नाम ये हैं, अङ्गा-रक, पुष्कर, गुप्तक, शत्रुञ्जय, सञ्जय सुप्र वृद्ध, भयङ्कर, भमर, रवि, सूर, प्रतप, और कुहन; जिसके पीछे छः सहस्र रथी अनेक हाथी घोड़े और पदाती जाते हैं, वही सौवीर देशका राजा जयद्रथ है; ये जो उनके पीछे महाबलवान युवा पुरुष जाते हैं, इनके नाम बलाहक और अनीकविदारणादि हैं; ये सब राजा जयद्रथके भाई हैं; इनसे रक्षित होकर राजा जयद्रथ इस प्रकार विराजमान हो रहे हैं, कि जैसे मरुतगणसे इन्द्र; हे सुकेशी! हम तुमको नहीं जानते हैं, इससे कहो कि तुम किसकी बेटी हो?

२६४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शिवीवंश श्रेष्ठ कोटिकाख्यके ऐसे बचन सुन राजपुत्री द्रौपदीने कदम्बकी शाखा छोड़ दी, और अपने वस्त्रको संभाल तथा उस मूर्खको ओर देखकर बोली, हे नरेन्द्रपुत्र! मैं तुमको जानती हूं, मेरे समान कोई स्त्री तुझसे बात नहीं कर सकती है; यहां कोई स्त्री वा पुरुष नहीं है जो तेरे वचनका उत्तर दे; मैं इस समय यहां अकेली हूं, इस लिये तेरे बचनका उत्तर नहीं दूंगी, क्योंकि धर्म्म शास्त्रमें लिखा है, कि अकेली स्त्री किसीसे बात न करे; परन्तु मैं तुझको जानती हूं, तू राजा सुरथका पुत्र है, और तेरा नाम कोटिकाख्य है, इस लिये तुझसे अपने बन्धु और प्रसिद्ध बंशका वर्णन करती हूं, हे शैब्य! मैं राजा द्रुपदकी पुत्री हूं; मेरा नाम द्रौपदी है; प्रसिद्ध खाण्डवप्रस्थके राजा युधिष्ठिर भीमसेन अर्ज्जुन, नकुल और वीर सहदेव मेरे पति हैं; वे मुझको यहां बिठलाकर चारों दिशाओंको आखेट करने गये हैं; पूर्व्वको ओर महाराज, दक्षिणको भीमसेन, पश्चिमको अर्ज्जुन, और उत्तरको नकुल तथा सहदेव गये हैं, उन पांचों महारथके आनेका समय भी यही है, इस लिये

तुम लोग अपने रथोंसे उतरकर यहीं ठहरो; महाराज धर्म्मराज अतिथियोंका बहुत सत्कार करते हैं; वे तुमको देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। चन्द्रमुखी द्रौपदी ऐसा कहकर अपनी सुन्दर पर्णकुटीमें चली गई।

२६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! द्रौपदीके ऐसे वचन सुन कोटिकाख्य जयद्रथके पास गया और सब क्षत्रियोंके बीचमें उसके वचन कह सुनाया। तब जयद्रथने कोटिकाख्यसे कहा कि जब यह स्त्री कुछ बात करती है, तो मेरा मन उसही पर चला जाता है; यह सब स्त्रियोंमें मुख्य है; तुम इसके पाससे कैसे चले आये; हे महाबाहो! हम तुमसे सत्य कहते हैं, कि इसको देखकर और सब स्त्रियां मुझको दासी सी दिखाई देती हैं, इसने मेरे मनको अपने वशमें कर लिया है; तुम हमसे कहो कि यह मानुषी है? कोटिकाख्य बोला, हे राजन्! यह यशस्विनी द्रौपदी है; यह पांचों पाण्डवोंकी पतिव्रता प्यारी स्त्री है; पांचों पाण्डव इसको मानते हैं, सो तुम इससे सन्धी करके अपने देशको चलो। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कोटिकाख्यके ऐसे वचन सुनकर जयद्रथ बोले, कि हम द्रौपदीको देखेंगे। ऐसा कहकर दुष्ट जयद्रथ पवित्र कुटीमें इस प्रकार गया, जैसे सिंहके घरमें सियार जाता है। पांच पुरुष जयद्रथके सङ्ग गये; वे पांच उसके भाई थे। जयद्रथ वहां जाकर द्रौपदीसे बोला, हे सुन्दरमुखवाली! तू कुशलसे हो? तेरे पांचो पति तो अच्छे हैं न? जिनको तू कुशल चाहती है वे अच्छे हैं न? द्रौपदी बोली हे राजेन्द्र! तुम अच्छे हो? तुम्हारे राज्यमें कोषमें और सेनामें तो कुशल है? कहो तुम सौवीर सिंधु और शिबिदेशका धर्म्मसे राज्य करते हो? हमने सुना है, कि तुमने औरभी बहुतसे देशोंको अपने राज्यमें मिलाया है, श्रीमान महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित कुशलसे हैं; हे राजपुत्र! इस जलसे पैर धोकर, इस आसन पर बैठ जाइये। हम आपको खानेकेलिये पांच सौ हरिन देंगे, प्रशतुन्यंकू (ये सब हरिनोंकी जाती है) शरभ, खरहे, रीछ, रुरु, शम्बर, हरिन, सूवर, और भैंसे आदि अनेक जन्तु तुमको देंगे, स्वयम महाराज युधिष्ठिर ही आपका सत्कार करेंगे। जयद्रथ बोला, हे सुन्दरी! हमारे यहां सब कुशल है, तुमने जो कुछ कहा हमको सो सब प्राप्त होगया, अब तुम रथपर बैठकर-हमारे संग चलो और सुखसे समय बिताओ; पाण्डव लोग मूर्ख हैं; उनकी लक्ष्मी और राज्य नष्ट होगये हैं, तुम वनवासियोंकी स्त्री होनेके योग्य नहीं हो; तुमको मूर्ख निर्धन युधिष्ठिरकी सेवा करके संग नहीं रहना चाहिये; पाण्डवलोग बहुत दिनके लिये लक्ष्मी और राज्यसे नष्ट होगये हैं, उनको सेवा करनेसे तुम्हें कुछ लाभ नहीं है; केवल क्लेशही भोगना है; हे सुन्दरी! तुम पाण्डवोंको छोड़ हमारी स्त्री होजाओ; तब अनेक सुखोंको प्राप्त करोगी; तुम हमारे सङ्ग सिन्धु और सौवीर देशका राज्य करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जयद्रथके ऐसे वचन सुनकर सुन्दर मुख और भृकुटिवाली द्रौपदी वहांसे भागी और अपने पतियोंका मार्ग देखती हुई जयद्रथसे बात करने लगी;

२६६ अध्याय समाप्त।

सुन्दरी द्रौपदी कहने लगी; रे मूर्ख! तू यशस्वी, तीक्ष्ण विषवाले, महारथ इन्द्रके समान पराक्रमी, यक्ष और सर्पोंके जीतनेवाले धार्म्मिक पाण्डवोंको क्यों क्रोधित करता है? हे कुवीर! चाहे घरमें रहनेवाला हो चाहे वनवासी हो अथवा पूर्ण विद्वान तपस्वी भी क्यों न हो किसीको भी पाप करना

अच्छा नहीं है; जैसे तू बकता है वैसेही कुत्ते भी भोंका करते हैं; मैं जानती हूं कि तेरे संगके चत्रियोंमें कोई भी ऐसा वीर नहीं है, जो पातालमें गिरते हुए तुभको अपने हाथसे पकड़कर निकाले; तू बड़ा मूर्ख है जो धर्म्म-राजको जीतनेको कहता है यह बात वैसेही है जैसे कोई मूर्ख एक लठ्ठी हाथमें लेकर कहे कि मैं हिमाचलके नीचे घूमते हुए, पर्व्वतके समान शरीरवाले मतवारे हाथीको उसके यूथके बीचमेंसे पकड़ लूंगा; जिस समय क्रोधी भीम-सेनको युद्धमें देखकर भागेगा तब विचारेगा कि हाय मैंने मूर्खतासे सोते हुए, महाबलवान सिंहके बालोंको खींचा था; तू जिस समय बलवान अर्ज्जुनसे युद्ध करेगा उस समय कहेगा कि महाबलवान पर्व्वतकी गुफामें उत्पन्न हुए, सोते हुए, सिंहको वृथा जगाया; जिस समय वीर नकुल सहदेव तेरे आगे युद्ध करनेको आवेंगे उस समय तू कहेगा मैंने सोते हुए दो जीभ वाले विषसे भरे हुए दो काले सांपोंकी पूंछ पर वृथा लात मारी; जिस प्रकार बांस केला और नलका वृक्ष फल लगनेसे नष्ट हो जाता है, जैसे कर्कटी गर्भको धारण करके अपना प्राण नाश कर देती है, तैसेही मुझको दुर्व्वाक्य कहकर तू भी नष्ट हो जायगा। जय-द्रथ बोले, हे द्रौपदी! पाण्डव लोग जैसे हैं उनको हम अच्छी प्रकार जानते हैं, तेरी इन डरावनी बातोंसे हम डर नहीं सकते; हे द्रौपदी! हम उस सनातन वंशमें उत्पन्न हुए हैं जिसमें राजोंके सत्रह कर्म्म, छः गुण विराज-मान हैं और पाण्डव लोग इन सबसे रहित हैं, सो तू शीघ्र हाथी अथवा रथपर चढ़ले क्योंकि केवल बचन मात्रसे हम तुभको नहीं छोड़ेंगे, या दीन होकर सौवीर देशके राजाको प्रसन्न-कर। द्रौपदी बोली, मैं बहुत बलवती हूं परन्तु इस समय तुमसे दुर्व्वलके समान बात कर रही हूं; मैं अपने पकड़े जानेपर भी तुमसे दीन बचन नहीं कहूंगी, क्योंकि जिसके ढूंढ़नेको साक्षात कृष्ण और अर्ज्जुन एक रथपर बैठकर चलेंगे, उसे साक्षात इन्द्रभी नहीं छीन सकता है, और चुद्र मनुष्योंकी कथाही क्या है? जिस समय साक्षात अर्ज्जुन रथपर बैठकर अपने शत्रुओंके मनको निराश करते हुए तुम्हारी सेनामें घुसेंगे उस समय तुम्हारी सेना ऐसे नष्ट हो जायगी जैसे अग्नि लगनेसे सूखा काठ, जिस समय अन्धक और वृष्णिवंशियोंके समेत साक्षात श्रीकृष्ण तुभसे युद्ध करनेको आवेंगे, और काश्मीर देशके सब राजपुत्र प्रसन्न होकर युद्ध करनेको उपस्थित होंगे, तब तू कुछभी नहीं कर सकेगा; जिस समय गाण्डीव धनुषके रोदेसे छूटकर घोर वेगवाले अर्ज्जुनके बाण तेरी सेनामें आकर घोर शब्द करेंगे, तब तू क्या करेगा? जिस समय महावेगवाले अग्निमें पड़े पतंगोंके समान अर्ज्जुनके बाणोंको और वीर अर्ज्जुनको देखेगा, उस समय तू अपनी इस बुद्धिकी निन्दा करेगा; जिस समय शंख, पञ्जे और गाण्डीव धनुषका शब्द करके अर्ज्जुनके बाण तेरे हृदयके रुधिरको पीवेंगे, उस समय न जाने तेरा मन कैसा होगा? रे अधम! जिस समय गदा हाथमें लेकर भीमसेन युद्धमें आवेंगे; और जब नकुल तथा सहदेव क्रोधके विषको छोड़ते हुए सब ओरसे तेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा करेंगे, उस समय तू बहुत दिन तक दुःख भोगेगा; जिस प्रकार से मैं अपने महात्मा पतियोंका मनसेभी निरा-दर नहीं करती हूं उसी सत्यसे मैं तुमको पाण्डवोंके वशमें पड़ा हुआ और भीमसेनके हाथसे बाल पकड़कर खिचता हुआ देखूंगी; मैं घबड़ाकर तुभ दुष्टके हाथसे खिंच कर चलना अच्छा नहीं समझती, मुझे निश्चय है कि जब महात्मा पाण्डव लोग आवेंगे तब मैं काम्यक बनमें आऊंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, विशालनैनी द्रौपदी इस प्रकारसे उन सबको डराती हुई

भयसे कांपने लगी, और जयद्रथसे कहने लगी कि तू मुझे मत छुये, और डरसे धौम्य पुरोहितको पुकारने लगी ! उसी समय जयद्रथने द्रौपदीका दुपट्टा पकड़ा और द्रौपदीने उसे एक झटका दिया, वह पापी झटका लगनेसे इस प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़ा, जैसे जड़ कटनेसे वृक्ष गिर पड़ता है, परन्तु फिर उठकर उसने वेगसे द्रौपदी को पकड़ लिया। तब द्रौपदी लम्बे खांस लेने लगी और परोहित धौम्यको प्रणाम करने लगी। तब जयद्रथने खींचकर द्रौपदीको अपने रथपर बिठला लिया। श्रीधौम्यमुनि बोले,हे जयद्रथ! पाण्डवोंको बिना जीते तुम द्रौपदीको नहीं लू सकते हो क्योंकि चत्रियोंका सनातन धर्म यही है, तू युधिष्ठिरादिक पाण्डवोंके सङ्ग पाप करके महा दुःखमें पड़ेगा। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर महात्मा धौम्य राजपुत्री यशस्विनी द्रौपदीके रथके पीछे पैदलोंके सङ्ग दौड़ने लगे।

२६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय जगत प्रसिद्ध धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोगभी चारों ओरसे हरिन, और भैंसोंको मारकर एक स्थानपर इकट्ठे हुए। उस समय वनमें हरिन और हाथी घूम रहे थे, और पक्षी शब्द करते फिरते थे। इन सबके शब्दोंको सुनकर महाराज युधिष्ठिरने अपने भाइयोंसे कहा, देखो यह हरिन और पक्षी लोग सूर्य्यकी ओर मुख करके घोर शब्द कर रहे हैं; हमको जान पड़ता है कि कुछ घोर उपद्रव होगा ; हमको निश्चय है कि किसी शत्रुने हमारे आश्रमको घेर लिया है ; मेरा मन बहुत घबड़ाता है ; बुद्धि क्रोधसे नष्ट हुई जाती है ; इस लिये तुम शीघ्र लौटो ; हमको और हरिन मारनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है ; हमें इस समय काम्यक वन ऐसा दीखता है कि जैसे किसी उत्तम तड़ागमेंसे गरुड़ने सर्पको निकाल लिया हो ; जैसे किसी धन धान्य भरे राज्यमेंसे राजा निकल गया हो ; जिस प्रकार किसी घड़ेका जल हस्ती पी गया हो और वे शोभा रहित होगये हों, ऐसेही इस वनकी शोभा मुझे दीखती है। तब पाण्डव लोग महाराजकी आज्ञा सुनते ही, सिन्धु देशके घोड़ोंसे युक्त रथोंपर बैठकर वायुके समान वेगसे चले। पुरुषवीर पाण्डव लोग अपने महारथोंपर बैठकर, आश्रमकी ओर आए। जिस समय वे लोग आश्रमकी ओर चले, उस समय अनेक सियार उनकी बांई ओर बोलने लगे ; तब महाराजने भीमसेन और अर्जुनसे कहा, कि देखो, सियार हमारे बांई ओर बोल रहे हैं, इससे निश्चय होता है कि, दुष्ट धृतराष्ट्रपुत्रोंने हमारे आश्रमपर आकर कोई घोर उपद्रव किया है। इस प्रकार ये लोग बात करते चले आते थे। इतनेहीमें देखा कि द्रौपदीकी प्यारी धात्री और दूतकी स्त्री रो रही है। उसी समय इन्द्रसेन शीघ्र रथसे उतरा, और दौड़कर धात्रीके पास गया तथा कहने लगा कि हे धात्री ! तू पृथ्वीमें पड़ी हुई क्यों रो रही है ? तेरा मुख क्यों सूख गया है ? तेरे मुखका वरण क्यों दीन होगया है ? कहो पाण्डवके समान रूपवाली विशालनैनी राजपुत्री द्रौपदीको कोई दुष्ट समुद्र, पृथ्वी और स्वर्गमेंभी ले गया होगा, तो वहांसे भी पाण्डव लोग द्रौपद को ले आवेंगे, क्योंकि धर्म्मराज उनके लिये बहुत दुःख कर रहे हैं। जगतमें ऐसा कौन वीर है जो शत्रुनाशन क्लेश सहनेवाले पाण्डवोंकी प्यारी स्त्रीको ले जाय ? यह काम तो वैसाही हुआ जैसे कोई मूर्ख उत्तम रत्नको चुरा ले ; मुझको यहां द्रौपदी नहीं दीखती है, वह द्रौपदी पाण्डवोंका हृदय है ; आज पाण्डवोंके तीक्ष्ण वाण किसके हृदयको छेदकर पृथ्वीमें प्रवेश करेंगे , हे धात्री ! तू कुछ सोच मत कर

शीघ्र बता दे, द्रौपदीको कौन लेगया; क्योंकि तेरे कहनेसे पाण्डव सब शत्रुओंको मारकर द्रौपदीको छीन लावेंगे। इन्द्रसेनके वचन सुन अपने सुखको पोंछकर धात्री बोली, हे सारथे! इन्द्रके समान पांच पाण्डवोंका निरादर करके जयद्रथ द्रौपदीको खींचकर ले गया। देखो अभी रथोंके पहियेभी मार्गमें लगे हैं; अभी टूटे हुए वृक्षोंके पत्ते मलीन भी नहीं हुए, इससे जान पड़ता है कि अभी द्रौपदी दूर नहीं गई; तुम शीघ्र दौड़ो और इन्द्रतुल्य पाण्डवोंको युद्धके वास्ते भेजो; उनसे कहो कि धनुष और बाण लेकर शीघ्र द्रौपदीको ढूंढें; जबतक कोई दुष्ट द्रौपदीके शरीरको न छुवे, तब तक कोई तुसको अग्निमें घीकी आहुती न दे, जब तक कोई श्मशानमें माला न चढ़ावें, जब तक ब्राह्मणोंके बीचमें कोई कुत्ता सोम न पीवे, जबतक महावनमें आखेट खेलकर कोई सियार उत्तम तालावमें स्नान न करे, जबतक कोई कुत्ता यज्ञकी खीरको न खाय, जबतक द्रौपदीके उत्तम नेत्रवाले चन्द्रमाके समान सुखको कोई दुष्ट न छुए, इतनेही समयमें इन मार्गोंसे तुम लोग शीघ्र दौड़ो; महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भद्रे! तुम हमसे ठोक कहो; हम लोगोंके सन्मुख कठोर वचन मत कहो; हम अनेक राजा और राजपुत्रोंको अपने बलसे मार सकते हैं। ऐसा कहकर पाण्डव लोग शीघ्र उसी मार्गसे चले और अपने धनुष पर सर्पके समान रोदे चढ़ाने लगे। थोड़ी दूर जाकर पाण्डवोंने सेनाके घोड़ोंके खुरोंसे उड़ती हुई धूलीको देखा; आगे चलके देखाकि पदातियोंके बीचमें पाण्डवोंको पुकारते हुए धौम्य चले जाते हैं। तब दीन पाण्डवोंने धौम्यको शान्त किया, और कहा कि आप सुखसे धीरे धीरे आइये, ऐसा कह पाण्डव इस प्रकार वेगसे दौड़े कि, जैसे मांस खानेको बाज दौड़ता है। उसी समय पांचों पाण्डवोंने अपनी प्यारी स्त्रीको जयद्रथके रथमें बैठी हुई देखा। द्रौपदी को देखते ही, पाण्डवोंका क्रोध अग्निके समान तेज होगया, और बार बार ललकारने लगे।

२६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेन और अर्जुनको देखकर जयद्रथकी सेनाके क्रोधी क्षत्री लोग, घोर शब्द करने और पाण्डव लोग भी गर्जने लगे। तब उस वनमें महा घोर शब्द होने लगा। कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डवोंकी ध्वजाओंको देखकर नीच राजा जयद्रथ रथमें बैठी द्रौपदीसे कहने लगा हे द्रौपदी! ये पांचों महारथ तेरे पति आते हैं, हे सुकेशी! तू हमसे इन पांचोंका अलग अलग वर्णन कर। द्रौपदी बोली रे, मूर्ख! इन पांचोका नाम सुनकर क्या करेगा; ये मेरे पांचो पति महा धनुषधारी और महावीर हैं, तैंने इनका घोर निरादर किया है; इससे निश्चय कर ले कि तेरी सेनामें कोई जीता नहीं है; मैं भाइयोंके सहित धर्म्मराजको देखकर अब तुझसे कुछ नहीं डरती; रे मूर्ख! तैंने मुझसे प्रश्न किया है, इससे पाण्डवोंका वर्णन करना ही मेरा धर्म्म है। जिसकी रथकी ध्वजापर, सुन्दर रूपवाले नन्द और उपनन्द मृदङ्ग बज रहे हैं, जिस धर्म्म और अर्थ जाननेवालेके पीछे अनेक महात्मा लोग चलते हैं, जिसका रङ्ग शुद्ध सोनेके समान है, जिसकी नासिका ऊंची और नेत्र बड़े हैं, ये ही कुरुकुल प्रधान मेरे पति धर्म्मराज युधिष्ठिर हैं, ये ही महात्मा शरण आये शत्रुको भी प्राणदान देते हैं; ये बहुत धर्म्मात्मा और महावीर हैं, अरे मूर्ख! तू शस्त्र और अस्त्रोंको छोड़ कर तथा हाथ जोड़कर इनकी शरण जा, तब तेरा कल्याण होगा; ये जो शाल वृक्षके समान ऊंचे विशालबाहु टेढ़ी भौं, और भृकुटीवाले रथमें बैठे हैं जो अपने होठोंको दांतसे चबा रहे हैं, उन्हींका नाम भीमसेन है, जिसके कर्मोंको

देखकर महा बलवान वोरोंने इन्हें साधु पदवी दी है, जिसके अमानुष कर्म्मने भीम ऐसा नाम प्रसिद्ध किया है, ये वही हमारे स्वामी भीमसेन हैं, इनका अपराध करके कोई जीता नहीं बचता; ये अपने बैरको कभी नहीं भूलते हैं, वे बिना बैरका अन्त किये शान्त नहीं होते। जो धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ बुद्धिमान तेजस्वी जितेन्द्रिय पुरुष वीर राजा युधिष्ठिरके शिष्य और भाई हैं वही अर्ज्जुन नामक हमारे पति हैं ये काम क्रोध लोभ और मोहसेभी कर्म्म और धर्म्मको नहीं छोड़ते और कभी अधर्म्मका काम नहीं करते; येही शत्रु नाशक अग्निके समान तेजस्वी कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन हैं। जो सब धर्म्म और अर्थके निश्चयोंको जानते हैं, यही सब डरनेहारे पुरुषोंका भय नाश करते हैं, जिनके समान पृथ्वीमें कोई सुन्दर नहीं है, पाण्डव लोग सदा जिनकी रक्षा करते हैं, जो पाण्डवोंको प्राणसे भी अधिक प्यारे हैं, उन्हीका नाम नकुल है। जो खड्गसे विचित्र युद्ध करते हैं जिनका हाथ बहुतशीघ्र चलता है वेही अद्वितीय वीर सहदेव हैं। अरे मूर्ख! तुम वोर सहदेवके कर्म्मको युद्धमें इस प्रकार देखोगे जैसे इन्द्रके कर्म्मको राक्षस लोग देखते हैं। ये महात्मा तेजस्वी शस्त्रविद्याके जाननेवाले और धर्म्मराजके प्रियकार्य्य कर्त्ता हैं; यही महात्मा सहदेव चन्द्रमा और सूर्य्यके समान तेजस्वी सब भाइयोंमें छोटे और पाण्डवोंके प्रिय हैं; इनके समान पृथ्वीमें कोई पण्डित, वक्ता बुद्धिमान और निश्चयकर्त्ता नहीं है; वे हो हमारे स्वामी सहदेव शूरवीर क्षमावान और महापण्डित हैं। ये प्राणोंको त्याग दें, अग्निमें प्रवेश कर जायं, परन्तु अधर्म्म कभी नहीं करेंगे। ये मनस्वी सदा क्षत्रियोंके पालनेवाले महावीर और कुन्तीको प्राणके समान प्यारे हैं। अब तुम्हारी सेनाकी वह दशा है, कि जैसे रत्नोंसे भरी हुई टूटी नाव समुद्रके वीचमें किसी मछलीकी पीठमें धरी हो। अब थोड़े समयमें तुम देखोगे कि पाण्डवोंने तुम्हारी सब सेनाका नाश कर दिया। जिन पांचों पाण्डवोंका मैंने वर्णन किया उन्हींका तुमने निरादर किया है; यदि तुम इनसे जीते बच जाओ तो तुम्हारा दूसरा जन्म होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय इन्द्रके समान पांचो पाण्डव लोग डरी हुई और हाथ जोड़ती पैदलसेनाको छोड़कर जयद्रथकी प्रधान सेनापर क्रोध करके बाणोंकी वर्षा करने लगे, और अन्धकार कर दिया

२३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डवोंका युद्ध करते देख सिन्धु देशका राजा जयद्रथ अपने साथी राजोंसे कहने लगा कि, तुम लोग शस्त्र चलाओ दौड़ो, स्थिर रहो, युधिष्ठिर भीमसेन अर्ज्जुन नकुल और सहदेवको युद्धमें देखकर सिन्धु और सौवोर देशके क्षत्री गर्जने लगे। उस समय रणभूमिमें घोर शब्द होने लगा; सिंहके समान बलवान पाण्डवोंको देख अनेक क्षत्री लोग युद्ध करनेको उपस्थित हो गये। उस समय सोनेसे खिचो हुई लोहेकी गदाको लेकर भीमसेन जयद्रथकी ओर दौड़े। तब भीमसेनके आगे महारथ सेनाको लिये हुए कोटिकाख्य आया। और उस सेनाने भीमके ऊपर शक्ति, तोमर तथा बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी; परन्तु उनसे भीम कुछभी न डरे और वोरोंके सहित चौदह हाथियोंका तथा अनेक पैदलोंको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया। उनके मरनेसे जयद्रथको सेनाका मुख टूट गया। अर्ज्जुनभी सेनाके आगे लड़ते हुए महारथ पांच सौ वीरोंको मारा और जयद्रथको ढूढ़ने लगे। उस समय धर्म्मराजने भी सुवीर देशोत्पन्न शस्त्र वाले सौ वीरोंको क्षण भरमें मार डाला। उस समय वीर नकुल खड्ग लेकर अपने रथसे उतरे और पैदल सेनामें प्रवेश किया और इस प्रकार

वीरोंके शिर काटकर पृथ्वीमें गिराने लगे, जैसे कोई किसान बीज बोता है। सहदेवने अपने रथको गजसेनाकी ओर चलाया और इस प्रकार वीरोंके सिर काटकर गिराने लगे जैसे वृक्षोंसे मरे हुए पक्षी गिरते हैं। उसी समय त्रिगर्त्त देशका राजा गदा लेकर अपने रथसे उतरा और महाराजके चारों घोड़ोंको मार दिया। जब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने त्रिगर्त्त-राजको अपने पास खड़ा देखा तो अर्द्धचन्द्रसे उसके हृदयको विदीर्ण कर दिया। उसी समय वह वीर अपने मुखसे रुधिर गिराता हुआ जड़ कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीमें गिर पड़ा। तब इन्द्रसेनके सहित महाराज पृथ्वीमें उतरे और सहदेवके रथपर चढ़ गये। उसी समय नकुलसे युद्ध करनेको क्षेमङ्कर और महामुख आए। वे दोनों ओरसे वर्षाकालके मेघके समान, बाण और तोमरोंकी वर्षा करने लगे। उसी समय नकुलने एक एक खड्गसे दोनोंको मार दिया। उसही समय त्रिगर्त्त देशके राजा सुरथ अपने हाथीको चलाकर नकुलसे युद्ध करनेको आये। सुरथके हाथीने नकुलके रथकी धुरीको पकड़कर रथको उलट दिया। नकुल भी निडर होकर खड्ग और ढाल लेकर रथसे नीचे उतरे, और एक स्थानमें पर्वतके समान अचल होकर खड़े होगए। तब सुरथने क्रोध करके घण्टा भूषित और विशाल सुण्डवाले हाथीको नकुलके मारनेको चलाया। जब नकुलने उस हाथी को अपने पास आते हुए देखा, तो अपने खड्गसे दांतोंके समेत उसका शुण्ड काट दिया। वह हाथी सुण्ड कटनेसे महाशब्द करके पृथ्वीमें गिर गया और उसके चढ़े हुए वीर भी उसके नीचे दबकर मर गये। वीर माद्रीपुत्र नकुलने इस महा कर्मको सिद्ध करके भीमसेनसे युद्ध करते हुए कोटिकाख्यके सारथीको अपने बाणोंसे मार दिया। राजा कोटिकाख्यने यह न जाना कि बलवान भीमसेनने हमारे सारथीको मार डाला। तब उसके घोड़े इधर उधर घूमने लगे। जब शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ भीमसेनने देखा कि कोटिकाख्य युद्धसे भागा, तो एक प्राससे उसको मार डाला। वीर अर्ज्जुनने अपने तीक्ष्ण बाणोंसे बारह सौवीर देशी राज पुत्रोंके धनुष और सिर काट दिये। शिवी, इक्ष्वाकु, त्रिगर्त्त, और सिन्धु देशके जो वीर युद्ध करनेको आये उन सबको अर्ज्जुनने मारडाला। अर्ज्जुनके मारे हुए ध्वजा और पताकोंके सहित अनेक महारथ और हाथी पृथ्वीमें गिर गये। उस समय बिना सिरके शरीर और बिना शरीरके सिर समस्त रण-भूमिमें भर गये। कुत्ते गिद्ध सियार और कौवोंने तृप्त होकर रुधिर पिया और मांस खाया। अपने सङ्गके सब वीरोंका मरा हुआ देख, सिन्धुराज जयद्रथ बहुत डरा, और द्रौप-दीको छोड़कर भागनेकी इच्छा करने लगा। जब इस प्रकार सेनामें हाहाकारका शब्द हुआ तो जयद्रथने कहा कि द्रौपदीको रथसे उतारो, और फिर द्रौपदीको छोड़कर घोर बनकी ओर भाग गया। जब धर्म्मराजने देखाकी धौम्यके सहित द्रौपदी पृथ्वीमें खड़ी है, तो उसको सहदेवके रथपर चढ़ा लिया। जयद्रथके भागते ही उसकी सब सेना इधर उधर भाग गई। उस समय भीम-सेन प्रत्यक्ष और गुप्त बाणोंसे उन सबको मारने लगे। तब अर्ज्जुनने कहा कि, जिस दुष्टके अपराधसे हम लोगोंको महा कष्ट हुआ है, वह जयद्रथ युद्धमें नहीं दीखता; अब उस जयद्रथको ढूंढ़ना चाहिये, क्योंकि इन निरपरा-धियोंको मारना उत्तम नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान अर्ज्जुनके ऐसे बचन सुन युधिष्ठिरके पास जाय, पण्डित भीमसेन कहने लगे, हे राजन्! सब शत्रु लोग मारे गये और बचे हुए इधर उधरका भाग गये, अब आप द्रौपदी, नकुल,सहदेव और महात्मा धौम्यको सङ्ग लेकर आश्रमको लौट

जाइये, और वहां जाकर द्रौपदीको शान्त-कीजिये। यदि मूर्ख जयद्रथ पातालमें भी घुस जायगा, और साक्षात इन्द्रभी उसका सारथी बनेगा, तो भी आज वह मुझसे जीता नहीं बचेगा। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महा-बाहो! यद्यपि जयद्रथ बड़ा दुष्ट है, तो भी तुम उसको मारना मत, क्योंकि उसके मरनेसे दुःशला बिधवा हो जायगी, और यशस्विनी गान्धारी कोभी बड़ा दुःख होगा; तुम इन दोनोंका स्मरण करके उचित कर्म्म करना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराजके ऐसे वचन सुन क्रोधसे व्याकुल लज्जावती पण्डिता द्रौपदी भीम और अर्ज्जुनसे बोली, यदि तुम मेरा प्रियकार्य्य करना चाहते हो, तो पापी दुर्बुद्धि पुरु-षाधम कुलकलङ्क जयद्रथको अवश्य मार-डालना; जो शत्रु स्त्रीको छीने, राज्यको छीने, उस दुष्टकी भीख मांगने परभी जीता छोड़ना न चाहिये। राजा और द्रौपदीके ऐसे बचन सुन पुरुषसिंह भीम और अर्ज्जुन जयद्रथके मारनेको चले; राजाभी द्रौपदी और पुरोहित को सङ्ग लेकर आश्रमको लौट आये। उन्होंने अपने आश्रमपर आकर मार्कण्डेय आदि मुनि-योंको देखा। वे सब ब्राह्मण लोग, सावधान होकर द्रौपदीका सोच कर रहे थे। उसी समय अपने भाई और द्रौपदीके सहित महा पण्डित युधिष्ठिरभी अपने आश्रमपर पहुंच गये। जब सब ब्राह्मणोंने देखा कि सिन्धु और सौवीर देशके वीरोंको जीतकर महाराज आये और द्रौपदीको भी देखा तो बहुत प्रसन्न हुए। महा-राज युधिष्ठिर ब्राह्मणोंके बीचमें बैठ गये। द्रौपदी नकुल और सहदेवके सहित आश्रमके भीतर चली गयी।

जब भीमसेन और अर्ज्जुनने सुना कि जय-द्रथ एक कोस तक भाग गया, तो अपने हाथसे घोड़ोंको शीघ्र हांकने लगे। उसी समय अर्ज्जुनने एक अद्भुत कर्म्म किया अर्थात एक कोससे जयद्रथके घोड़ोंको मार दिया, अत्यन्त कठिन समयमें भी अर्ज्जुनको भ्रम नहीं होता था, और वे दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाले थे, इसहीसे दिव्य मन्त्रोंके बलसे कठोर कर्मोंको भी सिद्ध कर लेते थे। अनन्तर भीमसेन और अर्ज्जुन क्रोध करके जयद्रथके पीछे दौड़े, जब डरे हुए, व्याकुल और अकेले जयद्रथने देखा कि मेरे घोड़े और सारथी सब मारे गये, और अर्ज्जुन बहुत पराक्रम कर रहे हैं, तब रथको छोड़कर घोर बनमें भागा। जब अर्ज्जुनने देखा कि सिन्धुराज भागे जाते हैं, तो पुकार कर कहने लगे कि हे वीर! तुमको भागना उचित नहीं है, क्या इसी बलसे दूसरेकी स्त्रीको छीनना चाहते थे? तुमको अपने सङ्गियोंको छोड़कर भागना उचित नहीं है, शत्रुओंके आगेसे भागना तुम्हारा धर्म्म नहीं है। अर्ज्जुन-के ऐसे वचन सुनकरभी जयद्रथ न लौटे, तब भीमसेनने कहा रे मूर्ख! खड़ा रह, खड़ा रह, ऐसा कहके उसके मारनेको वेगसे दौड़े। तब दयावान अर्ज्जुनने कहा कि इसको मत मारो।

२७० अध्याय समाप्त।

द्रौपदी हरण पर्व्व समाप्त।

अब जयद्रथ विमोक्षण पर्व्व लिखते हैं

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे-जय! जब राजा जयद्रथने देखा कि भीम और अर्ज्जुन हमारे पीछे शस्त्र लिये चले आते हैं, तो प्राणको बचानेकी इच्छासे सावधान होकर भागने लगा। तब बलवान भीमसेनने रथसे उतर कर दौड़ते हुए जयद्रथके बाल पकड़ लिये, और उठाकर पृथ्वीमें पटक दिया, और उसके सिरपर लात मारने लगे। तब दयावान अर्ज्जुनने क्रोधी भीमसेनसे कहा, कि हे कौरव! महाराजने आज्ञा दी है कि दुःशलाको बिधवा न करना। भीमसेन बोले, यह पापी

दुराचारी हमसे जीता वचनेके योग्य नहीं है, इस पुरुषाधमने दुःख न भोगनेके योग्य द्रौपदीको दुःख दिया है, परन्तु हम क्या करें राजा सभीके ऊपर कृपा कर देते हैं, और तुम भी मूर्खतासे हमारे सब कर्मोंमें बाधा देते रहते हो। ऐसा कहकर भीमसेनने अर्द्धचन्द्र बाणसे जयद्रथके सिरके बाल मूड़ दिये, और उसके सिरपर पांच चोटी रख दी, और उसको गाली देकर कहा रे मूर्ख! यदि तू अपने जीनेकी इच्छा करता है तो हम जो कहते हैं उसको सुन; तू सब पण्डितोंकी सभामें कह दे कि हम पाण्डवोंके दास हैं तब तेरा जीवदान दिया जायगा, युद्धमें जीते हुए शत्रुओंको ऐसाही करना चाहिये। ऐसा कहकर शत्रुनाशक पुरुषसिंह भीम उसको खींचने लगे। तब उसने कहा कि हम चलकर महाराजके आगे ऐसेही कह देंगे। तब भीमसेनने धूलमें लिपटे हुए, मूर्च्छित जयद्रथको बांध लिया और रथमें डाल दिया। तब भीमसेन और अर्जुन राजाके पासको चले और जाकर बांधे हुए जयद्रथको आगे खड़ा कर दिया। तब महाराज जयद्रथको बंधा हुआ देख हंसे और अपने भाइयोंसे कहा कि इसे छोड़ दो और महाराज भीमसेनसे बोले, कि इस मूर्खको द्रौपदीके पास ले जाओ और जाकर द्रौपदीसे कहो कि यह पापी पाण्डवोंका दास होगया, अब यदि हमारी आज्ञा मानती हो तो जीता छोड़ दो। द्रौपदीने युधिष्ठिरकी ओर देख भीमसेनसे कहा कि, यदि यह महाराजका दास होगया और तुमने इसके सिरपर पांच शिखा भी रख दी तो अब इसे छोड़ दो। तब भीमसेनने राजा जयद्रथको छोड़ दिया! जयद्रथने छूटकर महाराज युधिष्ठिर और सब मुनियोंको प्रणाम किया तथा बहुत व्याकुल होकर बैठ गया। तब दयावान धर्म्मराज युधिष्ठिरने जयद्रथसे कहा कि तुमको हम दास भावसे छुड़ा देते हैं, अब जहांको तुम्हारी इच्छा हो तहांको चले जाओ; परन्तु ऐसा कर्म्म फिर कभी न करना; तुम दूसरेकी स्त्रीकी इच्छा रखते हो, इस लिये तुम्हें धिक्कार है; तुम क्षुद्र हो और तुम्हारे सहायक भी क्षुद्र हैं, तुम्हारे सिवा कौन नीच पुरुष ऐसे कर्म्मोंको करेगा, जब महाराज युधिष्ठिरने उस पापी जयद्रथको निर्ब्बलके समान बैठे हुए देखा, तो उसके ऊपर कृपा करी और कहा कि हे जयद्रथ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम अपने घोड़े रथ और पैदलोंके सहित चले जाओ; सदा धर्म्म करते रहना और अधर्म्ममें अपनी बुद्धिको कभी मत लगाना। राजाके ऐसे बचन सुन, लज्जासे नीचे मुख करके जयद्रथ चला गया! हे राजन! जयद्रथ वहांसे गङ्गाद्वार तीर्थको गया और वहां जाकर पार्ब्बतीपति शिवको तपस्या करने लगा। शिव उसके घोर तपसे प्रसन्न हुए। अनन्तर त्रिनेत्र शिवने प्रगट होकर उसकी दी हुई बलिको ग्रहण किया, और उससे कहा कि जो तेरी इच्छा हो सो वर दान मांग। तब उसने कहा कि मैं पांचों पाण्डवोंको रथके सहित युद्धमें जीतूं। तब शिवने कहा ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि पाण्डव लोग, अजेय और अवध्य हैं; परन्तु तुम अर्ज्जुनको छोड़कर और सब पाण्डवोंको युद्धमें बारण कर दोगे क्योंकि अर्ज्जुन नर नामक देवताके अवतार हैं; इन्होंने नारायण के सहित बदरिकाश्रममें बहुत तपकिया है; उनको लोकमें कोई भी नहीं जीत सकता, वह देवतोंसेभी अजेय हैं, हमने उनको दिव्य पाशुपत बाण दिया है और लोकपालोंने भी अपने अपने सब अस्त्र अर्ज्जुनको दिये हैं, जब समस्त युगके अन्तमें प्रलय होती है, तब अनन्त जगतकी मूर्त्ति जगको आत्मा अव्यक्त भगवान बिष्णु समय प्राप्त होनेसे अग्नि रूप धारण करके पर्व्वत, समुद्र द्वीप, बन नाग लोक पाताल और

तलातलके सहित सब जगतको भस्म कर देते हैं। उस समय आकाशमें घोर शब्दवाले बिजुलीके सहित अनेक वर्णके मेघ प्रगट होते हैं; तब वे सब मेघ चारों ओरसे बर्षनेसे सब अग्नि नष्ट हो जाती है। उस समय इन मेघोंकी धारा बहुत भारी होतो हैं इनके जलसे देश पूर्ण हो जाता है; उस जलमें सब चर और अचर डूब जाते हैं; चन्द्रमा, सूर्य्य, ग्रह और सब तारे नष्ट हो जाते हैं; यह प्रलय जब चारों युग सहस्र सहस्र बार बीत जाते हैं तब होता है। उस समय सहस्र चरण सहस्र नेत्र और सहस्र सिर वाले नारायण सोनेकी इच्छा करते हैं। तब महातेजस्वी सहस्र सूर्य्यके समान प्रकाशमान कुन्द, चन्द्रमा, हार, गो दुग्ध, कमलकी डण्डी और कुमदके फूलके समान सुन्दर सहस्रफण धारी शेषनागका पलंग बनाकर भगवान बिष्णु समुद्रके बीचमें सो रहते हैं। वह रात्रि तमोगुणसे व्याप्त हो जाती है। जब भगवान विष्णु सतो गुण अधिक होनेसे जागते हैं। उस जगतको शून्य देखते हैं। इस स्थान पर पण्डित लोग इस श्लोकका उदाहरण देते हैं। जलका नाम नारा है वही नारा है अयन अर्थात् निवासस्थान जिसका उसको नारायण कहते हैं। उस अवस्थानमें अर्थात् जागनेके समय भगवान सनातन विष्णु जगत उत्पन्न करनेके लिये ध्यान करते हैं, ध्यान करते ही उनकी नाभीसे एक कमल उत्पन्न होता है, उस कमलसे चार मुखवाले ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं वे उसी कमलके ऊपर बैठकर शून्य जगतको देखते हैं। इसके पश्चात ब्रह्मा अपने मनसे मरीचि आदि नौ पुत्रोंको उत्पन्न करते हैं ये नवों ब्रह्माके समान ही होते हैं। उन्होंहीने स्थावर जङ्गम जगतकी रचा है; उन्हींसे यक्ष, राक्षस, पिशाच, भूत; सर्प और मनुष्य उत्पन्न होते हैं; परमेश्वर ब्रह्माका रूप धारण करके जगतकी रचते हैं, विष्णु बनके रक्षा करते हैं और शिव बनके नाश करते हैं, यह तीनों मूर्त्ति ईश्वरहीकी हैं; हे सिन्धुराज! तुमने कभी वेदपाठी ब्राह्मणोंसे कहे हुए विष्णुके अद्भुत कर्म्म नहीं सुने। जब समस्त पृथ्वी जलसे डूब गयी तब भगवान विष्णु शून्य-आकाशमें घूमने लगे। उस समय विष्णुकी ऐसी शोभा हुई जैसे बर्षाकालकी रात्रीमें जुगनूकी। उसी समय भगवान विष्णु पृथ्वीको ढूंढने लगे, तब उन्होंमें डूबी हुई पृथ्वीको देखा, और विचारा कि हम कौनसा रूप धारण करके पृथ्वीको रचें। तब भगवानने दिव्यदृष्टिसे देखा और जलक्रीड़ा करनेकी इच्छा की। तब सूअरका रूप धारण किया। भगवानने वह वचनमय शूकररूप वेदके समान धारण किया था। वह स्वरूप सौ योजन लम्बा और दश योजन चौड़ा था; उसकी शोभा महा पर्व्वतके समान थी; एक दांत बहुत प्रकाशमान और विशाल था, उस नील मेघके समान सुअरका शब्द महा मेघके समान था। भगवान विष्णु यज्ञ वराहका रूप बनाकर जलके भीतर घुस गये। फिर एक दांतपर सब पृथ्वीको उठा ले आये, और उसको अच्छे स्थानपर रख दिया, उसके पश्चात भगवानने विचित्र रूप धारण किया। वह शरीर आधा सिंह आधा मनुष्यका था। तब दैत्यराजकी सभामें गये और हाथको मलने लगे, देवशत्रु दितिपुत्र आदिदैत्य हिरण्यकशिपुने उस विचित्र मनुष्यको देखकर क्रोधसे लाल नेत्र कर लिये, और हाथमें त्रिशूल लेकर मारनेको उपस्थित हुए। काले मेघके समान शब्दकारी दितीपुत्र बीर हिरण्यकशिपु नरसिंहको मारने दौड़ा। उसी समय बलवान नरसिंहने अपने तीक्ष्ण नखूनोंसे, हिरण्यकशिपुका पेट चीर दिया। इस शत्रुनाशक दैत्यको मारकर फिर भगवान कमलनेत्र विष्णुने वामन रूप धारण किया, यह बामन अवतार कश्यपकी स्त्री अदितीके गर्भसे पूरे सहस्र वर्षमें हुआ था। भगवानके अवतार लोकके हितके लिये हैं। बामनका

खरूप वर्षाकालके मेघके समान और नेत्र बहुत प्रकाशमान थे। बामन दण्ड कमण्डल जटा और यज्ञोपवीत धारण करके, तथा श्रीवत्समणिको हृदयमें धारण करके बृहस्पतिकी सहायतासे बलिके यज्ञमें गये, इन बामनरूपी बामनको देखकर बलि प्रसन्न होकर कहने लगे, हे विप्र! हम तुम्हारे दर्शनसे बहुत बहुत प्रसन्न हुए हैं, कहो तुमको क्या दें, तब बामनने बलिको आशीर्व्वाद देकर कहा, हे दानवराज! हमको तीन चरण पृथ्वी दीजिये। तब बलिने प्रसन्न होकर अनन्त तेजस्वी बामनको तीन चरण पृथ्वी दी, उसी समय भगवान विष्णुने अपने पराक्रमसे अद्भुत रूप धारण किया। तब अपने तीन चरणोंसे मापकर समस्त पृथ्वीका राज्य इन्द्रको दे दिया। हमने तुमसे यह बामन अवतारकी कथा कही, इसीसे सब देवता उत्पन्न हुए हैं और इसी करके जगतका नाम वैष्णव है। भगवान विष्णु दुष्टोंका नाश और धर्म्मकी रक्षाके लिये अवतार लेते हैं, वही विष्णु अब यदुवंशमें उत्पन्न हुए हैं, उन्हीका नाम श्रीकृष्ण रक्खागया है, वह अनादि और अजन्मा देवताके देवता हैं, उनको सब लोक नमस्कार करते हैं। विद्वान लोग उनके गुणोंको गाते हैं; उनको कोई नहीं जीत सकता। हे सिन्धु देशात्पन्न! वही कमलनेत्र अतुल पराक्रमी शङ्ख चक्र गदा श्रीवत्स और पीताम्बरधारी कृष्ण उन शस्त्र जाननेवाले पाण्डवोंके सहायक हैं। जिस समय शत्रुनाशक श्रीकृष्ण अर्ज्जुनको रथपर बैठाकर युद्ध करेंगे, उस समय देवता भी अर्ज्जुनको नहीं जीत सकते और पुरुषकी तो क्या शक्ति है? अर्ज्जुनको छोड़कर और सब युधिष्ठिरकी सेना तथा चारो पाण्डवोंको तुम एक दिनमें जीत लोगे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, त्रिपुरासुरके मारनेवाले दक्षयज्ञ बिनाशक पार्व्वतीनाथ सब पापोंके नाश करनेवाले भगवान शिव ऐसा कहकर अनेक शस्त्रधारी बामन, भयङ्कर, बड़े विशाल नेत्र, और कानवाले घोर पार्षदोंके सहित वहीं अन्तरधान हो गये। हे राजशार्दूल! जब त्रिनेत्रधारी पार्व्वतीनाथ भगवान शिव अन्तर्धान हुए तब मूर्ख जयद्रथ भी अपने घरको चला गया, और पाण्डव लोग उसी काम्यक वनमें रहने लगे।

२७१ अध्याय समाप्त।

जयद्रथविमोचण पर्व्व समाप्त।

अथ राम उपाख्यान पर्व्व

राजा जनमेजय बोले, द्रौपदी हरणके पश्चात अत्यन्त क्लेश सहकर पुरुषसिंह पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इस प्रकार द्रौपदीको छुड़ाकर और जयद्रथको युद्धमें जीत कर धर्म्मराज युधिष्ठिरने मुनियोंका सत्कार किया। उन महा ऋषियोंके बीचमें बिराजमान मार्कण्डेय महर्षिसे महाराज बोले, हे भगवन! आप सब देव ऋषियोंमें प्रधान हैं और भूत भविष्यतके जाननेवाले हैं, सो मेरे हृदयमें जो सन्देह है, आप इसको नाश कीजिये; हे भगवन्! यह द्रौपदी किसीके गर्भसे उत्पन्न नहीं हुई, इसका जन्म यज्ञकुण्डसे हुआ है, यह धर्म्म करनेवाली और धर्म्मके जाननेवाली द्रौपदी हम लोगोंकी स्त्री और महात्मा पाण्डुकी बहू है, इसको भी ऐसे दुःख होते हैं जैसे किसी पापित पुरुषको चोरी अथवा झूठ बोलनेका दोष लगे; इससे जान पड़ता है, कि काल और प्रारब्ध बड़ा बलवान है, जो बात होनेवाली होती है, उसको कोई नांघ नहीं सकता; द्रौपदीने कभी कोई पाप नहीं किया है, कभी उसने ब्राह्मणोंका निरादर नहीं किया है, यह सदा धर्म्मही करती रही है, उसको मूर्ख दुर्बुद्धि जयद्रथ बलसे उठा ले गया, द्रौपदीके चुरानेसे उस मूर्खके बाल मूण्डे गये; वह दुष्ट सहायोंके

सहित हार गया हमने उसकी सेनाको नाश करके द्रौपदीको छीन लिया, इस वनमें निवास करना, आखेट खेलकर जीविका चलानी, हरिनोंकी हत्या करनी, और अन्यायके द्वारा जातिसे अलग रहना, इससे अधिक और हमको दुःख क्या होगा? आपने हमारे समान मन्दभाग्य पुरुष कोई देखा या सुना है?

२७२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! रामने आपसेभी अधिक दुःख पाया था; बलवान राक्षसराज दुर्बुद्धि रावणने उनके आश्रमसे छल करके उनकी स्त्री सीताको चुरा लिया था, उसीने जटायु गिद्धको भी मार डाला था तब रामने सुग्रीवका आश्रय लिया, समुद्रका सेतु बांधा, लङ्काको जलाया और तीक्ष्ण बाणोंसे रावणको मारकर सीताको छीन लिया। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन! राम कौन कुलमें उत्पन्न हुए थे? उनका बल और पराक्रम कैसा था? रावण किसका पुत्र था? और उन दोनोंका वैर क्यों होगया था? इन सब कथाओंको हम आपसे सुनना चाहते हैं; आप इस कथाको कहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले,हे पृथ्वीनाथ! इक्ष्वाकु वंशमें अज नामक महाराज उत्पन्न हुए थे; उनके पुत्रका नाम दशरथ था। दशरथ महाराज परम वेदपाठी और पवित्र थे। उनके चार पुत्र हुए; चारोंके नाम ये थे राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न। ये चारों धर्म्म और अर्थके जाननेवाले तथा महा पराक्रमी थे। रामकी माताका नाम कौशल्या, भरतकी माताका नाम कैकेयी, तथा शत्रुनाशन लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्राके पुत्र थे। हे राजन्! मिथिला देशके राजा जनककी पुत्रीका नाम सीता था; उनको साक्षात ब्रह्माने बनाया था; यही सीता रामचन्द्रकी पटरानी थीं। हमने राम और सीताका जन्म तुमसे कहा, अब रावणका जन्म वर्णन करते है। रावणके दादाका नाम साक्षात ब्रह्मा है; वेही सब लोकोंके करनेवाले महा तपस्वी और स्वयम उत्पन्न होनेवाले हैं। उनके प्रिय मानसिक पुत्रका नाम पुलस्त है; उस पुलस्तकी गऊ नामक स्त्रीके गर्भसे वैश्रवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह वैश्रवण अपने पिताको छोड़कर ब्रह्माके पास चला गया, तब उनके पिताको बहुत क्रोध हुआ और उन्होंने अपने शरीरसे एक दूसरा पुत्र उत्पन्न किया; उस पुत्रका नाम विश्रवा रखा; उस पुत्रको वैश्रवणके नाश करनेको बनाया था; परन्तु ब्रह्माने पहिलेही प्रसन्न होकर वैश्रवणको अमर और कुवेरका पद दे दिया था और लोकपाल भी बना दिया था, तब शिव उनके मित्र होगये, और उनको नलकूवर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। तब ब्रह्माने राक्षसोंके सहित लङ्काको कुवेरकी राजधानी बनाया और इच्छानुसार चलनेवाला पुष्पक नामक विमान दिया और यक्षोंका स्वामी बनाकर राजका पद दिया।

२७३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! क्रोधयुक्त पुलस्त मुनिके आधे शरीरसे जो विश्रवा नामक मुनि उत्पन्न हुए थे, उन्होंने क्रोध करके कुवेरकी ओर देखा; तब कुवेरने जाना कि, ये महात्मा हमारे पिताके क्रोधसे उत्पन्न हुए हैं। फिर उनके प्रसन्न करनेका उपाय करने लगे। नरवाहन राक्षसनाथ कुवेर बहुत दिनतक लङ्कामें राज्य करते रहे, फिर उन्होंने विश्रवाको पुष्पोत्कटा, राका और मालिनी नामक तीन राक्षसी दयी। वे तीनों महात्मा विश्रवाको प्रसन्न करनेको उपाय करने लगीं। हे भरतशार्दूल! वे सुन्दरी परस्पर अपना अपना कल्याण चाहती थीं। तब भगवान विश्रवाने प्रसन्न

होकर तीनोंको वरदान दिया कि तुम्हारे तीनोंके एक एक पुत्र होगा, ये तीनों पुत्र तुम्हारी इच्छाके अनुसार लोकपालोंके समान होंगे। तब पुष्पोत्कटाके दो पुत्र हुए एकका नाम कुम्भकर्ण और दूसरेका नाम रावण था; ये दोनों महा बलवान और राक्षसोंके राजा हुए; मालिनीके विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ; राकाकी खर और सूर्पनखा नामक दो सन्तति हुई; इन सबमें विभीषण बहुत सुन्दर क्रियावान और धार्मिक हुआ; इन सब भाइयोंमें रावण सबसे बड़ा था; इस लिये वही राजा हुआ। यह दश मुख रावण महा पराक्रमी महाबली और महा उत्साही था। कुम्भकर्ण सब भाइयोंमें अधिक बलवान और युद्धमें वीर था; खर छली, युद्धवीर दुष्टबुद्धि धनुष विद्याका जाननेवाला, ब्राह्मणोंका शत्रु और मांस खानेवाला था। सूर्पनखा सिद्धोंको विघ्न करनेवाली और दुष्टा थी। ये चारों भाई वेदके पण्डित व्रतधारी और वीर थे। ये सब अपने पिताके सङ्ग गन्धमादन पर्व्वतपर रहने लगे। एक दिन उन्होंने अपने पिताके सङ्ग बैठे हुए परम लक्ष्मीवान नरवाहन कुबेरको देखा और तब उन सबको महाक्रोध हुआ और तप करनेका निश्चय किया। अनन्तर इन चारोंने घोर तपसे ब्रह्माको प्रसन्न किया। रावण एक सहस्र वर्षतक एक चरणसे खड़ा रहा और सावधान होकर पांच अग्नि तापने लगा। कुम्भकर्ण पृथ्वीमें सोकर व्रत करने लगे, विभीषण एक सूखे पत्ते खाकर तप करने लगे, ये उदार बुद्धि तब भी कुछ दिनतक उपवास करके जप करते रहे। खर और सूर्पनखा प्रसन्न होकर तप करनेके समय उन सबकी सेवा और रक्षा करते रहे। एक सहस्र वर्षके पश्चात रावणने अपना सिर काटकर अग्निमें जला दिया, तब जगतके स्वामी ब्रह्मा प्रसन्न होगये और इन सबके पास आकर वरदान देनेको कहा, तथा तप करनेसे निवारण किया। ब्रह्मा बोले, हे पुत्रो! हम तुम लोगोंसे प्रसन्न हुए, अब जो चाहो सो वरदान मांगो, परन्तु अमर नहीं होगे; जितने सिर तुमने अग्निमें होम किये हैं उतने सब तुम्हारी इच्छानुसार उत्पन्न होजायंगे; तुम्हारा शरीर कुरूप नहीं होगा तुम इच्छानुसार रूप धारण कर लोगे और युद्धमें सब शत्रुओंको जीतोगे। रावण बोले, गन्धर्व्व, देवता, अमर, यक्ष, राक्षस, सर्प और गन्धर्वोंसे मेरी मृत्यु न हो। ब्रह्मा बोले, हे रावण! तुम्हारा कल्याण हो तुमने जिन सब लोगोंका नाम लिया उनसे मृत्यु नहीं है, तुमको मनुष्यके सिवा और कोई नहीं मार सकेंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ब्रह्माके वचन सुन रावण बहुत प्रसन्न हुआ और जाना कि मनुष्योंको हम खानेवाले हैं, मनुष्यसे हमको क्या भय है। तब कुम्भकर्णने ब्रह्माजीसे कहा हमको निद्रा अधिक मिले और सदा हमारे चित्तमें तमोगुण वर्त्तमान रहे। उसको यही वरदान देकर ब्रह्मा विभीषणसे बोले, हे पुत्र! हम तुमसे प्रसन्न हुए हैं, अब जो तुम्हारी इच्छा हो, सो वरदान मांगो। विभीषण बोले, हे भगवन्! मैं यह वरदान मांगता हूं कि अत्यन्त आपत्ति पड़ने पर भी मेरी बुद्धि अधर्म्ममें न जाय और मुझको बिना पढ़े ब्रह्मास्त्र आजाय। ब्रह्माजी बोले, हे शत्रुनाशन! तुमने राक्षस योनिमें उत्पन्न होकर भी अधर्म्मको ग्रहण न किया, इससे हम तुमको अमर बनाते हैं। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ! रावण राक्षसने इस प्रकार ब्रह्माजीसे वरदान पाकर युद्ध करके लङ्का छीन ली। भगवान कुबेर लङ्काको छोड़कर गन्धर्व्व यक्ष और राक्षसोंके सहित गन्धमादनको भाग गये। तब रावणने वहां जाकर उनसे पुष्पक विमान छीन लिया; तब कुबेरने रावणको शाप दिया कि यह विमान तुझको नहीं ले जा सकेगा और जो

तेरा मारनेवाला होगा वह दूसबर चढ़ेगा, हम तुझसे बड़े हैं, तैने हमारा अपमान किया है, इसलिये तू बहुत दिन नहीं जीयेगा। महात्मा विभीषण धर्म्मात्माओंके भागकी स्मरण करके परम लक्ष्मीके सहित कुवेरके सङ्ग घूमते रहे। तब भगवान कुवेरने प्रसन्न होकर विभीषणको यक्ष और राक्षसोंका सेनापति बनाया। उसी समय मनुष्यभक्षी राक्षस महा बलवान पिशाच और सबने मिलकर रावणको राजा बनाया। रावणने राजा होकर देवता और दानवोंसे युद्ध करके रत्नोंको छीन लिया। रावण कामरूपी और आकाशचारी था। इससे सब लोकोंको रुलाया, इस लिये उसका नाम रावण हुआ। उसने राजा होकर देवतोंको बहुत दुःख दिया।

२७४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! तब एकदिन ब्रह्मऋषि, सिद्ध और देवर्षि लोग अग्निको आगे करके ब्रह्माजीके पास गये अग्नि बोले, हे भगवन्! आपने जो महाबलवान रावणको वरदान देकर अवध्य कर दिया है; सो अब सबको बहुत दुःख देता है, वह महा बलवान रावण सब जगतको बाधा दे रहा है, इस लिये, आप हमारी रक्षा कीजिये, आपके सिवा और कोई रक्षा नहीं कर सकता है। ब्रह्मा बोले, हे अग्ने! उसको देवता और दानव कोई नहीं मार सकते हैं, इस लिये उसका जीतना बहुत कठिन है; इसी लिये भगवान विष्णुने हमारी प्रार्थनासे जगतमें अवतार लिया है, शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ विष्णुही इस कामको सिद्ध कर सकते हैं। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अनन्तर ब्रह्माजीने सब देवतोंके सहित इन्द्रसे कहा कि तुम लोग विष्णुकी सहायताके लिये रीछ और बानरोंकी स्त्रियोंके गर्भमें अवतार लो और अपने वीर्य्यसे बलवान पुत्रोंको उत्पन्न करो। ब्रह्माके ऐसे बचन सुन देवता दानव और गन्धर्वोंने अपने अपने अंशोंसे अवतार लेनेकी सम्मति करी। उसी समय भगवान ब्रह्माने दुन्दभी नामक गन्धर्व्वीसे कहा कि तुम देवतोंके कार्य्यकी सिद्धिके लिये पृथ्वीमें अवतार लो। बरदान देनेवाले ब्रह्माजीको आज्ञा सुन दुन्दभी नामक गन्धर्वीने पृथ्वीमें अवतार लिया और उसका नाम मन्थरा हुआ। इन्द्रादिक देवतोंने उत्तम उत्तम वानरोंकी स्त्रियोंके गर्भसे पुत्र उत्पन्न किये। इसी प्रकार रीछोंकी स्त्रियोंके गर्भसेभी पुत्र उत्पन्न हुए। वे सब लोग बल और यशमें देवतोंके समान थे; पर्वतोंके शिखरोंको तोड़ सकते थे; शाल ताड़ आदि वृक्ष ही उनके शस्त्र थे; उन लोगोंका बल अत्यन्त था। वे लोग इच्छानुसार शरीर और बलको धारण कर सकते थे, सब लोग युद्ध विद्याके पण्डित सहस्र हाथियोंके समान बलवान वायुके समान तेज चलनेवाले और इच्छानुसार निवास करनेवाले थे। भगवान ब्रह्माने ये सब प्रबन्ध करके मन्थराको सब काम बता दिया। मन्थरा ब्रह्माके बचन स्वीकार करके इधर उधर घूमने लगी और बैर करानेके लिये समय देखने लगी।

२७५ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले,, हे भगवन! आपने राम आदिका जन्म हमसे वर्णन किया, अब आप उनके बन जानेका वर्णन कीजिये, दशरथके पुत्र वीर राम और लक्ष्मण यशस्विनी सीताको सङ्गमें लेकर बनको क्यों गये थे? श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ! जब महाराज दशरथके चार पुत्र उत्पन्न हो गये तब दशरथ परम प्रीतिसे क्रिया कर्म्म और बड़ोंकी सेवा करने लगे; महाराजके चार पुत्र महा तेजस्वी वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले धनुर्वेदके पारगामी और ब्रह्मचारी

थे। अनन्तर महाराजने चारों पुत्रोंका विवाह कर दिया। उस समय महाराज दशरथ बहुत प्रसन्न हुए। उन चारों भाइयोंमें बड़े का नाम राम था। उनसे प्रजा बहुत प्रसन्न रहती थी। बुद्धिमान राम बहुत साधु थे, इसीसे उनके पिता बहुत प्रसन्न रहते थे। हे भारत! जब बुद्धिमान दशरथने देखा कि मैं वृद्ध होगया तब धर्म्म जाननेवाले मन्त्री और पुरोहितोंको बुलाकर रामको युवराज करनेकी सम्मति पूंछो। मन्त्रियोंने भी उचित समय जानकर स्वीकार किया। हे कुरुनन्दन! महाराज दशरथ लाल नेत्रवाले, महाबाहु, मतवाले हाथीके समान चालवाले, ऊंचे कन्धे और काले बालवाले, महातेजस्वी, इन्द्रके समान योद्धा वृहस्पतिके समान बुद्धिमान, सब धर्म्मोंके जाननेवाले, सब विद्याओंके पण्डित, सबके प्यारे, जितेन्द्री, शत्रुवोंको भी मनोहर, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, धर्म्मात्माओंके रक्षक बुद्धिमान और जीतनेवाले रामको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। महा तेजस्वी दशरथ बलवान रामके गुणोंको विचारकर अपने पुरोहितसे बोले, हे ब्रह्मन्! आपका कल्याण हो, आज प्रातःकाल पुष्य नक्षत्र आवेगा, इससे सब सामग्री इकट्ठी करो और रामको निमन्त्रण दे आओ। महाराजकी ऐसी आज्ञाको सुन मन्थरा कैकेयीके पास गई, और अच्छा समय जानकर कहने लगी, हे कैकेयी। आज राजाने तुमको महा दुःख देनेका उपाय किया है; हे दुर्भागिनी! यदि तुझको घोर सर्प काट ले और तू मर जाय तो अच्छा हो, कौशल्या बड़ी भाग्यवती है, जिसका पुत्र प्रातःकाल राजा होगा, तुम बड़ी दुर्भागिनी हो जिसका पुत्र राजा न हुआ। मन्थराके ऐसे बचन सुन महा सुन्दरी कैकेयी सब आभूषण पहिनकर वेदीपर बैठी और राजाको एकान्तमें बुलाकर विनय करके हंसती हुई मीठे बचनसे बोली, हे सत्यप्रतिज्ञ महाराज! तुमने जो हमको दो वरदान दिये थे, उनको आज सत्य कीजिये। महाराज बोले, हे कल्याणि! जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान मांगो, हम तुम्हें देंगे तुम्हारे कहनेसे न मारने योग्य भी पुरुष मारा जायगा और मारने योग्य छोड़ दिया जायगा, कहो कौनसे निर्धनको धनी कर दूं और कौनसे धनीको निर्धन कर दूं; ब्राह्मणोंके धनको छोड़कर और जो कुछ मेरे पास है, सो सब तुम्हारे कहनेसे दान कर सकता हूं, मैं पृथ्वीमें राजोंका महाराज हूं, चारों वर्णोंकी रक्षा करता हूं, इससे जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान तुम शीघ्र मांगो। राजाके ऐसे बचन सुन और अपनेको प्रबल जान कैकेयी बोली, तुमने जो रामके अभिषेकके लिये सामग्री इकट्ठी की हैं, उससे भरतका अभिषेक हो और राम वनको जायं। राजाने ऐसे कठोर और अप्रिय कैकेयीके बचन सुनकर कुछ न कहा और व्याकुल होगये। जब बलवान रामने इस समाचारको सुना तो महाराजको प्रतिज्ञा सत्य हो ऐसा कहकर वनको चले गये। उनके पीछे धनुष धारण करके श्रीमान् लक्ष्मण भी उनके सङ्ग चले, उनके पीछे विदेह-राजनन्दिनी सीता भी चलीं। रामके जानेके पश्चात महाराज दशरथ स्वर्गको चले गये। जब कैकेयीने देखा कि राम वनको चले गये, तब भरतको बुलाकर कहा कि राजा दशरथ तो स्वर्गको चले गये और राम लक्ष्मण वनवासी होगये अब तुम इस बड़े भारी राज्यको ग्रहण करो। माताके ऐसे बचन सुन धर्म्मात्मा भरतने कहा, हे कुलकलङ्किनी मा! तैंने धनके लोभसे अपने पतिको मार डाला और अयशकी मोट मेरे सिर पर धर दी; अब तू प्रसन्न होकर अपनी इच्छानुसार काम कर! ये कहकर भरत रोने लगे। अनन्तर सब सभासदोंको बुलाकर सबके आगे कहा कि यह काम मेरी सम्मतिसे नहीं हुआ; कैकेयीने अपनी इच्छा

अनुसार किया है। अनन्तर भरत रामको लौटा-नेके लिये चले। सबसे पहिले कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी चलीं; उनके पीछे शत्रुघ्नके सहित भरत चले; फिर वशिष्ठ और बामदेव महाऋषियोंके सहित सहस्रों ब्राह्मण, उनके पीछे नगर और सेनाके लोग चले। भरतने चित्रकूट पर्व्वत पर लक्ष्मणके सहित रामको देखा कि मुनियोंका वेष धारण किये धनुष हाथमें लिये बैठे हैं। रामने भरतको बहुत समझाया और कहा कि मेरे लौटनेसे पिताके वचन असत्य होजायंगे। तब भरत अयोध्याको लौट आये और रामकी खड़ाऊं रखके नन्दिग्राममें राज्य करने लगे। रामने जाना कि यहां फिर भी नगर निवासी आवेंगे, तब वहांसे महा,घोर बनको चले गये; वहांसे सरभङ्ग मुनिके आश्रमपर पहुंच वहां सरभङ्ग मुनिको पूजा करके दण्डकारण्य बनको चले गये, वहां रमणीय गोदावरीके तटपर रहने लगे, उस बनमें सूर्पनखाके कार्य्यसे जनस्थान निवासी खर नामक राक्षससे घोर बैर होगया। धर्म्मप्रिय रामने मुनियोंकी रक्षाके निमित्त चौदह सहस्र राक्षसोंको मारा उसी युद्धमें महा बलवान खर और दूषणभी मारे गये। तब बुद्धिमान रामने उस बनको धर्म्मस्थान बना दिया। उन राक्षसोंके मरनेके पश्चात सूर्पणखा लङ्कामें रावणके घर गई और मूर्च्छित होकर रावणके चरणोंमें गिर पड़ी। सूर्पनखाके मुखका रक्त सूख गया था। सूर्पनखाकी यह दशा देख रावणको बड़ा क्रोध हुआ। वह अपने दांतोंसे दांतको चावने लगा और सिंहासनपर कूदने लगा। तब रावणने अपनी सभाको विसर्जन किया और सूर्पनखाको एकान्तमें बुलाकर पूंछने लगा, हे भद्रे! मेरा निरादर करके तुम्हारी यह दशा किसने कर दी? कौन घोर त्रिशूलपर बैठकर अपने शरीरको काटना चाहता है? किसने जलती हुई अग्निको अपने सिरहाने रखकर सुखसे सोनेकी इच्छा करी है? कौन मूर्ख विष भरे सर्पको लातसे मारना चाहता है? कौन घोर बलवान सिंहके दांत उखाड़ता चाहता है। ऐसा कहते हुए रावणके कान नाकसे अग्निकी ज्वाला निकलने लगीं, उस समय रावणको ऐसी शोभा हुई जैसे रातमें जलते हुए वृक्षकी। तब सूर्पनखाने रामका सब बल कह सुनाया और कहाकी चौदह सहस्र राक्षसोंके सहित खर दूषणभी मरे गये। तब रावणने सूर्पनखाको शान्त किया और रामके मारनेका विचार करने लगा। राजा रावणने अपने सब नगरका प्रबन्ध ठीक किया; उसके पश्चात रथपर बैठ त्रिकूटाचल और काल पर्व्वतको नांघकर रमणीय समुद्रको देखता हुआ, आकाश मार्गसे गोकर्णको ओर चला। वह गोकर्ण शूलधारी महात्मा शिवका अत्यन्त प्रिय स्थान है; वहां रावणने जाकर मारीचको देखा; वह मारीच पहिलेहीसे रामके डरके मारे उस स्थानमें आपड़ा था।

२७६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! रावणको देखकर मारीच घबड़ाकर उठा और फल तथा मूलसे उसकी पूजा करी। जब सुखपूर्व्वक राक्षसराज आसन पर बैठे, तब मारीच बोला, हे राक्षस नाथ! आप यहां किस लिये आये हैं? यदि वह काम बहुत कठिन हो तोभी सिद्ध हो जानिये। तब पण्डित रावणने अर्थ जाननेवाले मारीचसे तब वृत्तान्त अर्थपूर्व्वक कह सुनाया। तब मारीच बोला, हम तुमको सावधान नहीं देखते; कहो तुम्हारे नगर और घरमें कुशल तो है? कहो तुम्हारे आधीन राजा लोग तुम्हारी सेवा तो करते हैं? तब रावणने रामके सब पराक्रमको मारीचसे कह सुनाया और क्रोध करके सब युक्तिभी कह

सुनाई। रावणके वचन सुन मारीच कहने लगा कि रामसे वैर करना वृथा है, क्योंकि हम उनके पराक्रमको जानते हैं, उस महात्माके बाणवेगको इन्द्र भी नहीं सह सकते हैं, उसी पुरुषसिंहने मुझे यहां फेंक दिया है, किस मूर्खने तुमको यह नाशका द्वार बता दिया है। तब रावणने क्रोधसे डराकर मारीचसे कहा हे मारीच! जो तू मेरे वचनको नहीं मानेगा तो हम तुमको अभी मारडालेंगे। मारीचने विचारा कि श्रेष्ठ पुरुषके हाथसे मरना अच्छा है, अब मेरी मृत्यु प्राप्त हो गई। ऐसा बिचार कर मारीच बोला, कहो हम तुम्हारी सहायताके लिये कौनसा कर्म्म करें? तब दशमुख रावणने कहा कि तुम अपने शरीरको रत्न और सोनेका बनाओ और हरिनका रूप धारण करके रत्नके सींग बनाओ; ऐसा विचित्र रूप बनाकर जब तुम सीताके आगे जाओगे तो वह अवश्य तुम्हारे मारनेके लिये रामको भेजेंगी; जब राम आश्रमसे निकलके चले जायेंगे, तब सीता मेरे वशमें हो जायगी, तब मैं सीताको लेकर लङ्काको चला आऊंगा; तो राम आपही मर जायेंगे, वह दुर्बुद्धि राम स्त्रीके वियोगमें कभी जीता नहीं रहेगा; इस लिये तुम हमारी यही सहायता करो। मारीचने उसके बचनको स्वीकार करके अपना श्राद्ध किया, फिर दुःखी होकर रावणके साथ चला। जब ये दोनों उत्तम कर्म्मकारी रामके आश्रम पर पहुंचे तब उन दोनोंने वही कर्म्म किया जिसको सम्मति पहिले कर चुके थे। रावणने तीन दण्ड धारण किये और सिर मुड़ाकर कमण्डलु धारण किया और मारीचने हरिनका रूप धारणकर लिया। तब वे दोनों रामके आश्रमपर पहुंचे। मारीचने अपना रूप सीताको दिखाया, तब सीताने रामसे कहा कि इस हरिनको मारो। राम उनकी प्रसन्नताके लिये धनुष लेकर शीघ्र दौड़े और सीताकी रक्षाके लिये लक्ष्मणको वहीं छोड़ गये। राम तुणीर और खड्ग धारण करके उस हरिनके पीछे इस प्रकार दौड़े जैसे हरिण रूपधारी प्रजापतिके पीछे शिव दौड़े थे। उस समय मारीच कहीं प्रगट और कहीं गुप्त हो जाता था, इस प्रकार राम मारीच के पीछे बहुत दूरतक दौड़े गये। तब बुद्धिमान रामने जान लिया कि यह राक्षस है; तब धनुषपर महा बाणको चढ़ाकर मारा, उस बाणके लगनेसे मारीचने मरते समय रामका ऐसा शब्द बनाकर लक्ष्मण और सीताको पुकारा। उस रोनेके शब्दको सुनकर सीता उसी ओरको दौड़ी तब लक्ष्मणने सीतासे कहा, हे भीरु! जगतमें ऐसा कौन है जो रामको मारेगा? इस लिये शङ्का करना बृथा है; तुम एक क्षणके पश्चात अपने पति रामके दर्शन करोगी। लक्ष्मणके ऐसे वचन सुन सीताको बहुत दुःख हुआ और रो कर कहने लगी, रे मूर्ख! मैं सती और पतिव्रता हूं, मेरा चरित्र ही मेरा आभूषण है, जो बात तू अपने हृदयमें बिचारता है, वह कभी नहीं होगी; मैं किसी शस्त्रसे आत्महत्या करूंगी अथवा पर्वतसे गिरकर मर जाऊंगी या जलती हुई अग्निमें प्रवेश कर जाऊंगी परन्तु सिंहरूपी रामको छोड़ तुझ सियारकी इच्छा नहीं करूंगी। रामके प्यारे उत्तम चरित्र वाले लक्ष्मणने सीताके ऐसे कड़े बचनोंको सुनकर अपने कानोंको बन्द कर लिया और धनुष उठाकर जिधरको राम गये थे, उधरहीको चले गये; परन्तु पीछे फिर कर सीताको देखते ही रहे। लक्ष्मणके जानेके पश्चात रावण रामके आश्रममें आया; उस दुष्ट रावणने सन्यासीका वेष बनाया। उस समय रावणकी ऐसी दशा हुई जैसे राखसे छिपी हुई अग्निकी। उस दुष्टने पतिव्रता सीताको चुरानेकी इच्छा करी। जब धर्म्म जाननेवाली सीताने देखा कि हमारे आश्रमपर एक संन्यासी आया है, तब उन्होंने उसे खानेको फल और

मूल दिये, तब उसने उन सबका निरादर किया और अपना रूप धारणकर सीतासे बोला, हे सीते! मैं राक्षसराज रावण हूं, मेरी रम्य लङ्का-पुरी समुद्रके पार है, अब तुम मेरे सब स्त्रियोंके सहित मेरे सङ्ग वहीं विहार करना। हे सुन्दरी! तुम रामको छोड़ दे और मेरी स्त्री हो जा। सुन्दरी सीताने रावणके ऐसे कठोर बचनोंको सुनकर अपने कानोंको बन्द कर लिया, और कहा कि ऐसा नहीं हो सकता, चाहे सब तारे पृथ्वीमें गिरें चाहे पृथ्वी फट जाय, चाहे अग्नि ठण्डो होजाय, पर मैं रामको नहीं छोडूंगी; भला मतवाले हाथीकी स्त्री सूअरको कब छू सकती है? भला ऐसी कौन सो स्त्री होगी जो महुए और दाखके मद्यको लेकर कांजोकी इच्छा करे? रावणसे ऐसा कहकर सीता अपनी कुटीके भीतर चली गई उस समय क्रोधके मारे सीताके ओठ फरकने लगे, और हाथोंको चलाने लगी। तब रावणने दौड़कर सीताको पकड़ लिया, और कठोर वचन कहने लगा। अनन्तर सीताके बाल पकड़कर कुटीसे खींच लिया। उस समय सीता मूर्च्छित हो गई। तब रावण उसको उठाकर आकाशको उड़ गया, तब तपस्विनी सीता हा राम हा लक्ष्मण कहकर रोने लगी। तब पर्व्वत पर बैठे हुए जटायुने सीताको देखा।

२७७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले हे राजन् युधिष्ठिर! सम्पातीका भाई गरुड़का पुत्र महावीर जटायु नामक गिद्धराज महाराज दशरथका मित्र था, जब उसने देखा कि मेरी पुत्रवधू सीताको रावण लिये जाता है, तो क्रोध करके राक्षसनाथ रावणके पीछे दौड़ा और कहने लगा, हे निशाचर! तू सीताको छोड़ दे; मेरे आगेसे तू इसको नहीं छोड़ेगा तो हमसे जीता नहीं बचेगा। ऐसा कहकर रावणको अपने पञ्जोंसे मारने लगा। गिद्धके पञ्जे और चोंचसे चोट लगनेके कारण रावणके शरीरमें अनेक घाव होगये और उनसे इस प्रकार रुधिर बहने लगा कि जैसे पहाड़के झरनोंसे जल बहता है। रामके प्रिय गिद्धसे पीड़ित होकर रावणने खड्गसे जटायुके पर काट दिये; उस वर्षते हुए मेघके समान गिद्धको मारकर रावण सीताके सहित आकाश मार्गसे चला, सीताने जहां ऋषियोंका आश्रम देखा और नदी तथा तलाव देखा वहीं अपना एक एक भूषण डाल दिया। मनस्विनी सीताने एक पर्व्वतके शिखर पर पांच बन्दरोंको बैठे देखा, वहां उन्होंने अपना दिव्य वस्त्र डाल दिया। वह पीला वस्त्र वायुसे उड़ता हुआ, उन पांच बन्दरोंके बीचमें इस प्रकार गिरा कि जैसे पांच बादलोंके बीच बिजुली गिरती है। आकाशमें चलनेवाला रावण भी पक्षीके समान उड़ता हुआ अनेक हार मन्दिर और अटारियोंसे शोभायमान विश्वकर्म्माकी बनाई हुई दिव्य रमणीय लङ्कापुरीमें पहुंचा और सीताके सहित अपने मन्दिरमें प्रवेश किया।

इस प्रकार जब रावण सीताको ले गया, तब बुद्धिमान राम भी हरिनको मारके लौटे। तब उन्होंने देखा कि लक्ष्मण चले आते हैं। तब रामने लक्ष्मणसे कहा, हे लक्ष्मण! तुम इस राक्षस भरे बनमें अकेली सीताको छोड़कर किस प्रकार चले आये। रामने मृग रूपधारी राक्षसके सङ्ग चले आने और लक्ष्मणके आग-मनको विचारकर बहुत सोच किया। फिर लक्ष्मणको निन्दा की और कहने लगे, हे हे लक्ष्मण! शीघ्र आश्रमको चलो, देखो सीता जीती है या नहीं, लक्ष्मणने सीताके सब कठोर बचनोंको कह सुनाया। सुनकर रामका हृदय जलने लगा। तब वे दोनों आश्रमको चले। मार्गमें पर्व्वतके समान पड़े हुए जटायुको देखा। राम और लक्ष्मणने उसको राक्षस जानकर धनुष खींचा और उसकी ओरको दौड़े। उसने

कहा तुम लोगोंका कल्याण हो; मैं महाराज दशरथका मित्र जटायु नामक गिद्ध हूं। उसके वचन सुनकर उन दोनोंने धनुषको उतार लिया, और कहने लगे कि यह हमारे पिताका नाम लेनेवाला कौन है? तब दोनोंने उसके पास जाकर देखा कि एक पङ्ख कटा हुआ पक्षी ;पड़ा है। तब गिद्धने सीताके निमित्त रावणसे लड़नेका और अपने मृत्युका सब हाल रामसे कह सुनाया। अनन्तर रामने गिद्धसे पूंछा कि रावण किस ओर गया है। तब जटायुने अपने सिरको हिलाकर दक्षिणकी ओर बता दिया। उसी समय जटायु मर गया। तब रामने अपने पिताके मित्रकी क्रिया करी। फिर राम अपने आश्रमपर आये। आश्रमको नष्टभ्रष्ट और सहस्रों सियारोंसे भरा हुआ देख शोक और दुःखसे व्याकुल होगये। अनन्तर शत्रुनाशन राम और लक्ष्मण सीताके दुःखसे व्याकुल होकर दक्षिणकी ओरको चले, तो राम और लक्ष्मणने उस घोर वनमें राक्षस और फिरते हुए हिर-नोंके अनेक झुंड देखे। उस समय उस वनमें जन्तुओंका ऐसा घोर शब्द हो रहा था जैसे आग लगनेसे होता है। थोड़े समयके पश्चात उन्होंने कवन्ध नामक राक्षसको देखा, वह मेघ और पर्व्वतके समान शरीर वाला शालके वृक्षके समान ऊंचा बड़ा मुख और बड़ा पेट-वाला था। उस राक्षसने लक्ष्मणको अपने हाथसे पकड़ लिया। उसके पकड़नेसे लक्ष्मण रोने लगे। जब उस राक्षसने लक्ष्मणको पकड़ कर अपने मुखमें डालना चाहा, तब लक्ष्मण रोकर रामसे कहने लगे कि हमारी इस दशा-को आप देखिये, हे आर्य्य! सीताका चुराया जाना, हमारी यह दशा, पिताका मरना और राज्यका नष्ट होना ये सब आपत्तियां एकही बार आपके ऊपर पड़ीं; हमारो प्रारब्धमें यह नहीं था कि सीताके सहित अयोध्याको जायं और वहां सनातन राजसिंहासन पर बैठा आपको देखें; जो पुरुष आपका कुश लावा और दूबसे अभिषेक होते देखेंगे उनको धन्य है; जब आप राजसिंहासन पर बैठेंगे तो आपके मुखकी ऐसी शोभा होगी कि जैसे बादलसे निकले हुए चन्द्रमाकी। इस प्रकार कहकर लक्ष्मण रोने लगे। अनन्तर आपत्ति-कालमें भी धीर राम बोले, हे पुरुषसिंह! तुम किसी प्रकार घबड़ाओ मत हमारे आगे यह राक्षस क्या वस्तु है? तुम इसके दहिने हाथको काट दो मैं बांएको काटता हूं। ऐसा कहकर रामने तीक्ष्ण खड्गसे उसकी बाईं भुजा-को इस प्रकार काटकर गिरा दिया कि जैसे कोई तिलकी शाखाको काटता है। उसी समय बलवान लक्ष्मणने अपने भाई रामको खड़ा हुआ देखकर अपने खड्गसे उस राक्षसका दहिना हाथ काट लिया। अनन्तर उसके हाथसे छूटकर एक खड्ग उसकी पसुलीमें मारा तब वह राक्षस मर कर पृथ्वीमें गिर गया; तब उसके शरीरसे एक दिव्य पुरुष निकला और वह आकाशमें जाकर सूर्य्यके समान प्रकाशमान होने लगा। तब पण्डित रामने उससे पूछा कि तू कौन है? हमको तुम्हें देख-कर बहुत आश्चर्य होता है,तुमने अपनी इच्छाके अनुसार यह रूप क्यों धारण किया था? तब उस गन्धर्व्वने रामसे कहा कि मैं विश्वावसु नामक गन्धर्व्व हूं, मैंने ब्राह्मणके शापसे राक्षस-योनिमें जन्म लिया था; लङ्कावासी राक्षस रावण सीताको लेगया है सो तुम सुग्रीवके पास जाओ, वह तुम्हारी सहायता करेगा; यह ऋष्यमुख पर्व्वतके तटपर हंस और सारसोंसे भरा हुआ पम्पा नामक तड़ाग है, इसका जल बहुत सुन्दर है, उसी ऋष्यमूक पर्व्वतपर चार मन्त्रियोंके सहित सुग्रीव निवास करते हैं, वे सुवर्ण मालाधारी वानरराज वालिके भाई हैं; तुम उनसे जाकर अपना सब दुःख कह देना

वह भी तुम्हारे समान शीलवान हैं, अवश्य तुम्हारी सहायता करेंगे। हम इतना कह सकते हैं कि तुम अवश्य सीताको प्राप्त करोगे क्योंकि वानरराज सुग्रीव रावणके घरको जानते हैं। ऐसा कहकर वह महा तेजस्वी दिव्य पुरुष अन्तर्धान होगया। तब वीर राम और लक्ष्मणको बहुत आश्चर्य हुआ।

२७८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! तब सीताके दुःखसे व्याकुल राम वहांसे चले और अनेक कमलोंसे भरे हुए पम्पासर पर पहुंचे। वहां अमृतके समान सुगन्धि वाले शीतल वायुके लगनेसे रामको सीताका स्मरण हुआ। महाराज राम कामसे व्याकुल होकर सीताको स्मरण करके रोने लगे। तब लक्ष्मणने उनसे कहा हे आर्य्य! तुम्हारे ऐसे पुरुषको दुःख न होना चाहिये, उत्तम आचारसे रहनेवाले पुरुषको रोना नहीं चाहिये; आपको उचित है कि सीता और रावणको ढूंढ़ें; फिर अपने बल बुद्धिसे रावणके मारनेका उपाय कीजिये. चलिये हम वानरराज सुग्रीवसे मिलें, मैं आपका दास, शिष्य और सहायक हूं; इससे घबड़ाइये मत। लक्ष्मणके अनेक बचनोंको सुनकर राम सावधान हुए और उपायका विचार करने लगे। रामने पम्पाके जलमें स्नान किया और पितरोंका तर्पण किया। फिर दोनो आगेको चले, वहांसे चलकर राम और लक्ष्मण अनेक फूल और मूलसे भरे हुए ऋष्यमूक पर्व्वत पर पहुंचे। उन्होंने पर्व्वत पर बैठे हुए पांच बन्दरोंको देखा। तब सुग्रीवने हिमाचलके समान शरीरवाले बुद्धिमान मन्त्रीको रामके पास भेजा। तब उससे बार्त्तालाप करके वे दोनों सुग्रीवके पास गये। हे महाराज! तब रामने सुग्रीवके साथ मैत्री करी और अपना सब प्रयोजन कह सुनाया, तब सुग्रीवने रामको सीताका वह वस्त्र दिखाया जो सीताने जाती बार गिरा दिया था। तब रामने सुग्रीवको बांदरोंका राजा बनाया और अपने हाथसे उसका अभिषेक किया। फिर रामने बालिके मारनेको प्रतिज्ञा करी और सुग्रीवने सीताके लानेकी प्रतिज्ञा करी। तब उन्होंने परस्पर विश्वास करके मित्रताको दृढ़ किया। फिर वे सब लोग युद्धकी इच्छा करके किष्किन्धाको गये। किष्किन्धाके द्वार पर जाकर सुग्रीव बड़े बेगसे गर्जा। सुग्रीवका शब्द सुनतेही बालिको महा क्रोध हुआ और उससे युद्ध करनेको इच्छा करके चलना चाहा। तब उसकी स्त्री ताराने उसको निवारण किया और कहने लगी कि बलवान बानर सुग्रीव जिस प्रकार गर्ज रहा है इससे जान पड़ता है कि अवश्य इसका कोई सहायक है, इस लिये तुम युद्ध करने मत जाओ; वानरराज सुवर्ण मालाधारी पण्डित, चन्द्रमुखी ताराके बचन सुनकर बोला तुम सब जन्तुओंकी बोलीको जानती हो बुद्धिसे विचार करो कि सुग्रीवने किसका आश्रय लिया है। अनन्तर चन्द्रमुखी ताराने एक मुहूर्त्ततक विचार कर कहा कि हे वानरराज! आप सब विचारको सुनिये। दशरथ पुत्र रामकी स्त्रीको रावण चुरा कर लेगया है, वही धनुषधारी राम सुग्रीवके मित्र हुए हैं, उनके भाईका नाम महाबाहु लक्ष्मण है; वे सुमित्राके पुत्र युद्धमें अपराजित और बुद्धिमान हैं, वेही सुग्रीवके कार्य्य सिद्धिके लिये उपस्थित हुए हैं; द्विविद मयन्द, वायुपुत्र हनुमान और ऋक्षराज जाम्बुवान ये चारों सुग्रीवके मन्त्रीभी सुग्रीवके समान हैं, ये सब लोग बुद्धिमान बलवान और महात्मा हैं; सुग्रीव रामके आश्रयसे तुमको मारनेमें समर्थ है, उससे युद्ध करनेको मत जाओ। वानरराज बालिने उसके बचनको स्वीकार न किया और जाना कि यह सुग्रीवसे मिली है। तब ताराको बालिने छोड़कर वहांसे चल दिया और माल्य-

वान पर्व्वतके नीचे खड़े हुए सुग्रीवसे कहने लगा कि मैंने तुझको युद्धमें जीत लिया था, तब तू अपने जीवको लेकर भाग गयाथा; मैंने भी जाति जानकर तुझको छोड़ दिया था; अब मरनेके लिये इतनी शीघ्रता करके क्यों आया? बालिके ऐसे वचन सुनकर शत्रुनाशन सुग्रीवने हेतुके सहित रामको सुनाकर बालिसे कहा, हे राजन्! आपने मेरा राज्य छीन लिया, मेरी स्त्रीको छीन लिया तब मैंने विचारा कि अब मैं जीकर क्या करूंगा, इस लिये अब युद्ध करनेको आया हूं। ऐसा कहकर बाली और सुग्रीव अनेक प्रकारसे युद्ध करने लगे; कभी शिला और कभी वृक्षोंसे मारते थे, कभी मुक्के और दांतोंहीको शस्त्र बनाते थे; कभी एक दूसरेको पृथ्वीमें रगड़ता था कभी दोनों खड़े होकर युद्ध करने लगते थे, दोनों नाखून और दांतोंके लगनेसे रुधिरसे भींग गये। उस समय उन दोनोंकी ऐसी शोभा हुई जैसे फूले हुए टेसूकी। उन दोनोंके रूपमें भेद कुछ न दिखाई दिया तब हनुमानने सुग्रीवको एक माला पहिनादी उस मालासे सुग्रीवकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी मेघोंसे महा पर्व्वत मलयाचलकी शोभा होती है। जब रामने सुग्रीवके गलेमें चिह्न देख लिया, तब महा धनुषपर बाण चढ़ाकर खींचा और बालिको लक्ष बनाया। उस समय रामके धनुषकी टङ्कार ऐसे वेगसे हुई जैसे किसी यन्त्र (कल) की होती है। जिस समय वह बाण बालिके हृदयमें लगा उस समय बालि घबड़ाकर पृथ्वीमें गिर पड़ा, उस बाणके लगनेसे बालिका हृदय फट गया, और मुखसे रुधिर गिरने लगा। जब बालि पृथ्वीमें गिर गया तब उसने लक्ष्मणके सहित रामको खड़ा देखा। तब उसने रामको अनेक गालियां दो और मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर गया। तब चन्द्रमाके समान तेजस्वी बालिके मरनेके पश्चात सुग्रीव किष्किन्धामें गया, और वहां चन्द्रमुखी ताराके समेत सब राज्यको प्राप्त किया। राम भी सुन्दर माल्यवान पर्व्वतके ऊपर वर्षा ऋतु भर रहे। सुग्रीव बुद्धिमान रामकी सेवा करते रहे।

जब रावण अपनी रमणीय लङ्कापुरीमें पहुंचा, तब सीताको नन्दनके समान एक बागमें रख दिया, परन्तु रावण कामसे व्याकुल हो गया। सीता भी उस मुनियोंके आश्रमके समान अशोक बनमें तपस्विनीका वेष धारण करके रामका स्मरण करने लगी। सुन्दरी सीता उपवास करके केवल रामका स्मरण करने लगी; कभी फलमूल खा लेती थीं। राक्षसराज रावणने सीताको रक्षाके लिये अनेक राक्षसियोंको रख दिया। वे राक्षसियां प्रास खड्ग, त्रिशूल, फरसा और मुद्गर आदि अनेक शस्त्रोंको धारण करके सीताके पास रहने लगीं; कोई एक नेत्रवाली, किसीके दो नेत्र किसीके तीन नेत्र, किसीके माथेमें नेत्र, किसीके बड़ी जिह्वा और किसीके जिह्वाही नहीं, किसीके तीन स्तन, किसीके एक चरण, और किसीके तीन जटा थीं, इत्यादिक अनेक रूपवाली राक्षसियां सीताकी रक्षा करने लगीं। उनके नेत्र बड़े प्रकाशमान और बड़े बड़े तथा उनके बाल भी प्रकाशमान रूपवाले थे। वे राक्षसियां दिन रात आलस रहित होकर सीताके पास बैठी रहती थीं। वे दारुण पिशाचरूपधारणी राक्षसियां विशालनैनी सीताको डराया करती थीं। वे लोग कहती थीं, कि यह दुष्टा हमारे स्वामी रावणका निरादर करके जीती है इसलिये हम इसको खाजायं, चीरडालें, तिलके समान टुकड़े कर डालें। वे सब लोग सीताको डराकर बार बार ऐसे ही बचन कहती थीं। तब सीता रामके शोकसे व्याकुल होकर और सांस लेकर इस प्रकार उत्तर देती थीं, हे स्त्रियो! तुम हमको शीघ्र खाजाओ, क्योंकि मैं अपने

जानेका लोभ नहीं करती हूं, क्योंकि उन घुंघराले बालवाले रामके बिना जीकर मैं क्या करूंगी, इसी लिये मैं निराहार होकर अपने जीवनको त्यागना चाहती हूं; मैं अपने शरीरको इस प्रकार सुखा दूंगी, कि जैसे ताड़के वृक्षपर सर्पिनी। मैं रामको छोड़कर दूसरे पुरुषकी कभी इच्छा नहीं करूंगी। हमारी इस प्रतिज्ञाको सत्य जानकर जो उच्छा हो, सो करो। घोर शब्द-वाली राक्षसियां सीताके ऐसे बचन सुन ये सब समाचार कहनेको राक्षसराज रावणके पास गईं। जब वे सब राक्षसियां वहांसे चली गईं तब धर्म्म जानने वाली प्रियवादिनी त्रिजटा नामक राक्षसी सीताको प्रसन्न करके बोली, हे वैदेही! हे सखी! हम तुमसे एक बात कहती हैं, तुम उसका विश्वास करो, तुम भयको छोड़ दो और हमारे बचनोंको ग्रहण करो बुद्धिमान राक्षसश्रेष्ठ बूढ़ा अविन्ध रामका हित चाहता है; उसने हमसे कह दिया था, कि तुम सीतासे जाकर हमारे बचन कहना और प्रसन्न करके उसको धीरज देना; तुम्हारे पति श्रीमान राम लक्ष्मणके सहित सुखी हैं; उन्होंने इन्द्रके समान तेजस्वी वानरराज सुग्रीवसे मित्रता करी है, और तुम्हारे लिये बहुत उद्योग कर रहे हैं; तुम इस नीच रावणसे कुछ भय मत करो; जिस समय यह अजितेन्द्रिय दुष्ट रावण नलकूबरकी स्त्री रम्भाके पीछे दौड़ा था, तबही नलकूबरने इसको शाप दिया था, तबसे यह किसी स्त्रीके सङ्ग हठ नहीं कर सकता; तुम्हारे पति बुद्धिमान राम सुग्रीव और लक्ष्मणके सहित शीघ्र यहां आवेंगे; और तुमको इस दुःखसे छुड़ा लेंगे, मैंने महा घोर अशुभ स्वप्न भी रातमें देखा है, उस स्वप्नका फल यह होगा, कि यह दुर्बुद्धि कुलनाशक रावण मारा जायगा; यह दुष्ट राक्षस महापापी क्षुद्रकर्म्मकर्त्ता, स्वभावहीसे सबको भयङ्कर है; यह कालके वशमें होकर सदा सब देवतोंका डाह करता है; इस दुष्टके लक्षण मैंने स्वप्नमें देखे हैं, मैंने यह देखा है, कि दशमुख रावण तेलमें स्नान करके और सिर मुड़वाके कीचमें स्नान करता है, और गधोंके रथपर बैठकर नाचता है, और ये कुम्भकर्ण आदि राक्षस लालमाला चन्दन लगाकर तथा वस्त्र और बालोंसे रहित होकर दक्षिण दिशाको जाते हैं, केवल विभीषण ही सफेद माला चन्दन छत्र और पगड़ी धारण करके सफेद पर्व्वतके ऊपर बैठे हैं। बिभीषणके चारों मन्त्री सफेद मालाको धारण करके हम लोगोंको इस दुःखसे छुड़ावेंगे; मैंने उन लोगोंको भी सफेद पर्व्वतके ऊपर बैठे देखा है, और यह भी देखा है, कि ये समस्त पृथ्वी तुम्हारे पति रामके बाणोंसे व्याप्त हो रही है और उनका यश जगतमें फैल रहा है। लक्ष्मण हड्डियोंके पर्व्वत पर बैठे हुए, मधु और घी खा रहे हैं, तथा अपने तेजसे सब दिशाओंको जला रहे हैं; तुमको भी मैंने स्वप्नमें इस प्रकार देखा है, कि तुम रुधिरमें भींग रही हो और सिंहसे रक्षित होकर उत्तरकी ओर जाती हो। हे वैदेही! तुम लक्ष्मणके सहित अपने पतिसे मिलकर शीघ्र आनन्दको प्राप्त होगी, सन्देह मत करो। कमलनैनी सीता त्रिजटाके ऐसे बचन सुनकर प्रसन्न हुई और उसने अपने पतिसे मिलनेकी दृढ़ आशा करी। उसी समय वे घोर राक्षसियां वहां आगईं, उन्होंने सीताके सङ्ग त्रिजटाको बैठे हुए देखा।

२७९ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! अनन्तर पतिके शोकसे व्याकुल, दुःखिनी, मलिन वस्त्रधारिणी, रोती हुई मणिमात्र भूषण धारिणी, पतिव्रता राक्षसियोंके बीचमें शिलापर बैठी हुई सीताके पास कामपीड़ित रावण आया। जो रावण देव, दानव, गन्धर्व्व

यक्ष, राक्षस और किमपुरुषोंसे भी युद्धमें नहीं हारता था, वह कामके वाणसे पीड़ित होकर अशोक वाटिकामें सीताके पास आया। दिव्य वस्त्र; मनिमय कुण्डल और विचित्र माला तथा विचित्र मुकुटधारी रावणकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, जैसी मूर्त्तिधारी वसन्तकी। अनेक आभूषण धारण करनेपर भी उसकी शोभा कल्पवृक्षके समान नहीं थी, वरन ऐसा जान पड़ता था जैसा फूलने फलनेपर भी स्मशानका वृक्ष भयङ्कर होता है। रावण उस सुन्दरी सीताके पास जाकर इस प्रकार खड़ा हुआ जैसे रोहिणीके पास शनिश्चर। काम-पीड़ित रावणने सीतासे इस प्रकार वार्तालाप किया जैसे कोई डरी हुई हरिनीसे। रावण बोला, हे सीता! तैंने अपने पतिके ऊपर बहुत कृपा करी। हे सुन्दरी! अब हमारे ऊपर कृपा करो और वस्त्रादिको धारण करो; हे सुन्दर मुखवाली! बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणोंको धारण करके हमारी सेवा करो; ऐसा करनेसे तुम हमारी स्त्रियोंमें श्रेष्ठ बनोगी; हे सुन्दर वरणवाली! मेरे यहां अनेक देव तथा गन्धर्व्वकी कन्या और स्त्रियां हैं, और दैत्य तथा दानवोंको स्त्रियां भी हैं चौदह करोड़ पिशाच मेरे दास हैं, और अट्ठाइस करोड़ राक्षस मेरे वचनमें रहते हैं; वे सब लोग मनुष्योंके खानेवाले, और घोर कर्म्म करनेवाले हैं, उनसे तिगुने यक्ष लोग मेरे वशमें हैं, उनसे जो बचे वे सब मेरे भाई कुवेरके दास हैं; हे भद्रे! अप्सरा गन्धर्व्व और लोग मुझे देखकर इस प्रकार खड़े हो जाते हैं जैसे मेरे भाई कुवेरको; मैं साक्षात महामुनि विश्रवाका पुत्र हूं, जातिका ब्राह्मण हूं, मुझको सब लोग पञ्चम लोकपाल कहते हैं, मेरा यश सब जगतमें फैला है, मेरे घरमें चलनेसे तुझे दिव्य भोजन वस्त्र और पीनेकी वस्तु मिलेंगी, जो जो वस्तु इन्द्रके घरमें मिल सकती हैं, सो मेरे यहां भी प्राप्त होंगी, अब तुम वनवासके दुःखोंको छोड़ दो। हे सुन्दरी! तुम मेरी स्त्री हो जाओ, मैं तुमको मन्दोदरीके समान मानूंगा। रावणके ऐसे वचन सुन सुन्दर मुखवाली सीता एक तिनकेको अपनी आंखोंके आगे करके और नेत्रोंसे जल धारा बहाती हुई बोली पतिव्रता सीता क्षुद्र रावणसे कहने लगी, हे राक्षसेश्वर! तुमने जो मुझ अभागिनीसे कहा, सो मैंने अत्यन्त दुःखित होकर सुना; हे भद्र! तुम्हारा कल्याण हो, तुम अब इस इच्छाको छोड़ दो; मैं प्रतिव्रता और दूसरेको स्त्री हूं; इससे तुमको प्राप्त नहीं हो सकती; मैं मनुष्य जातिमें उत्पन्न हुई हूं, इससे तुम्हारा कुछ उपकार नहीं कर सकती; मुझको विवस करके स्त्री बनानेसे तुमको कुछ लाभ नहीं होगा; तुम्हारे पिता ब्रह्माके पौत्र और ब्रह्माके समान हैं, तुम धर्म्मका पालन नहीं करते हो, फिर लोकपाल कैसे हुए? तुम्हारे भाई शिवके मित्र धनेश्वर कुवेर हैं, क्या तुमको उनका नाम लेते कुछ भी लज्जा नहीं आती?

रावणसे ऐसा कहकर सीता रोने लगी, और कांपने लगी, सीताने अपने सिर और मुखको ढक लिया और पृथ्वीको देखने लगी। सीताके रोते समय उनकी बड़ी वेणी इस प्रकार हिलने लगी, जैसे चिकने शरीरवाली काली नागिन सांस लेते समय हिले। सीताके कठोर वचनोंको सुनकर दुर्बुद्धि रावण बोला, हे सीते! कामदेव भले ही अपनी इच्छानुसार दुःख दे, परन्तु मैं उत्तम हंसनेवाली तुमसे बिना तुम्हारी इच्छा कुछ नहीं करूंगा; मैं तुम्हारे सङ्ग कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि तुम अब तक हमारे भोजन मनुष्यका स्मरण करती हो। सुन्दरी सीतासे ऐसा कहकर राक्षसराज रावण वहीं अन्तर्धान हो गया, अर्थात अपने घरको चला गया, सीताभी शोकसे व्याकुल

होकर सब राक्षसियोंके समेत त्रिजटाके सङ्ग उसी बनमें रहने लगी।

२८० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! सुग्रीवसे रक्षित होकर लक्ष्मणके सहित रामने वर्षाऋतु भर पर्व्वतपर निवास किया। बर्षाके पश्चात आकाश निर्म्मल होगया, चन्द्रमा शुद्ध होकर उदय होने लगा, नक्षत्र और तारा प्रकाशित होने लगे। उस समय कमल कुमुदिनी और नीले कमलकी सुगन्धिसे सुगन्धित पर्व्वतके शीतल बायुने रामको जगाया, अर्थात रामने जाना कि शरद ऋतु आगई। तब परम धर्म्मात्मा रामने रावणके घरमें बंधी हुई, सीताका स्मरण करके और दुःखसे व्याकुल होकर वीर लक्ष्मणसे कहा हे लक्ष्मण! तुम किष्किन्धाको जाओ और बानरराज सुग्रीवको देखो, वह स्त्रियोंके वशमें होगया है; जान पड़ता है, कि वह कृतघ्नी केवल अपने प्रयोजनको पण्डित है; मैंने उस कुलाधमको राज्य दिया, मेरे प्रतापसे बन्दर, लंगूर और रीछ उसकी सेवा करते हैं; हे रघुकुलोत्तम! हे महाबाहो! जिस लिये मैंने तुम्हारी सहायतासे किष्किन्धामें बालिको मारा है, उसी अवस्थाको वह नीच बन्दर सुग्रीव नहीं जानता। हे लक्ष्मण! मुझे जान पड़ता है, कि वह मूर्ख मित्रताको पालन करना नहीं जानता, उस मूर्खकी बुद्धि बहुत कम है, इसीसे उसने उपकार करनेपर भी हमको नहीं माना; तुम जाकर देखो कि यदि वह सीताके लिये कुछ उद्योग न कर रहा हो और केवल कामके वशमें सोता हो, तो जिस मार्गसे बालि गया है, और जिस मार्गमें सब जगतके प्राणी जाते हैं, उसी मार्गमें तुम सुग्रीवको भेजना; यदि बानर-राज सुग्रीव हमारे लिये कुछ उद्योग करता हो, तो उसको लेकर शीघ्र ही हमारे पास चले आना। बड़ोंको आज्ञा पालनेवाले लक्ष्मण अपने भाईकी ऐसी आज्ञा सुन धनुष, रोदा, और बाणोंको लेकर किष्किन्धाको चले। उस किष्किन्धाके द्वारपर जाकर नगरके भीतर लक्ष्मण चले गये। जब बानरराजसुग्रीवने सुना, कि लक्ष्मण क्रोध करके किष्किन्धामें आये हैं; तब आपही उनके पास आए और उचित पूजा करी। निर्भय लक्ष्मणने सुग्रीवसे रामके सब बचन कह सुनाये। रामकी आज्ञा सुन सुग्रीव हाथ जोड़कर स्त्री पुत्र और दासोंके सहित पुरुष-सिंह लक्ष्मणसे कहने लगे, हे लक्ष्मण! मैं दुर्बुद्धि कृतघ्न और निर्लज्ज नहीं हूं, मैंने जो सीताके ढूंढ़नेका उपाय किया है, सो सुनिये। मैंने सब दिशाओंको प्रधान बन्दरोंको भेजा है, और सबको एक महीनेका समय दिया है, वे सब लोग समुद्र पर्व्वत और नगरोंके सहित समस्त पृथ्वीमें सीताको ढूंढ़ते हैं; उनसे कोई गांव, नगर, वन और खान न बचैगी; अब उस महीनेमें पांच दिन शेष हैं अर्थात् पूरा होनेवाला है; तब तुम रामके सहित मीठे बचनको सुनोगे। बुद्धिमान बानरराज सुग्रीवके ऐसे बचन सुन तेजस्वी लक्ष्मण शान्त हुए, और सुग्रीवकी प्रशंसा करने लगे, फिर सुग्रीव और लक्ष्मणने माल्यवान पर्व्वतपर जाकर रामसे सब बृत्तान्त कह सुनाया। इस प्रकार सहस्रों बानर पूर्व्व पश्चिम और उत्तरको दिशाको देखकर लौट आये, परन्तु दक्षिणको कोई भी न गया। उन सबने आकर रामसे कहा, कि हम समुद्र पर्य्यन्त सब पृथ्वीका देख आये; परन्तु सीता और रावणको कहीं न पाया। जो बानर दक्षिणको ओर गये थे, राम उन्हींका मार्ग देखने लगे, और दुःखसे प्राणोंको धारण करते रहे। दो महीने बीतनेके पश्चात वे लोग दक्षिणसे लौटे और सुग्रीवके बागमें जाकर फल खाने लगे। तब उनके रक्षकोंने जाकर सुग्रीवसे कहा, कि हे बानरराज! जिस मधु-बनकी रक्षा बालिने

और आपने की थी, उसको हनुमान खाते हैं, बालिपुत्र अङ्गद तथा और जो वानर लोग दक्षिणको ओर सीताको ढंढ़ने गये थे, वे सब मधुबनको खा रहे हैं। उन सबके ऐसे वचन सुन सुग्रीवने बिचारा, कि जो सेवक कार्य्य सिद्धि कर लेते हैं, वे ही ऐसे ऐसे काम कर सकते हैं, हमें जान पड़ता है, कि वे लोग सीताको देख आये हैं। अनन्तर बुद्धिमान वानरराज सुग्रीवने ये सब समाचार रामसे कहा। रामने भी अनुमानसे जान लिया, कि ये लोग सीताको देख आये हैं। हनुमान आदि बानर सावधान होकर महाराज सुग्रीव तथा राम और लक्ष्मणके पास गये। रामने हनुमानका मुख और चेष्टा देखकर जान लिया, कि इसने सीताको देखा है। हनुमान आदि बन्दरोंने प्रसन्न होकर सुग्रीव लक्ष्मण और रामको प्रणाम किया। तब रामने बाणोंके सहित धनुष उठाके उन लोगोंसे कहा, क्या तुम लोग हमको जिलाओगे ? क्या तुम लोग कार्य्यसिद्धि करके आये हो ? क्या हम सब शत्रुओंको युद्धमें मारकर फिर सीताको पावेंगे ? क्या हम अयोध्यामें फिर राज्य करेंगे ? हम प्रण करते हैं कि बिना शत्रुओंको युद्धमें मारे, विना स्त्रीके सन्यासीके समान नहीं जीयेंगे। रामके ऐसे वचन सुन हनुमान बोले, हे राम ! हम आपसे प्रिय समाचार कहते हैं, हमने सीताको देखा है। जब हम पर्व्वत और गुफाओंके सहित सब दक्षिण दिशाको ढूंढ़ चुके और समय बीतनेसे थक भी गये, तब एक गुफा दिखाई दी ; वह बहुत योजनकी लम्बी और अन्धकारमय थी। उसके भीतर बहुत जन्तु रहते थे। तब हम लोग उस गुफाके भीतर घुस गये। बहुत दूर जाकर हमने सूर्य्यका प्रकाश देखा, और वहां एक सुन्दर स्थान भी देखा। हे राघव ! वह स्थान मय नामक दैत्यका था ; वहां एक प्रभावती नामकी स्त्री तप करती थी। उसने हम लोगोंको अनेक प्रकारके भोजन और पीनेकी वस्तु दी। उसको खाकर हम लोग शान्त हुए और उसके बताये हुए मार्गसे चलने लगे। उस गुफासे निकलते ही हम लोगोंने समुद्रके तटपर सह्य मलय और दर्दुर नामक पर्व्वतोंको देखा। तब हम लोगोंने अपने जीनेकी आशा छोड़ दी—घबड़ाये और बहुत डरे। तब हम लोग मलय पर्व्वतपर चढ़े, और समुद्रको देखने लगे। समुद्र कई सौ योजनका चौड़ा, मछली, मगर आदि जलजन्तुओंका स्थान और परम भयानक था। उसको देखकर हम लोग बहुत डरे और दुःखित हुए। तब हम सब यह सङ्कल्प करके बैठ गये, कि हम सब लोग अब कुछ न खायंगे। उसके पश्चात हम लोग बार्त्तालाप करने लगे, तो गृद्धराज जटायुका वृत्तान्त आगया ; उसको सुनते ही पर्व्वतके शिखरके समान शरीरधारी, भयानक, गरुड़के समान शरीरवाले एक पक्षीको देखा। वह हमारे पास आकर हमारे खानेका विचार करने लगा, कि भाई तुमलोग कौन हो जो हमारे भाई जटायुका वृत्तान्त कह रहे हो ? मैं सम्पाति नामक पक्षीराज हूं ; जटायु मेरा छोटा भाई है, हम लोग सूर्य्यको देखने चले थे ; देखो मेरे यह पंख जल गये, परन्तु जटायुके पङ्ख नहीं जले थे ; मैंने अपने भाई प्यारे पक्षीराज जटायुको नहीं देखा ; मैं पङ्ख जलनेसे इस पर्व्वतके ऊपर गिर गया। तब हमने आपका यह सब समाचार उससे संक्षेप रीतिसे कहा। सम्पाति हमारे अप्रिय वचनोंको सुनकर बहुत दुःखी हुआ और हमसे पूछने लगा, कि राम कौन हैं ? सीता किस प्रकार चुराई गयी ? और जटायु क्यों मारा गया ? हम इस सब वृत्तान्तको तुम लोगोंसे सुनना चाहते हैं। तब हमने आपकी सब कथा कह सुनाई और अपने अन्न जल छोड़नेका कारण भी कह दिया। तब पक्षीराज सम्पातिने हमलोगोंसे कहा, कि हम

लङ्काको और रावणको जानते हैं, लङ्का समुद्रके पार त्रिकूटाचल पर्व्वत पर बसती है वहीं सीता हैं। हम इसबातको निश्चय जानते हैं, कि सीता वहांके सिवाय और कहीं नहीं हैं। हम लोग उसके वचन सुनकर खड़े होगये। समुद्र नांघनेके लिये विचार करने लगे। हे शत्रुनाशन! जब हम लोगोंने समुद्रसे पार होनेका उपाय कोई न देखा, तब वायुका आश्रय लेकर मैं समुद्रको नांघ गया, समुद्र चार सौ कोस चौड़ा है, मैंने समुद्रके बीचमें एक राक्षसीको भी मारा; फिर लङ्कामें जाकर पतिव्रता सीताका दर्शन किया। वह तपस्विनी अत्यन्त दुःखिनी, जटाधारिणी, मलिन शरीरवाली, उपास और तप करती हुई आपके दर्शनकी इच्छा कर रही हैं। जब मैंने अनेक लक्षणोंसे जान लिया, कि यही सीता हैं, तो एकान्तमें जाकर कहने लगा, हे सीते! मैं जातिका बानर, पवनका पुत्र हनुमान, रामका दूत बनकर आया हूं मैं आकाशमें उड़कर आकाश मार्गसे लङ्कामें आया हूं, राजपुत्र राम और लक्ष्मण कुशलसे हैं, सब बानरोंके राजा सुग्रीव उनकी रक्षा करते हैं, राम और लक्ष्मण तुम्हारी कुशल पूछते हैं; उनके मित्र सुग्रीवनेभी तुमसे कुशल प्रश्न किया है, तुम्हारे पति राम सब बानरोंके सहित यहां आवेंगे, हे देवि! तुम निश्चय जानो कि हम राक्षस नहीं हैं, बन्दर हैं। मेरे बचन सुन सीताने क्षणमात्र ध्यान करके कहा, कि मुझसे अविन्ध नामक राक्षसने पहिले ही कहा था, हे महावाहो! एक अविन्ध नामक बुद्धिमान बूढ़ा राक्षस है; उसने हमसे कहा था, कि तुम्हारे समान सुग्रीवके मन्त्री हैं; तब सीताने हमसे कहा, कि तुम जाओ और चलते समय यह मणि भी हमको दी। पतिव्रता सीता इसीसे जीती थी। उन्होंने निश्चयके लिये हमसे यह कथा भी कही है हे पुरुषसिंह! तुमने चित्रकूट नामक पर्व्वतपर कौएके मारनेको सींक चलाई थी। अनन्तर मैं पकड़ा गया, फिर मैंने लङ्काको जला दिया; तब आपके पास आया हूं। हनुमानके ऐसे बचन सुन रामने उनकी बहुत प्रशंसा करी।

२८१ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! उसी समय सुग्रीवको आज्ञासे उत्तम बानर लोग रामके पास आये। सहस्र करोड़ बानरोंके सहित बालिके ससुर सुषेण नामक बन्दर रामके पास आये। महाबलवान बानरराज गज और गवय सौ करोड़ बानरोंको लेकर आये। घोर रूपवाला गवाक्ष नामक लंगूर साठ सहस्र करोड़ बानरोंको लाया। गन्धमादन बन्दरके सङ्ग सौ हजार करोड़ बानर आये। पनस बन्दर दसकरोड़ बन्दर लाये, बूढ़े महा बलवान दधिमुखके सङ्ग माथेपर त्रिपुण्ड धारण किये काले मुखवाले घोर कर्म्मचारी बानरोंकी महा सेना आई। जाम्बवानके सङ्ग सौ हजार करोड़ रीछ आये। इत्यादि लेकर औरभी असंख्य बानर आये। उनके शरीर पर्व्वतोंके समान, शब्द सिंहके समान, थे; वे लोग इधर उधर घूमने लगे। तब उनका शब्द चारों ओर फैल गया। किसी का शरीर पर्व्वतसा, किसीका शरीर शरद ऋतुके मेघके समान था। वे लोग कूदने लगे, और धूल उड़ाते हुए, लङ्काकी ओरको चले। यह बानरोंकी महासेना भरे हुए समुद्रके समान शोभित हुई। उस दिन सेना सुग्रीव की आज्ञासे वहीं रही। अनन्तर उत्तम तिथि मुहूर्त्त और नक्षत्रको रामने उस सेनाका व्यूह बनाया और वहांसे चल दिये, उसके मुखको हनुमान और जङ्घाको रक्षा निर्भय लक्ष्मण करने लगे। कवच पहिने हुए रामचन्द्र और लक्ष्मण उन बन्दरोंके बीचमें ऐसे शोभायमान

हुए, जैसे तारोंके बीचमें सूर्य्य और चन्द्रमा वह वन्दरोंको सेना शाल, ताड़ और शिलाके शस्त्र लिये हुए ऐसी शोभायमाय थी, जैसे सूर्य्योदयके समय धानका खेत। नल, नील अङ्गद, क्राथ, मयन्द और द्विविदसे रक्षित वह महासेना रामके कार्य्य सिद्ध करनेको चली। अनेक भांतिके उत्तम उत्तम फल मूल, मद्य मांस और जलसे भरे हुए, सुखदाई पर्व्वतमें निवास करती हुई, वह बन्दरोंको सेना खारी समुद्रके तटपर पहुंची। वह सेना अनेक पताकाओंसे शोभायमान दूसरे सागरके समान जान पड़ती थी। उस दिन उसने समुद्रके तटके वनमें निवास किया। तब दशरथ पुत्र रामने सब मुख्य वानरोंके अनुसार सुग्रीवसे यह वचन कहा, कि आपने समुद्र बांधनेका कौन सा उपाय सोचा है? यह सेना बड़ो भारी है, और समुद्र भो अति दुस्तर है। बहुतसे अभिमानी बन्दर कहते हैं, कि हम लोग समुद्रको लांघकर हो पार चले जायंगे, परन्तु यह उपाय सबके करने योग्य नहीं है! किसोने बेड़े बांधकर पार उतरनेका उपाय बतलाया, परन्तु रामने सबको शान्त करके कहा, कि पार जानेका यह कोई भी उपाय नहीं है। इससे सब वानर समुद्रको नांघ नहीं सकेंगे, क्योंकि सौ योजन विस्तारवाले, समुद्रको नांघनेमें सब वानर समर्थ नहीं हैं। इतनी अधिक नौका भो नहीं है; जिनसे सम्पूर्ण सेना पार जा सके और व्यापारको नौकाओंको रोककर व्यापारकी हमारे ऐसे पुरुष कैसे बन्द कर सकते हैं। हमारो सेना बहुत बड़ो है, छिद्र पानेसे शत्रु नाश कर सकता है, इस कारणसे नौका या बेड़ोंके द्वारा सेनाको पार करना अच्छा नहीं मालूम होता है; मैं इस समुद्रको उपायसे ही तर जाऊंगा; उस उपायसे समुद्र मुझे अवश्य मार्ग देगा। यदि समुद्र मुझे मार्ग न देगा तो मैं अग्निके समान प्रज्वलित और निवारण करनेके अयोग्य शस्त्रोंसे उसे भस्म कर दूंगा। इस प्रकारसे कहके लक्ष्मणके सहित राम समुद्रके तटपर कुशासन बिछाकर बैठ गये। इसके पश्चात स्वप्नमें समुद्र रामके पास आया, वह नद और नदियोंका स्वामो जलजन्तुओंसे पूर्ण समुद्र मोठे वचनसे बोला, हे नरश्रेष्ठ! कहिये मैं आपकी क्या सहायता करूं? मैं आपको जाति और इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न भया हूं। श्रीराम उससे बोले, हे नद और नदियोंके स्वामो! मैं सेनाके वास्ते मार्ग चाहता हूं, जिस मार्गसे जाकर मैं पुलस्त्यकुलकलङ्क रावणको मारूं। यदि तुम मांगनेसे मुझे न दोगे तो मैं मन्त्रोंसे पूरित दिव्य अस्त्र और वाणोंसे तुमको सुखा दूंगा! रामके ऐसे वचन सुनके समुद्र बहुत घबड़ा कर और हाथ जोड़ कर बोला, हे राम! मैं तुमको रोकना नहीं चाहता; मैं तुम्हारा विघ्नकारी नहीं; मेरे वचनको सुनके जो उचित हो सो करो; यदि मैं तुमको और तुम्हारी सेनाको मार्ग दे दूं तो और लोग भो धनुषके बलसे मुझपर आज्ञा चलावेंगे। तुम्हारी सेनामें नल नामक वानर शिल्पो (स्थान बनानेवाला) है, वह विश्वकर्म्माका पुत्र अपने पितासे भी अधिक बलवान है; वह जो काठ तृण वा पत्थर मुझमें डालेगा, उन सबको मैं अपने ऊपर हो रखलूंगा, और वही तुम्हारा सेतु (पुल) हो जायगा। जब समुद्र ऐसा कहकर अन्तर्धान होगया, तब रामने नलसे कहा कि तुम सेतु बांधो। तुम इस कार्य्यमें समर्थ हो। इस उपायसे रघुवंशी रामने समुद्रका सेतु बंधवाया। इस सेतुको चौड़ाई चालीस कोस और लम्बाई चार सौ कोसकी थी। यह सेतु अबतक भी नलसेतुके नामसे जगतमें प्रसिद्ध है। वहीं राक्षसेन्द्र रावणका भाई धर्म्मात्मा विभीषण अपने चार मन्त्रियोंके सहित रामके पास आया। रामने बड़े आदर

से विभीषणको ग्रहण किया। सुग्रीव को यह शङ्का हुई कि यह दूत होगा, परन्तु जब राम और लक्ष्मण उसकी सत्य चेष्टा पाकर प्रसन्न हुए, तब उसका बहुत सम्मान किया। सम्पूर्ण राक्षसोंका राज्य उसे दिया और अपना मन्त्री तथा लक्ष्मणका मित्र बनाया। हे राजन् युधिष्ठिर! विभीषणकी सम्मतिसे एक महीनेमें सेनाके सहित राम समुद्र पार गये, इसके पश्चात लङ्कापुरीमें जाके बन्दरोंने बड़े बड़े बाग नष्ट कर दिये। इसके अनन्तर रावणके शुक और सारण नामक दो मन्त्री वानरका रूप करके सेनामें आए; उन्हें विभीषणने पकड़ लिया। जब उन्होंने फिर राक्षसका रूप धारण किया, तब रामको आज्ञासे बन्दरोंने सम्पूर्ण सेना दिखलाके सेनासे बाहर निकाल दिया। सेनाको लङ्काके समीप उपवनमें ठहराकर बुद्धिमान अङ्गदको दूत बनाकर रावणके समीप भेजा।

२८२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अन्नजलसे पूर्ण, अनेक भांतिके पुष्पोंसे भरे उस वनमें सेनाको स्थापन करके विधि पूर्व्वक रक्षा करने लगे। रावणभी शास्त्रमें लिखी हुई विधिसे युद्ध सामग्री इकट्ठी करने लगा। लङ्का स्वाभावहीसे शत्रुओंके जीतनेके अयोग्य दृढ़ कारदिवाली और खाईमें अथाह जल भरा हुआ था, जिसमें मछली और नाके भरे हुए थे। लङ्काके सात द्वारोंमें खैरके किवाड़ लगे हुए थे। वे किवाड़ ऐसे यन्त्रोंसे युक्त थे, कि उनको कोई भी नष्ट नहीं कर सकता था; अनेक स्थानोंपर मूत्र और बिष्ठा त्यागनेके स्थान बने थे; तथा गोलोंके ढेर लगे थे; कहीं सर्पोंके ढेर, कहीं राल और बारूदके ढेर लगे थे, कहींपर मूसल, आलातवान तोमर, खड्ग परश्वध और तापोंके ढेर लगे थे; कहीं पर मंदा, कहीं मधु सुद्गर रक्खे थे; नगरके सब द्वारोंमें अनेक भांतिके चल और अचल बुर्ज बने थे जिनमें अनेक पैदल और हाथी घोड़े रहते थे। अङ्गद लङ्काके द्वार पर जाके "रावण" यह सूचना देके भीतर गये। राक्षसोंकी सभामें अङ्गदकी ऐसी शोभा हुई, जैसी मेघोंके बीचमें सूर्य्यको। अङ्गद मन्त्रियोंके सहित बैठे हुए रावणके पास जाकर रामचन्द्रके सन्देश इस प्रकारसे कहने लगे, कि हे राजन्! महायशस्वी कोशलापति रघुवंशी रामने समयानुसार तुमको यह बचन कहे हैं, उन्हें तुम मानो और वैसेहो करो; अनीति करने वाले पापी राजाको पाकर देश और नगर नष्ट हो जाते हैं, अकेले तुमने बल पूर्व्वक सीताको हर कर मेरा अपराध किया है, किन्तु और निरपराधो लोग मारे जायंगे; तुमने जो बलके अभिमानसे अनेक वनबासी ऋषियोंको मारा है, देवतोंसे अभिमान किया है, राजऋषियोंका नाश किया है, रोती हुई स्त्रियोंको मारा है उन सब पापोंका फल अब उदय हुआ। हे निशाचर! तुम पुरुष बनके मुझसे लड़ो, मैं मन्त्रियोंके सहित तुमको मारूंगा मुझ मनुष्यके धनुषका प्रताप देखो, जानकीको शीघ्र छोड़दो, यदि न छोड़ोगे तो मैं तीक्ष्ण जगतको बाणोंसे निशाचरोंसे रहित करूंगा। ऐसे कठोर बचनको सुनकेरावण क्रोधमें भरके क्षमा न कर सका। अपने स्वामीकी चेष्टाको जाननेवाले चार राक्षस अङ्गदके शरीरमें लिपट गये, जैसे शार्दूलके अङ्गमें पक्षी लिपटते हैं, अङ्गमें लिपटे हुए राक्षसोंके सहित अङ्गद राज भवनकी छत पर उड़ गया। वेगके साथ उड़नेसे वे चारों निशाचर पृथ्वीमें गिर गये, उनका हृदय फट गया। अङ्गद राजभवनकी छतसे उड़ कर लङ्कापुरीको नांघकर सुवेल पर्व्वतके समीप आये। रामचन्द्रके समीप जाकर अङ्गदने सब कथा सुना दी और रामसे

आदर पाके अङ्गदने बिश्राम किया। पश्चात रघुनन्दन रामने बन्दरोंको सब सेनाको भेजकर लङ्काकी छार दिवालीको तुड़वा डाला। पश्चात विभीषण और जाम्बुवानको सङ्ग लेकर लच्मण लङ्काके द्वार पर पहुंचे! सोनेके समान रङ्गवाले सो हजार बन्दरोंका यूथ युद्ध करने को लङ्कामें पुहुंचा, लम्बी जांघवाले, धुएंके समान रङ्गवाले तीन करोड़ रीछ युद्ध करनेको चले हे राजन्! उस समय बन्दरोंके उड़ने और गिरनेसे ऐसी। धूल उड़ी कि सूर्य्य छिप गये, धानोंकी बाल, सिरसके फल, प्रातःकालके सूर्य्य और सनक समान रङ्गवाले बन्दरोंसे नगरको छारदिवालोंको पूरित देखके बालक बूढ़े और स्त्रियोंके सहित सब राचस बिस्मित हो गये। बन्दरोंने मणियोंके खम्भो और पत्थरोंके स्थानोंको तोड़के गिरा दिया, यन्त्रोंको तोड़के इधर उधर फेंक दिये, तोपोंको गोलोंके सहित उठाकर लङ्कामें घोर शब्द करके फेंकने लगे, छारदिवालोंके समीप जितने राचस थे, वे बांनरोंके भयसे इधर उधरको भाग गये। उसके पश्चात राजाज्ञाको पाके कामरूपी भयङ्कर आकारवाले हजारों राचस शस्त्रोंकी वर्षासे बन्दरोंको डराते और छारदिवालीकी शोभाको बढ़ाते लङ्कासे निकले। उन भयानक शरीरवाले राचसोंने चण भरमें छारदिवालीको बन्दरोंसे खाली कर दिया। अनेक बानर त्रिशूलोंसे कटकर पृथ्वीमें गिर पड़े और खम्भो तथा वृचोंकी मारसे राचस भी बहुत पृथ्वी गिरे। बन्दर और राचस परस्पर केश पकड़के लड़ने लगे, दांत और नाखूनोंसे काटकर एक दूसरेको खाने लगे, बन्दर और राचस शब्द करके पृथ्वीपर गिरतेहुए भी नहीं छोड़ते थे, रामने भो बाणोंको ऐसी वर्षा की जैसे मेघ जलको वर्षा करते हैं। रामके बाण लङ्कामें जाके राचसोंको मारने लगे, लच्मण विना क्लेशके धनुष धारण करके बाणोंसे दुर्ग (किले) के राचसोंको मारने लगे,। इसके अनन्तर रामको आज्ञासे लङ्काको ध्वंश करके बांनरोंकी सेना अपने डेरोंको फिर आई।

२८३ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर। जब रामकी सेना अपने डेरोंमें आई तब रावणके सेवक पिशाच और छोटे छोटे राचसोंके झुण्ड उनके पोछे आये, उन झुण्डोंके सङ्ग पर्व्वण पतन, जम्भ, खर, क्रोध बशहरी, प्ररुज, अरुज, प्रघस आदि थे। तब उन दुरात्माओंकी मायाको जाननेवाले विभीषणने उनकी अन्तर्द्धान मायाका नाश कर दिया। हे राजन् युधिष्ठर! अन्तर्द्धान मायाके नाश होते ही वे राचस बन्दरोंको दीखने लगे। बानरोंने उन सबको मारके पृथ्वीमें गिरा दिया। तब रावण क्रोध करके राचस और घोर पिशाचोंकी सेना सङ्ग लेकर चला। युद्धशास्त्रको जाननेवाला साचात इन्द्रके समान रावणने इन्द्रव्यूह बनाके बन्दरोंको घेर लिया। रघुबंशी रामने सेनाके सहित रावणको आया देखके वृहस्पति व्यूह बनाके रावणको घेर लिया। तब राम और रावणका, लच्मण और मेघनादका, सुग्रीव और विरूपाचका, तार और निषटका, कातुण्ड और नलका, पटुश और पनसका, बाहु युद्ध होने लगा। उस बाहु युद्धका कायरोंको डरानेवाला ऐसा भयानक शब्द बढ़ा जैसा देवासुर संग्राममें हुआ था। रावणने शक्ति शूल और खड़गकी बर्षासे रामको बहुत पीड़ित किया। ऐसे ही तीच्ण बाणोंसे रामने रावणको व्याकुल कर दिया, मेघनादने लच्मणको और लच्मणने मेघनादको तोच्ण बांणोंसे व्याकुल किया; ऐसेही बिभीषणने प्रहस्तको और प्रहस्तने विभीषणको तेज बाणोंसे व्याकुल किया। इन शस्त्रधारियोंका

युद्ध बहुत भयानक हुआ, कि जिससे तीन लोकके चराचर व्याकुल होगये ।

२८४ अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कि हे राजन् ! तब घोर युद्ध करनेवाले प्रहस्तने शीघ्रताके साथ दौड़कर और गर्जकर विभीषणके गदा मारी । उस भयानक गदासे पीड़ित होकर बुद्धिमान विभीषण हिमाचल पर्व्वतके समान खड़े रहे, और कुछ भी कम्पायमान न हुए । इसके पश्चात जिस शक्तिमें सौ घण्टे लगे हुए थे, उसे यत्नसे युक्त करके विभिषणने प्रहस्तके सिरकी ओर छोड़ा । उस वज्रके समान शक्तिके लगनेसे प्रहस्तका सिर कट गया । उस समय वह ऐसा दीखने लगा, जैसे हवासे गिरा हुआ वृक्ष । प्रहस्तको मरा हुआ देखकर धूमराक्ष बड़े वेगसे बन्दरोंकी ओर दौड़ा ; उसकी भयानक मेघोंके समान सेनाको आते हुए देखकर मुख्य मुख्य बानर भागे ; मुख्य बन्दरोंको भागते हुए, देखकर पवनपुत्र बन्दरोंमें मुख्य हनुमान आए । पवनपुत्र हनुमानको युद्धमें खड़ा हुआ देखकर, चारों ओरसे बन्दर युद्ध करनेको फिरे । हे राजन् ! उस समय राम और रावणकी सेनाके युद्धका भयानक शब्द होने लगा । उस भयानक युद्धमें रुधिरका कीचड़ होगया । धूमराक्षने बन्दरोंकी सेनाको घेर लिया । उसको युद्धमें आते हुए देखकर, शत्रुओंको नाश करनेवाले पवनपुत्र हनुमानने बड़े वेगसे ललकारा । उस मुख्य राक्षस और मुख्य बन्दरका जयकी इच्छासे ऐसा भयानक युद्ध हुआ, जैसा प्रह्लाद और इन्द्रका ; राक्षसने गदा और परिघादि शस्त्रोंसे हनुमानको मारा, और हनुमानने शाखायुक्त वृक्षोंसे धूमराक्षको व्याकुल किया । इसके पश्चात पवनपुत्र हनुमानने बहुत क्रोध करके धूमराक्षको रथ सारथी और घोड़ोंके सहित मारडाला । राक्षसोत्तम धूमराक्षको मरा हुआ देखकर बन्दरोंने सेनाके अन्य राक्षसोंको बहुत नाश किया । वानरोंके मुक्कोंसे पीड़ित होकर राक्षस अपनी आशाओंको त्यागकर लङ्काको चले गये । मरनेसे जो राक्षस बचे थे उन्होंने लङ्कामें आकर राजा रावणसे सब वृत्तान्त कहा । उन राक्षसोंसे रावणने युद्धमें प्रहस्तको और महावीर धूमराक्षको मरा हुआ सुनकर बहुत ऊंचा श्वास लिया, और आसनसे उठकर कहा कि यह समय कुम्भकर्णके योग्य कर्म्म प्राप्त हुआ है । ऐसा कहकर बहुत सोनेवाले कुम्भकर्णको अनेक भांतिके बाजोंसे जगाने लगा । बड़े यत्न और दुःखसे कुम्भकर्णको जगाकर राक्षसराज रावण सुस्त होकर बैठा और महा बलवान कुम्भकर्णसे बोला, हे कुम्भकर्ण ! तुम धन्य हो, तुम्हारी ऐसी प्रबल निद्रा है, जो तुम इस घोर भयको भी नहीं जानते हो, कि राम बन्दरोंके सहित समुद्रको तरकर और हम सबका अपमान करके लङ्काहीमें घोर उपद्रव कर रहा है ; मैं जनकनन्दिनी सीता नामकी उसकी स्त्रीको चुरा लाया हूं ; उसके लि जानेको राम समुद्रपर सेतु बांधके लङ्कामें आये हैं, और हमारे प्यारे प्रहस्तादिकको उसने मार डाला है ; हे शत्रुनाशन ! तुम्हारे सिवाय उसको मारनेवाला और कोई नहीं है ; हे बलवानोंमें श्रेष्ठ ! तुम कवचादि पहनकर युद्धके लिये जाओ ; हे शत्रुओंको दमन करनेवाले ! तुम युद्धमें रामादिक शत्रुओंको नाश करो, दूषणके छोटे भाई वज्रवेग और प्रमाथी बहुतसी सेना लेकर तुम्हारे पीछे जायंगे । हे राजन् युधिष्ठिर ! इस प्रकारसे बलवान कुम्भकर्णको आज्ञा देकर राक्षसपति रावण वज्रवेग और प्रमाथीको आज्ञा देने गया । दूषणके छोटे भाइयोंने रावणकी आज्ञा मानकर और कुम्भकर्णको आगे करके नगरसे प्रस्थान किया ।

२८५ अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! कुम्भकर्णने अपने सेवकोंके सहित नगरसे बाहर निकलके दृढ़ मुष्टिवाली बन्दरोंकी सेनाको आगे खड़े देखा। उस सेनाको देखके कुम्भकर्णकी रामके देखनेकी इच्छा बढ़ी। तब उसने धनुषवाण लिये लक्ष्मणको देखा। अनन्तर बन्दरोंने चारों ओरसे बड़े बड़े वृक्ष उसके ऊपर डालना आरम्भ किया; नाखूनोंसे अनेक बन्दर उसे काटने लगे, अनेक प्रकारसे बन्दर उससे युद्ध करने लगे। अनेक प्रकारके शस्त्र और वृक्षोंसे पिटकर कुम्भकर्ण हंसा और बन्दरोंको खाने लगा। बल, चण्डबल और वज्रबाहु नामक बन्दरोंको कुम्भकर्णने मारकर गिरा दिया। कुम्भकर्णके इस भयानक कर्मको देखकर बन्दरलोग इधर उधरको भागने लगे। तार आदिक सेनापति बन्दरोंको डरसे चिल्लाते और भागते हुए देखकर निडर सुग्रीव कुम्भकर्णकी ओरको दौड़ा और कुम्भकर्णके समीप आके शालका एक वृक्ष कुम्भकर्णके सिरमें मारा। उस शाल वृक्षके लगनेसे कुम्भकर्णको बोध हुआ और दोनों हाथोंसे पकड़के सुग्रीवको ले चला। इस दशाको देखके मित्रोंको आनन्द देनेवाले सुमित्रा-नन्दन लक्ष्मण कुम्भकर्णकी ओरको चले और पंख लगे हुए बाणोंको कुम्भकर्णके ऊपर छोड़ा। शत्रुओंको नाश करनेवाले लक्ष्मणके बाण कुम्भकर्णके शरीरको छेदकर पृथ्वीमें घुस गये। हृदयके भिद जानेसे कुम्भकर्णने बानरराज सुग्रीवको छोड़दिया। पश्चात शिला लेकर कुम्भककर्ण लक्ष्मणकी ओर आया। उसको हाथ उठाये आता देखके शीघ्रताके साथ तीक्ष्ण बाणोंसे लक्ष्मणने उसके हाथको काट दिया; तब कुम्भकर्ण चतुर्भुजी होगया। लक्ष्मणने शिला शस्त्रके सहित उन हाथोंकोभी काटके गिरा दिया; तब कुम्भकर्ण अनेक पैर और अनेक हाथवाला होगया; लक्ष्मणने ब्रह्मास्त्रसे उसेभी काट डाला। दिव्य अस्त्रके लगनेसे महा बलवान कुम्भकर्ण रणभूमिमें ऐसे गिर गया, जैसे बिजुलीके लगनेसे शाखा सहित वृक्ष गिर पड़ता है। वृत्रासुरके समान बलवान कुम्भकर्णको पृथ्वीमें मरा हुआ देखकर राक्षसलोग भयसे इधर उधरको भागने लगे। राक्षस योधाओंको इधर उधरको भागते देखकर दूषणके दोनों भाइयोंने उन्हे रोका और युद्ध करते हुए लक्ष्मणके सम्मुख आये। इन दोनों वज्रवेग और प्रमाथीको क्रोधसे भरे और सम्मुख आये देखकर सुमित्रापुत्र लक्ष्मणने गरजकर अपने धनुषपर बाण चढ़ाया, तब बुद्धिमान लक्ष्मणका और दूषणके भाइयोंका भयानक युद्ध हुआ। लक्ष्मणने बाणोंकी वर्षासे उन्हें छा लिया, और दोनों वीरोंने भी लक्ष्मणके ऊपर बहुत बाणोंकी वर्षा करी। इस रीतिसे एक मुहूर्त तक वज्रवेग और प्रमाथीके सङ्ग लक्ष्मणका भयानक युद्ध होता रहा। इसके पश्चात पर्व्वतके शिखरको लेके पवनपुत्र हनुमानने वज्रवेगके प्राणका नाश कर दिया और नीलने पहाड़ उठाकर महा बलवान प्रमाथीके प्राणको नाश किया। इसके अनन्तर राम और रावणकी सेनाका परस्पर भयानक युद्ध होने लगा। बन्दर सहस्रों राक्षसोंको और राक्षस सहस्रों बन्दरोंको मारने लगे, परन्तु अधिक राक्षसही मरे, बन्दर नहीं।

२८५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! कुम्भकर्ण प्रहस्त और महा शस्त्रधारी धूम्राक्षको युद्धमें मरा हुआ सुनकर रावण अपने पुत्र मेघनादसे बोला कि, हे शत्रुनाशन! तुम लक्ष्मणके सहित राम और सुग्रीवको मारो; हे सुपुत्र! तुमने इन्द्राणीके स्वामी सहस्रनेत्रवाले वज्रधारी इन्द्रको युद्धमें जीतकर बड़ा यश प्राप्त किया है; हे शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ! हे शत्रुनाशन! गुप्त और प्रकट दिव्य शस्त्रोंसे

मेरे शत्रुओंको नाश करो; हे पापरहित! राम लक्ष्मण और सुग्रीव भी तुम्हारे बाणोंको नहीं सह सकते हैं; तब उनके सेवक कैसे सह सकेंगे; जिस कार्य्यको कुम्भकर्ण और प्रहस्त नहीं कर सके उसे तुम करो। युद्धमें जाके तुम खरका बदला लो, हे महाभुज! तुम आज तीक्ष्ण बाणोंसे सेनाके सहित शत्रुओंको मारके मुझे ऐसा आनन्द दो जैसे पहिले इन्द्रको जीत-कर दिया था, हे राजन् युधिष्ठिर! इन्द्रको जीतनेवाले मेघनादने कहा बहुत अच्छा ऐसा ही करूंगा, ऐसा कहके युद्ध करनेको चला। तब समरभूमिमें जाके अपने नामको स्पष्ट रीतिसे सुनाके शुभ लक्षणयुक्त लक्ष्मणको युद्धके स्थलपर ललकारा। लक्ष्मण भी बाण सहित धनुषको लेके धनुषकी टङ्कारसे लोगोंको डराते हुए ऐसे चले जैसे सिंह छोटे हारनों पर दौड़ता है। हे राजन्! जयकी इच्छा करनवाले और परस्पर डाह रखनवाले लक्ष्मण और मेघ-नादका भयानक युद्ध हुआ। जब रावणका पुत्र बाणोंसे पार न पासका, तब बलवानोंमें श्रेष्ठ मेघनादने लक्ष्मणके ऊपर तोमर छोड़े। सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने तोमरोंको आते हुए देख-कर तीक्ष्णबाणोंसे काटकर गिरा दिया। लक्ष्मणके तीक्ष्णबाणोंसे जब तोमर कटकर पृथ्वीमें गिर गये, तब बालिपुत्र श्रीमान अङ्गद एकवृक्ष लेकर मेघनादकी ओर दौड़े और बड़े वेगसे राक्षसके सिरमें उस वृक्षको मारा। बल-वान मेघनाद उससे कुछ भी व्याकुल न हुआ, और प्रास अङ्गदके मारनेको उठाया। लक्ष्मणने उस प्रासको काटकर गिरा दिया। तब रावणके पुत्र मेघनादने अङ्गदकी बाईं कांखमें एक गदा मारी। बलवान बालिके पुत्र अङ्गदने उस प्रहारको सहकर बड़े क्रोधके साथ एक वृक्ष मेघनादके मारनेको चलाया। हे राजन् युधि-ष्ठिर! उस वृक्षसे मेघनादके रथके घोड़े और सारथी मर गये। तब रथसे उतरकर रावणका पुत्र मेघनाद अन्तर्द्धान हो गया। बहुत माया जाननेवाले मेघनादको अन्तर्द्धान हुआ जानकर राम वहांपर आए और अपनी सेनाकी रक्षा करने लगे। तब वह राक्षस वर पाये हुए, बाणसे राम और लक्ष्मणको मारने लगा। राम और लक्ष्मण भी अन्तर्द्धान हुए मेघनाद-पर बाणोंको वर्षा करने लगे। मेघनादने बड़ा क्रोध करके पुरुषसिंह राम और लक्ष्मणपर सैकड़ों सहस्रों बाण चलाये। तब शिला लेकर बन्दर लोग उस छिपे हुएको ढूढ़-नेके वास्ते आकाशमें चढ़ गये। छिपे हुए मेघ-नादने उन वानरों और राम लक्ष्मणपर बाणों-की वर्षा करी। मेघनादके बाणोंसे व्याकुल होकर राम और लक्ष्मण दोनो भाई ऐसे गिरे, जैसे सूर्य्य और चन्द्रमा गिरते हैं।

२८६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! उन राम लक्ष्मण दोनों भाइयोंको गिरा हुआ देख-कर रावणके पुत्र मेघनादने वर पाये हुए शस्त्रोंसे उन्हे बांध लिया वह दोनों वीर मेघनादसे बंधकर युद्धमें ऐसे शोभायमान हुए, जैसे पिञ्जरेमें पक्षी। राम और लक्ष्मणको पृथ्वीमें गिरा, और बंधा हुआ देखकर बन्दरोंके सहित सुग्रीव वहांपर आये और उनको घेरकर बैठ गये। सुषेण, मयन्द, द्विविद, कुमुद, अङ्गद, हनुमान, नील, तार, नल और सुग्रीव सब वहीं आगये। तब उस स्थानमें कार्य्य सिद्ध करनेवाले, विभीषणने आके प्रज्ञास्त्रसे राम लक्ष्मणको सचेत किया, और सुग्रीवने मन्त्रयुक्त विशल्या नामक औषधीसे घाव रहित किया। राम लक्ष्मण सचेत घाव-रहित और सावधान होकर बैठ गये। हे राजन् युधिष्ठिर! तब विभीषण सावधान हुए इक्ष्वाकुवंशी रामसे हाथ जोड़कर ऐसे वचन बोले, हे महाराज! कुबेरकी आज्ञासे यह

गुह्यक जल लेके आपके पास आया है। हे शत्रुको दुःख देनेवाले! यह जल छिपे हुएको दिखानेके वास्ते कुबेरने आपको लिये भेजा है, इस जलसे नेत्रोंको धोते हो छिपे हुए प्राणियोंको आप देखेंगे, और जिस मनुष्यको आप देंगे, वहभी देखेगा। रामने बहुत अच्छा कहकर उस संस्कार किये, जलको ले लिया, और उससे लक्ष्मण राम सुग्रीव जाम्बुवान, अङ्गद, मयन्द द्विविद और नीलने अपने नेत्रोंको धोआ और जैसा विभीषणने कहा था, वैसाही हुआ। जो वस्तु नेत्रोंसे नहीं दीख सकती हैं, वे सब लोग क्षण भरमें देखने लगे। हे राजन् युधिष्ठिर! मेघनाद अपने कार्य्यको समाप्त करके अपने कर्म्मको पिताके पास कहने गया। और कह कर फिर युद्धमें आया, उसको युद्धकी इच्छासे आता हुआ देखकर लक्ष्मण उसकी ओर विभीषणकी सम्मतिसे दौड़े। सन्ध्या वन्दन करनेके पूर्व्वही उसको मारनेको इच्छासे बड़े क्रोधसे साथ लक्ष्मणने बाण छोड़े। हे राजन्! जीतनेकी इच्छा करनेवाले इन दोनोंका ऐसा भयानक युद्ध हुआ, कि जैसे इन्द्र और प्रह्लादका। रावणके पुत्र मेघनादने सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणको व्याकुल किया, और सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने अग्निके समान बाणके लगनेसे क्रोधमें भरके मेघनादको आठ बाण मारे। मेघनादने सर्पके समान आठ बाण लक्ष्मणको मारे। लक्ष्मणने भी तीन बाण मेघनादको मारके उसकी जो गति करी, सो तुम मुझसे सुनो। एक बाणसे धनुषके सहित उसके हाथ काट दिये, और दूसरे बाणसे बाणयुक्त दूसरा हाथभी काटकर गिरा दिया; तीक्ष्ण धारवाले तीसरे बाणसे चमकीले कुण्डलोंसे युक्त सिरको काट दिया। मेघनादके सिर और भुजाओंको काटकर बलवानोंमें श्रेष्ठ लक्ष्मणने सूतको भी तीक्ष्णशस्त्रोंसे मार डाला; तब उस रथको घोड़े लङ्कामें ले गये, रावणने उस रथको अपने पुत्रसे खाली देखा: पुत्रको मरा हुआ देखकर रावणका हृदय भयसे व्याकुल होगया। रावण शोक और मोहसे व्याकुल होकर सीताको मारनेको उद्यत हुआ। अशोक वाटिकामें रहनेवाली रामका दर्शन चाहनेवाली सीताको मारनेके लिये खड्ग उठाके रावण चला। उस दुर्बुद्धिकी पापकर्म्ममें निश्चय देखके अबिन्ध्य शान्त करनेके लिये ऐसा बोला, हे राक्षसेन्द्र! तुम प्रकाशमान बड़े राज्यमें स्थित हो; इस लिये स्त्रीको मारने योग्य नहीं हो। जब स्त्री तुम्हारे बन्धन और वशमें है, तो मरी हुई है, देहके काटनेसे यह नहीं मरेगी किन्तु इसके पतिको मारडालो, तो यह आपही मर जायगी। हे राक्षसेन्द्र! तुम्हारे बलके समान साक्षात इन्द्र भी नहीं हैं; तुमने अनेक बार युद्धमें देवतोंको व्याकुल किया है। इस प्रकार अनेक प्रकारकी बातोंसे क्रोधी रावणको अविन्ध्यने समझाया और रावणने भी उसके बचनोंको ग्रहण किया। तब रावणने युद्धमें चलनेका निश्चय किया, और खड्ग लेकर रथ सजानेकी आज्ञा दी।

२८७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! प्यारे पुत्रके मरे जानेपर रावणको बड़ा क्रोध हुआ। तब रत्न जटित सोनेके रथपर बैठके युद्धको चला। अनेक प्रकारके शस्त्र लिये घोर राक्षसोंसे घिरा हुआ, रावण बन्दरोंके सेनापतियोंसे लड़ता हुआ रामकी ओर चला। उस क्रोध युक्त रावणको आते हुए देखकर मैन्द, नील, नल, हनुमान और जाम्बुवानने सेनाके सहित; रोका इन मुख्य बानर और रीछोंने वृक्षोंसे रावणकी सेनाका रावणके सन्मुखही बिनाश किया। शत्रुओंसे अपनी सेनाका विनाश होते देखकर राक्षसराज मायावी रावणने माया रची। रावणके शरीरसे शक्ति आदि शस्त्रधारी सैकड़ों सहस्रों राक्षस निकलते दीखने लगे।

रामने दिव्य अस्त्रोंसे उन राक्षसोंको मारा। राक्षसपति रावणने फिर माया रची। सहस्रों राम और लक्ष्मण उत्पन्न कर दिये, वह माया-के राम और लक्ष्मण धनुष वाण लेकर राम और लक्ष्मणको मारनेके वास्ते दौड़े। उन मायाके राक्षसोंको आते हुए देखकर और भ्रम रहित होके राम लक्ष्मणसे यह गूढ़ बचन बोले, हे लक्ष्मण! इन अपने रूपवाले पापी राक्षसोंको मारो। ऐसा कहके राम अपने समान रूपवाले राक्षसोंको मारने लगे। इसके अनन्तर इन्द्रका सारथी मातली सूर्य्यके समान प्रकाशमान हरे घोड़े जिसमें लगे थे, उस रथको लेके रामके पास आया।

मातली बोला, हे काकुत्स्थवंशी राम! यह हरे घोड़ोंसे युक्त रथ इन्द्रका उत्तम चैत्ररथ है, इसीसे सैकड़ों और सहस्रों दैत्य दानवोंको इन्द्र युद्धमें नाश करते हैं; हे पुरुष-सिंह! इस रथपर चढ़कर रावणको मारिये, बिलम्ब न कीजिये। मातलीके ऐसे बचन सुनके रामको रावणकृत मायाहीकी शङ्का हुई। तब बिभीषण बोले, हे पुरुषसिंह राम! यह दुरात्मा रावणकी माया नहीं है; इस कारणसे इन्द्रके प्रकाशयुक्त रथपर शीघ्र चढ़िये। तब राम बिभीषणसे बहुत अच्छा कहके रथपर चढ़े, और क्रोधमें भरके रावणकी ओर चले,। तब सब लोग हाहा-कार करने लगे, आकाशमें देवतालोग अनेक भांतिके बाजे बजाने लगे। हे राजन्! उस समय राम और रावणका ऐसा युद्ध हुआ कि जिसकी उपमा दूसरे युद्धकी नहीं हो सकती। तब रावणने इन्द्रके बज्रके समान एक महा घोर त्रिशूल ऐसा फेंका जैसे ब्रह्मदण्ड। रामने उस त्रिशूलको तीक्ष्ण वाणोंसे काटकर गिरा दिया। उस कठिन कर्म्मको देखकर रावणको बड़ा भय हुआ। तब रावणने सहस्रों तीक्ष्ण वाण और अनेक भांतिके शस्त्र रामके ऊपर चलाये। ऐसेही अनेक प्रकारकी शक्ति, तीक्ष्ण छूरे रावण छोड़ने लगा। रावणकी उस मायाको देखकर वन्दर दशों दिशाका भागने लगे। तब रामने उत्तम पंखलगे हुए, सोनेसे आभूषित वाणको तरकससे निकालकर ब्रह्मास्त्रसे युक्त किया। उस बाणको देखकर इन्द्रादिक देव-तोंने समझा कि रावणकी थोडी आयु रह गई। तब रामने रावणके नाश करनेवाले ब्रह्म-दण्डके समान भयानक और अनुपम वाणको छोड़ा। हे राजन् युधिष्ठिर! उस वाणके छोड़तेही रावण घोड़े और रथके सहित जलने लगा। तब रावणको मरा हुआ देखके गन्धर्व्व और चारणोंके सहित देवता लोग बहुत प्रसन्न हुए। रावणको पञ्चतत्वोंने त्याग दिया, ब्रह्मा-स्त्रके तेजसे वह भस्म हो गया। रावणके शरीरकी धातु, मांस और रुधिर ऐसे जले कि कहीं भस्म भी न मिली।

२८८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! श्रीरामचन्द्र देवोंके शत्रु क्षुद्र रावणको मारकर लक्ष्मण और अपने मित्रोंके सहित बहुत प्रसन्न हुए रावणके मारने पर देवता और ऋषियोंने जयकारयुक्त आशीर्वादोंसे महाबाहु रामकी स्तुति करी। कमलनयन राम पर सब देवता और गन्धर्व्व फूलोंकी वर्षा करने लगे, रामकी यथायोग्य पूजा करके तब देवता अपने अपने स्थानको चले गये। हे युधिष्ठिर! उस समयके उत्सवसे आकाश परिपूर्ण होगया। शत्रुके नगरको जीतनेवाले महा यशस्वी रामने रावणको मारनेके पश्चात लङ्का बिभीषणको दे दी। इसके पश्चात बिभीषणसे पूजित सीताको आगे करके अविन्ध्य नामक बुद्धिमान बुढ़ा मन्त्री लङ्कासे बाहरको चला। रामके पास आके, दीन होके काकुत्स्थवंशी रामसे बोला, हे महात्मन्! इस सच्चरित्रवाली देवी जानकीको ग्रहण

कीजिये। इक्ष्वाकुनन्दन रामने उसके ऐसे वचन सुनके रथसे उतरकर आंसुओंसे भरे नेत्रवाली जानकीको देखा। शोकसे व्याकुल हुई मलीन अङ्ग और वस्त्रवाली जटा बांधे हुए रथमें बैठी उस जानकीको देखके घबड़ाकर राम बोले, हे वैदेही! जो मेरे करने योग्य कार्य्य था उसे मैंने करके तुमको छुड़ा दिया, हे भद्रे! मुझे पति पाके तुम राक्षसके घरमें बूढ़ी न हो जाओ ऐसा विचारकर रावणको मैंने मारा है; मुझसा मनुष्य धर्म्मको जानकर पराये हाथमें गई स्त्रीको एक मुहूर्त्त भर भी क्योंकर रख सकता है। हे मिथिलेशपुत्री! चाहे तुम अच्छे चरित्रवाली हो, चाहे बुरे चरित्रवाली हो मैं तुम्हें अब ऐसे नहीं रख सकता जैसे कुत्तेकी चाटी हुई खीरको। हे राजन्! इस प्रकार वचनको सुनके बहुत दुःखी होके सीता केलेके समान पृथ्वीपर गिर पड़ी। सीताके हृदयमें जो आनन्द उत्पन्न हुआ था, वह क्षण भरमें ऐसा नष्ट हो गया जैसे दर्पणसे कलई। तब सब बन्दर लक्ष्मणके सहित मरे हुएके समान होगये। तब शुद्धात्मा कमलसे उत्पन्न हुए, युगके कर्त्ता ब्रह्माजी रामको दीख पड़े। इन्द्र, अग्नि, वायु, यम, और कुवेर, निर्म्मल सप्त ऋषि तथा दिव्य प्रकाशयुक्त राजा दशरथ हंसयुक्त विमानपर बैठे हुए आकाशमें दीख पड़े। उस समय देवता और गन्धर्वोंसे भरा हुआ आकाश ऐसा जान पड़ता था, जैसा शरद ऋतुमें ताराओंसे भरा हुआ अन्तरीक्ष। तब यशस्विनी सीताने सबके बीचमें खड़े होकर चौड़ी छातीवाले रामसे कहा, हे राजपुत्र! मैं आपके सम्मुख कोई झूठ नहीं कहती हूं, सो आप सुनें स्त्री पुरुषोंको जो गति हैं जो सब प्राणियोंके हृदयमें विराजमान वायु हैं, यदि मैंने पाप किया हो तो वही प्राणका नाश कर दें; अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी और वायु मेरे प्राणोंको नाश करें, यदि मैंने पाप किया हो। हे वीर! यदि मैंने स्वप्नमें भी तुम्हारे सिवाय दूसरे पुरुषका चिन्तन न किया हो तो परमेश्वर तुमहीको मेरा पति बनावें। हे युधिष्ठिर! तब वानरोंको आनन्द देनेवाली पवित्र आकाशवाणी हुई। वायु बोले, हे रघुनन्दन! मैं सदा चलनेवाला वायु हूं; मैं सत्य सत्य कहता हूं, कि तुम सीताको अपनी स्त्री बनाओ, यह निष्पाप है। अग्नि बोले हे रघुनन्दन! मैं सब प्राणियोंके भीतर रहता हूं, जनकनन्दिनीने कुछ भी अपराध नहीं किया है। वरुण बोले हे राम! सब प्राणियोंके शरीरमें रस मेरा ही उत्पन्न किया है, आपसे कहता हूं कि जानकी को ग्रहण करो।

ब्रह्मा बोले, हे साधु! हे सच्चरित्र! तुम राजऋषि धर्म्ममें वर्त्तमान हो; तुमने यह कुछ आश्चर्य्यकी बात नहीं कही; हे वीर! तुमने देव, दानव, गन्धर्व्व, सर्प, यक्ष और महर्षियोंके शत्रुको मारा; रावण मेरे ही वरदानसे पहिले सब प्राणियोंके मारनेके योग्य हुआ था, कुछ कालसे वह किसी कारणसे बचा रहा फिर अपने नाशके वास्ते उस दुष्टने सीताको चुराया। नलकूवरके शापसे मैंने सीताकी रक्षा की। रावणको यह शाप था कि यदि किसी स्त्रीका बलसे स्पर्श करेगा तो तेरे सिरके सौ टुकड़े हो जायंगे; हे देवतुल्य राम! तुमको इसमें कुछ भी शङ्का न करनी चाहिये; तुमने बड़ा भारी कार्य्य किया है, अब सीताको भी ग्रहण करो।

दशरथ बोले, हे पुत्र! मैं तुम्हारा पिता दशरथ हूं; तुम्हारा कल्याण हो, हे पुरुषोत्तम! मैं तुम्हें राज्य देता हूं, ग्रहण करो।

राम बोले; हे राजेन्द्र! यदि आप मेरे पिता हैं तो, मैं आपको प्रणाम करता हूं; आपकी आज्ञासे मैं मनोहर अयोध्या नगरीको जाऊंगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! राजा दशरथ फिर प्रसन्न होकर लाल

नेत्रवाले रामसे बोले; कि तुम अयोध्याको जाओ ; हे महा सुन्दर ! बनमें तुमको चौदह वर्ष व्यतीत हो गये हैं। तब देवतोंको नमस्कार करके मित्रोंसे आनन्दित होके रामने सीताको ऐसे ग्रहण किया, जैसे इन्द्र शचीको ग्रहण करते हैं। तब शत्रुके जीतनेवाले रामने अविन्ध्यको वरदान दिया, और त्रिजटा राक्षसीको भी प्रसन्न किया। तब ब्रह्मा रामसे बोले, कि इन्द्रादिक देवतोंसे वर मांगो। रामने धर्म्ममें स्थिति और शत्रुओंसे जय मांगी तथा राक्षसोंसे मरे हुए, बन्दरोंका जीना भी मांगा। ब्रह्माने कहा ऐसेही हो। ब्रह्माके ऐसे वचन कहते ही सब बन्दर चैतन्य होकर खड़े होगये। तब महा भाग्यवती सीताने हनुमानको यह वरदान दिया ! हे पुत्र जबतक रामका यश जगतमें रहे तबतक तुम जीते रहो, मेरी कृपासे तुमको दिव्य भोग प्राप्त हो। इसके पश्चात कठोर कर्म्म करनेवाले बन्दरोंके सम्मुख इन्द्रादिक देवता अन्तर्द्धान हो गये। इन्द्रका सारथी मातली रामको जानकीके साथ देखर बहुत प्रसन्न हुआ, और मित्रोंके बीचमें यह बचन बोला, हे सत्य पराक्रम ! देव गन्धर्व्व; यक्ष, मनुष्य और सर्पोंके दुःखको तुमने दूर किया ; जबतक पृथ्वी रहेगी तबतक देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व्व और राक्षसोंके सहित सब लोग तुम्हारा यश गावेंगे, ऐसा कहकर और रामकी आज्ञा लेके सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त रथपर चढ़कर मातली चला गया। उसके पश्चात सीता और लक्ष्मणका सङ्ग लेके सुग्रीवादिक बन्दरोंके सहित राम चले। लङ्कामें रक्षाका प्रबन्ध करके विभीषणभी रामके सङ्ग चला। आकाशगामी पुष्पक विमानमें बैठके फिर उसी सेतुके मार्गसे समुद्रको तरे। इच्छानुसार चलनेवाले पुष्पक विमानके द्वारा मान्त्रयोंके सहित जितेन्द्रिय राम वहां समुद्रके तटपर पहुंचे जहां पहिले रहे थे। वहां कुछ काल राम ठहरे और बन्दर रीछ और लंगूरोंकी यथायोग्य पूजा करके उन लोगोंको बिदा किया। इसके पश्चात सुग्रीव और बिभीषणके सहित किष्किन्धा पुरीको चले। पुष्पक विमानमें बैठे हुए सीताको अनेक वन दिखाते शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ राम किष्किन्धापुरीमें पहुंचे, कार्य्य सिद्ध करनेवाले अङ्गदको युवराजका तिलक दिया। तब सुग्रीवादि लक्ष्मणके सहित जिस मार्गसे आये थे उसी मार्गसे अपनी अयोध्या नगरीमें प्राप्त हुए। वहां पहुंचके हनुमानको भरतके पास दूत भेजा। भरतकी इच्छाओंको जानकर जब वायुपुत्र हनुमान फिर रामके समीप लौट आये, तब रामने नन्दीग्रामसे भरतको देखा कि मलिन वस्त्र, मलिन अङ्ग, आगे खड़ाऊं धरे हुए आसनपर बैठे हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ युधिष्ठिर ! भरत और शत्रुघ्नसे मिलकर राम और लक्ष्मण बहुत प्रसन्न हुये, भरत और शत्रुघ्न भी राम लक्ष्मण और सीताका दर्शनकर बहुत आनन्दित हुए। भरतने सत्कार करके रामको राज्य सौंप दिया। इसके पश्चात वशिष्ठ और वामदेवने पवित्र दिनमें रामका राज्याभिषेक किया। राज्य पाकर रामने अपने प्रियमित्र सुग्रीव और पुलस्त्य, नन्दन विभीषणको अनेक प्रकारके भोगोंसे सत्कार करके तथा राजनीतिका उपदेश करके घर जानेको दुःखके साथ बिदा किया। रघुनन्दन रामने पुष्पक विमानकी पूजा करके कुवेरको दे दिया। इसके पश्चात गोमतीके तटपर देवऋषियोंके सहित दश अश्वमेध यज्ञ किया।

२८६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर ! पहिले समयमें महा तेजस्वी रामने इस प्रकार बनमें बास करके घोर दुःख भोग किया था, हे

पुरुषसिंह! हे शत्रुनाशन! तुम चक्री हो, और अपने बाहुबलके आश्रयसे चलते हो, इस लिये कुछ सोच मत करो; तुम्हारे कर्म्म सन्देहसे रहित हैं; तुम्हारे कर्मों की किञ्चित दूसरा नहीं कर सकता; जिस मार्गमें तुम चलते हो, उसमें चलनेसे इन्द्रादिक देवता और राक्षसोंको भी दुःख होता है; वज्रधारी इन्द्रने मरुत गणोंकी सहायतासे वृत्र नमुची, और दीर्घजिह्वा राक्षसोंको मारा था; आप भी सब प्रकार सहायवान हैं; जिसके भाई साक्षात अर्ज्जुन हैं, वे कौनसी वस्तुको नहीं जीत सकते; यह बलवानोंमें श्रेष्ठ महा पराक्रमो भीम, युवा महा धनुषधारी नकुल और सहदेव आपके सहायक हैं, तब आप क्यों सोच करते हैं? हे शत्रुनाशन! आपके भाई मरुत्‌गणके सहित इन्द्रकी सेनाको भी जीत सकते हैं; हे भरतकुल-श्रेष्ठ! आप महा धनुषधारी देवरूपी अपने भाइयोंकी सहायतासे सब शत्रुओंको जीतेंगे। देखिये इसी समय दुष्ट बलवान उन्मत्त सिन्धु-राज जयद्रथने द्रौपदीको चुरा लिया था, उसको जीतकर तुम्हारे महात्मा भाइयोंने द्रौपदीको छीन लिया, और रामने तो विना किसीको सहायताही महा पराक्रमी राक्षसराज रावण को युद्धमें मारा और सीताको छीन लिया। हे राजन्! आप अपनी वुद्धिसे विचारिये कि रामके बन्दर रीछ और लंगूर मित्र थे, उनमें कोई भी मनुष्य नहीं था। हे भरतर्षभ! हे पुरुषश्रेष्ठ! हे शत्रुओंको तपानेवाले! इस लिये अब आप उत्तम साहस कोजिये, क्योंकि आप ऐसे महात्माओंको सोच करना नहीं चाहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान मार्क-ण्डेयके ऐसे वचन सुन महाबलवान महाराजने दुःखको त्याग दिया, और फिर ऐसा कहने लगे।

२८० अध्याय समाप्त।

रामोपाख्यान पर्व्व समाप्त।

आगे पतिव्रता-महात्म्य पर्व्व लिखेंगे।

महाराज युधिष्ठिर बोले मैं न अपना, न अपने भाइयोंका, और न राज्य नष्ट होनेका इतना सोच करता हूं, जितना इस बातका कि राजपुत्री द्रौपदीका; इसने जुएके समयमें दुष्टोंके हाथसे बहुत दुःख पाया और हम लोगोंका उद्धार भी किया; फिर वनमें जयद्रथने अपने बलसे इसको चुरा लिया। आपने पहिले कभी द्रौपदीके समान पतिव्रता और महाभाग्यवती कोई स्त्री देखी वा सुनी है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले; हे राजन् युधिष्ठिर! आप कुलीन स्त्रियोंके चारित्रोंको सुनिये। हम राजपुत्री सावित्रीका वर्णन करते हैं, उन्होंने भी बहुत दुःख उठाये थे। मद्रदेशमें धर्म्मात्मा धर्म्म जाननेवाले ब्राह्मणोंके भक्त सत्यवादी जितेन्द्रिय यज्ञकर्त्ता दानी प्रजाके प्यारे सब जगतका कल्याण करनेवाले क्षमावान अश्वपति नामक राजा थे। उनकी बहुत अवस्था वीतने परभी कोई पुत्र उत्पन्न न हुआ। तब उनको बहुत दुःख हुआ। पुत्र उत्पन्न करनेवाले परम नियम और व्रतोंको वह राजा करने लगा। समयपर थोड़ा भोजन करके जितेन्द्रिय और ब्रह्मचारी रहता था। हे राजसत्तम! गायत्रीसे सैकड़ों सकस्रों बार हवन करके दिनके आठवें भागमें थोड़ा भोजन करता था, ऐसे नियमसे जब वह अठारह वर्ष पूरा कर चुका, तो गायत्रीने उठके बड़ी प्रसन्नताके साथ राजाको दर्शन दिया। वर देनेवाली गायत्रीने राजासे यह कहा—

गायत्री बोली, हे राजन्! मैं तुम्हारे शुद्ध ब्रह्मचर्य्य जितेन्द्रियता और भक्तिसे प्रसन्न हुई हूं, हे अश्वपति मद्रराज! जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो, तुम कभी धर्म्मको न छोड़ना।

राजा अश्वपति बोले, हे देवि! मैंने पुत्र और धर्म्मके लिये यह नियम किया था, मेरे कुलके

बढ़ानेवाले बहुतसे पुत्र हों मुझसे ब्राह्मणोंने कहा था कि पुत्र हो परम धर्म्म है; यदि आप प्रसन्न हुई हैं तो पुत्र दीजिये।

गायत्री बोलीं, हे राजन्! मैंने पहिले ही तुम्हारे इस अभिप्रायको समझकर ब्रह्मासे कहा था, मेरे प्रतापसे और ब्रह्माकी आज्ञासे तुम्हारे एक बड़ी तेजस्वी कन्या होगी, हे राजन! तुम इसका उत्तर कुछ मत दो, मैं ब्रह्माकी आज्ञासे प्रसन्न होकर तुमको वर देती हूं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! गायित्रीके बचनोंको अङ्गीकार करके राजाने फिर गायत्रीकी स्तुति करी। तब गायत्री अन्तर्द्धान हो गई, तो राजा अपने नगरको चले आये, और अपने राज्यमें रहकर धर्म्मसे प्रजाका पालन करने लगे। कुछ काल बीतने पर राजाकी बड़ी स्त्रीको गर्भ रहा; उस मानिनी राजपुत्रीका गर्भ ऐसे बढ़ने लगा, जैसे आकाशमें शुक्लपक्षका चन्द्रमा बढ़ता है। पूर्ण समयपर कमलनयनी कन्याका जन्म हुआ। राजाने प्रसन्न होकर जन्मकालकी सब क्रिया करी। सावित्रीने प्रसन्न होकर यह कन्या दी थी। इस कारणसे ब्राह्मणोंने और पिताने उस कन्याका नाम साबित्री ही रक्खा। वह राजकन्या साक्षात लक्ष्मीके समान क्रमसे बढ़ने लगी, और कुछ कालमें योवनवती होगई। उस क्षीण कटि और उत्तम अङ्गवाली सोनेकी मूर्त्तिके समान कन्याको देखकर सबलोग देवकन्या समझते थे। उस कमलनैनोको तेजसे भरी हुई देखके उसके तेजसे घवड़ा कर कोई भी ब्याहनेको इच्छा नहीं करता था। एक दिन सावित्री व्रत करके और सिरसे स्नानकर देवता और अग्निकी पूजा कर पिताके पास गई। लक्ष्मीके समान रूपवाली सावित्री पिताके चरणोंमें प्रणाम करके हाथ जोड़के पिताके पास बैठ गई। अपनी कन्याको योवनवती तथा देवतोंके समान रूपवाली देख और उसके योग्य कोई वर न पाके राजा दुःखित हुआ। राजा बोले; हे पुत्री! तेरे बिबाहका समय प्राप्त हुआ, किन्तु मुझसे कोई बिबाहको नहीं कहता है, इस कारणसे तुम आपही अपने गुणोंके समान अपने पतिको ढूंढ़ लो, जो तुमसे बिबाहकी इच्छा करे तुम मुझे उसको दिखाना, मैं विचार कर उसके सङ्ग तुम्हारा बिबाह कर दूंगा। मैंने पढ़ते हुए, ब्राह्मणोंसे धर्म्मशास्त्रमें सुना है, हे कल्याणी! मैं तुमसे जो कहता हूं उस बचनको तुम सुनो। जो पिता कन्याका बिबाह न करे वह निन्दाके योग्य है, जो पति स्त्रीको ऋतुकालमें इच्छाको पूरी न करे, वह निन्दाके योग्य है, पतिके मर जानेपर जो पुत्र माताकी रक्षा न करे वह भी निन्दाके योग्य है। हे पुत्री! मेरे इस बचनको सुनके तू शीघ्रतासे पतिको खोज कर मुझसे कह; जिससे मैं देवतोंकी निन्दाके योग्य न रहूं, ऐसा ही काम तुमको करना चाहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! राजाने अपनी पुत्रीसे ऐसा कहके बृद्ध मन्त्रियोंको यात्राकी सामग्री इकट्ठी करनेकी आज्ञा दी। तप करनेवाली सावित्री पिताके चरणोंको प्रणाम करके और लज्जायुक्त होके पिताके बचनोंको मानकर बहुत शीघ्र चली। सावित्री सोनेके रथमें बैठके बृद्ध मन्त्रियोंके साथ राजर्षियोंके मनोहर तपोबनको चली। बनमें जाके बृद्ध और मानने योग्य लोगोंके चरणोंको प्रणाम करती हुई सब बनमें घूमन लगी। हे तात! सब तीर्थोंमें धन देती हुई, और मुख्य ब्राह्मणोंकी सेवा करती हुई, राजकन्या सावित्री अनेक देशोंमें फिरने लगी।

२९२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले हे राजन्! एक समय मद्रराज अपनी सभामें नारदके सहित बैठे हुए, कुछ वार्त्तालाप कर रहे थे। उसी

समय सब तीर्थोंमें घूमकर मन्त्रियोंके सहित सावित्री अपने पिताके घर आई। नारदके सहित अपने पिताको बैठा हुआ देखकर दोनोंके चरणोंको प्रणाम किया।

नारद बोले, यह तुम्हारी पुत्री कहां गई थी? और कहांसे आई है? किस कारणसे तुम युवती कन्याका विवाह नहीं करते हो?

राजा अश्वपति बोले, हे नारद! इसी कार्य्यके लिये मैंने इसे भेजा था। अभी यह आई है, इससे सुनना चाहिये कि किसको इसने स्वामी बनाया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, पिताके बचन सुनकर सावित्री ऐसे बोली।

सावित्री कहने लगी शाल्व देशमें एक धर्मात्मा क्षत्री द्युमत्सेन नामसे प्रसिद्ध थे, वह पश्चात अन्धे होगये, उनके जब नेत्र नष्ट होगये और उनका पुत्र बालक था, तब उनके पहिले शत्रुओंने उनके राज्यको छीन लिया, द्युमत्सेन बालक पुत्र और स्त्रीके सहित बनमें जाके तप करने लगे। उनका पुत्र जो नगरमें उत्पन्न हुआ और तपोवनमें बढ़ा वही सत्यवान मेरा पति होने योग्य है, यही मैंने मनसे सङ्कल्प किया है।

श्रीनारद मुनि बोले, हे राजन्! तुम्हारी सावित्री कन्याने बड़ा पाप किया, जो बिना जाने गुणवान सत्यवानको अपना पति बनाया। उसके पिता माता सत्य बोलते थे, इसी कारणसे ब्राह्मणोंने उसका नाम सत्यवान रक्खा। यह बालक अवस्थासे घोड़ोंको बहुत प्यार करता था, इसलिये मट्टीके घोड़े बनाया करता है घोड़ोंके चित्र भी खींचा करता है इस कारणसे उसको चित्राश्व भी कहते हैं।

राजा बोले, हे नारद! इस समय वह राजाका बालक तेजस्वी, बुद्धिमान, सत्यवान, वीर और माता पिताका भक्त है वा नहीं?

नारद बोले, हे राजन् वह बालक सूर्य्यके समान तेजस्वी, बृहस्पतिके समान बुद्धिमान, इन्द्रके तुल्य वीर और पृथ्वीके सदृश क्षमाशील है।

राजा अश्वपति बोले, वह राजाका पुत्र सत्यवान दाता, ब्राह्मण-भक्त, रूपवान उदार तथा मनोहर है वा नहीं?

नारद बोले, वह राजा सङ्कृतिके पुत्र रन्तिदेवके तुल्य अपनी शक्तिके अनुसार दान देनेवाला, ब्राह्मण भक्त, सत्यवादी; तथा उशीनरके पुत्र शिबीके समान वीर है। ययातिके समान उदार, चन्द्रमाके तुल्य मनोहर अश्विनीकुमारोंके समान रूपवान द्युमत्सेनका पुत्र है। वह दान देनेवाला, नम्र; वीर, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, मित्रतायुक्त ईर्षारहित, लज्जा और शोभासे युक्त है; उसमें सदा सीधापन रहता है, संक्षेपसे, प्रयोजन यह है कि तपोवृद्ध और शीलवृद्ध उसकी प्रशंसा करते हैं।

राजा अश्वपति बोले, हे भगवन्! आपने सब गुणोंसे भरा उस बालकको कहा; अब उसमें जो कुछ दोष हो सो भी कहिये।

नारद बोले, हे राजन्! उसमें एक ही दोष है जो सब गुणोंको छिपालेता है। वह दोष किसी यत्नसे दूर होने योग्य नहीं है। वह एक दोष यही है कि वह अबसे एक वर्षमें मर जायगा।

राजा बोले, हे सावित्री! तुम जाओ और दूसरा पति करो, उसके एक ही दोषने सब गुणोंको छिपा लिया। जैसा सुझसे देवपूजित भगवान नारदने कहा कि एकही बर्षमें वह अपने शरीरको त्याग देगा।

सावित्री बोली, हे पिता! अंश अर्थात् पैत्रिक सम्पत्तिको विभाग निर्णायक गुटिक एकही बार गिरती है, कन्या एकही बार दीजाती है, दान एकहीबार दिया जाता है, ये तीनों एकही बार होते हैं। वह बड़ी अवस्थावाला हो, वा थोड़ी आयु वाला हो वा

गुणवान हो, वा गुण रहित हो, मैंने एक बार पति बना लिया अब मैं दूसरा पति नहीं करूंगी; मनसे निश्चय करके वचनसे कहा जाता है; फिर वही कर्म्मसे किया जाता है, इसमें मेरा मन ही साची है।

नारद बोले, हे नरोत्तम! तुम्हारी पुत्रीकी बुद्धि स्थिर है; वह इस धर्म्मसे कदापि नहीं हट सकती है, जो सत्यवानमें गुण हैं, वे दूसरे पुरुषमें नहीं हैं, इस कारणसे मैं उसीको कन्या देना उत्तम समझता हूं।

राजा बोले, हे भगवन्! जो आपने कहा सो अटल है, ऐसाही मैं करूंगा, क्योंकि आप मेरे गुरु हैं।

नारद बोले, तुम्हारी साविवी कन्याका विवाह निर्विघ्न हो। जो कुछ मुझसे उपकार होसकेगा, मैं करूंगा। तुम्हारा कल्याण हो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन! ऐसा कहकर नारद स्वर्गको चले गये, और राजा अपनी कन्याके विवाहकी सामग्री इकट्ठी करने लगे।

२९३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! कन्यादानके लिये, नारदके वचनको स्थिर रखके, राजा अश्वपति विवाहके योग्य सब सामग्री जोड़ने लगे। उसके पश्चात वृद्ध ब्राह्मण, ऋत्विक् और पुरोहितको सङ्ग लेकर कन्याके सहित उत्तम दिन बिचारके मेध्यारण्य वनको चले। हे राजन्! वे ब्राह्मणोंके सहित पैदलही द्युमत्सेनके आश्रमपर पहुंचे। वहां जाकर महाभाग राजा द्युमत्सेनको शाल वृक्षके नीचे कुशके आसनपर बैठे हुए देखा। राजा अश्वपतिने राजर्षि द्युमत्सेनको यथा योग्य पूजा करके अपना वर्णन किया। द्युमत्सेनने भी अर्घ, आसन और गोदानसे पूजा करके आनेका प्रयोजन पूछा। राजा अश्वपतिने अपने आनेका सब प्रयोजन कह सुनाया। राजा अश्वपति बोले, हे राजर्षि! यह सुन्दर साविवी नामकी मेरी कन्या है, इसे आप धर्म्मानुसार अपनी पुत्रबधू बनानेके वास्ते ग्रहण कीजिये?

द्युमत्सेन बोले, हे राजन्! हम लोग राज्यसे भ्रष्ट हैं, सदा तपस्वियोंका धर्म्म करते हैं, वनबासके अयोग्य तुम्हारी कन्या आश्रममें किस प्रकार रहेगी?

राजा अश्वपति बोले, हे राजन्! सुख और दुःख सदा नहीं रहते हैं; इस बातको मैं जानता हूं और मेरी कन्या भी जानती है, तब आपको मुझसे ऐसे वचन कहना उचित नहीं! मैं निश्चय करके आपके पास आया हूं, मेरी आशाको आप नाश न कीजिये, मैं आपका मित्र और दास हूं, तथा दूसरे प्रेम पूर्व्वक आया हूं; आप मुझसे ऐसे वचन न कहें, आप मेरे योग्य हैं, मैं आपके योग्य हूं मेरी कन्याको अपनी पुत्रबधू और सत्यवानकी स्त्री बनाइये।

द्युमत्सेन बोले, हे राजन्! मेरा बिचार पहिले ही तुमसे सम्बन्ध करनेका था, परन्तु इस समय राज्य भ्रष्ट होनेके कारण मैं ऐसे कहता हूं। जो मेरा पहिला अभिप्राय था सो अब पूर्ण होगया; तुम मेरे अतिथि हो। जो अच्छा हो सो करो। इसके पश्चात आश्रमके सब ब्राह्मणोंको बुलाकर दोनों राजोंने साविवी सत्यवानका विधि पूर्व्वक बिवाह किया। राजा अश्वपति कन्या तथा और अनेक प्रकारके दान करके परम आनन्दके साथ अपने घरको चले गये। सत्यवान भी सब गुण भरी स्त्रीको पाकर प्रसन्न हुए, और साविवी इच्छानुसार बर पाके प्रसन्न हुई। जब साविवीके पिता चले गये, तब साविवीने अपने वस्त्र और आभूषण उतारकर बकले और गेरूके रंगे वस्त्र पहिन लिये। सेवासे

और अपने उत्तम गुणोंसे साबित्री सबको प्रसन्न करने लगी। सासको शारीरक सेवा और बस्त्र भोजनादिसे एवम ससुरकी मीठे बचनोंसे सेवा करने लगी, पतिकी मीठे बचनोंसे, चतुरतासे एकान्त क्रीड़ासे प्रसन्नता पूर्वक सेवा करने लगी। हे राजा! युधिष्ठिर! इस प्रकारसे उस आश्रमपर रहते हुए उन तपस्वियोंका काल व्यतीत हुआ। नारदके बचनको स्मरण करके साबित्रीका मन सदा मलीन रहता था।

२६४ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! कुछ काल व्यतीत होनेके पश्चात सत्यवानके मरनेका समय आगया। साबित्री नारदके बचनानुसार रोज दिन गिना करती थी। जब साबित्रीने जाना कि अबके चौथे दिन सत्यवान मर जायगा, तभी तीन दिनके उपवासका व्रत धारण कर लिया। राजा द्युमत्सेनने साबित्रीके नियमको सुन बहुत दुःख किया, और साबित्रीको समझाते हुए, उठके ऐसा बचन कहा।

राजा द्युमत्सेन बोले, हे राजपुत्री! यह तुम्हारा व्रत कठिन है, तीन रात बिना अन्न रहना बहुत दुस्तर है। साबित्री बोली, हे तात! तुम कुछ दुःख मत करो, मैं इस व्रतको पूरा करूंगी; उद्योगसे मैंने इस व्रतको किया है, और उद्योगही सब कार्य्यका मूल है। राजा द्युमत्सेन बोले, मैं यह कहनेमें समर्थ नहीं हूं, कि व्रतको तोड़ दो, किन्तु हमारे समान मनुष्योंको यह कहना उचित ही है, कि व्रतको पूरा करो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ऐसा कहके राजा द्युमत्सेन चुप रहगये, और साबित्री काष्ठके समान दृढ़ होके व्रत करने लगी। हे पुरुषश्रेष्ठ युधिष्ठिर! जब प्रातःकाल होते सत्यवानके मरनेका दिन आया, तब साबित्रीने ऐसा विचार करके कि आजही मरनेका दिन है, अग्निको जलाके हवण किया। सूर्य्यके उदय होतेही सन्ध्या बन्दन करके आश्रमके सम्पूर्ण वृद्ध ब्राह्मण और सास ससुरको प्रणाम कर हाथ जोड़के साबित्री खड़ी हुई, सब लोगोंने उसे आशीर्बाद दिया कि तू कभी विधवा न हो। तपोबनके निवासी तपस्वियोंकी बाणीको साबित्रीने बड़े ध्यानसे सुनी, और मनसे उन वाणियोंको ग्रहण किया। जैसा नारदने कहा था, उसी मुहूर्त्त और समयको विचारती हुई साबित्री दुःखसे बैठी रही। एकान्तमें बैठी हुई, राजकन्या साबित्रीसे सास और ससुर प्रीति पूर्वक बोले, जैसा तुमने व्रत किया था, सो पूरा हुआ, भोजन करो।

साबित्री बोली, सूर्य्यके अस्त होनेपर जब मेरी कामना पूर्ण होगी, तब मैं भोजन करूंगी, यही मेरी प्रतिज्ञा है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जिस समय साबित्री ऐसा कह रही थी, उसी समय सत्यवान कन्धेपर फरसा रखके बनको चले। अपने पतिसे साबित्री बोली, हे स्वामी! आप अकेले बनको जाने योग्य नहीं हो, मैंभी आपके सङ्ग चलूंगी, आपको छोड़ नहीं सकती हूं।

सत्यवान बोले, हे भामिनि! पहिले तुम कभी बनको नहीं गई हो, इस समय तुम व्रतसे थकी हो। पैदल कैसे चलोगी?

साबित्री बोली, व्रतसे मुझे ग्लानि वा परिश्रम नहीं हैं, आप मुझे न रोकिये।

सत्यवान बोले, यदि तुमको चलनेमें उत्साह है, तो मैं तुम्हारा प्रिय काम करूंगा, मेरे माता पितासे आज्ञा ले लो जिससे मुझे दोष न लगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! सास और ससुरको प्रणाम करके साबित्री

कहने लगी, यह मेरे स्वामी फल लानेके लिये बनको जाते हैं, आप दोनोंकी आज्ञासे मैंभी वन जानेकी इच्छा करती हूं, मुझसे इस समय विरह सहा नहीं जाता, गुरु और अग्निहोत्रके वास्ते तुम्हारा पुत्र बनको जाता है ; इस लिये रोकने योग्य नहीं है, कुछ कम एक वर्ष मुझे यहां आये होगया, मैं आश्रमसे बाहर कहीं नहीं निकली, किन्तु मेरे फलोंसे भरे हुए बनको देखनेकी इच्छा है।

द्युमत्सेन बोले, जबसे सावित्रीके पिताने कन्यादान किया है, तबसे मेरी पुत्रबधूने कोई बात मुझसे नहीं मांगी, इस लिये जो इसकी इच्छा है, सो पूर्ण हो ; हे पुत्री ! सत्यवानकी मार्गमें कोई विघ्न मत करना।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् ! सास और ससुरसे आज्ञा लेके यशस्विनी सावित्री मुखसे हंसती हुई, और हृदयसे दुःख करती हुई चली। वह फूले हुए कमलके समान नेत्रवाली मोरोंके झुण्डसे भरे हुए, विचित्र और मनोहर बनोंको देखने लगी। पवित्र जलसे भरी नदी और फले वृक्षोंसे भरे पर्व्वतोंको मीठे वचन बोलनेवाली सावित्रीको सत्यवान दिखलाने लगे। निन्दा रहित सावित्री नारदके बचनको स्मरण करके और अपने पतिको देखकर पतिको मरा हुआ देख कर बहुत दुःखित होती थी। धीरे धीरे अपने पतिके पीछे चलती हुई उसी कालको सोचती थी, उस दुःखसे उसका हृदय टुकड़े टुकड़े हुआ जाता था।

२९५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर ! सत्यवानने फल तोड़कर टोकरी भर ली, पश्चात लकड़ी तोड़ने लगा लकड़ी उखाड़ते हुए सत्यवानके शरीरमें पसीना आगया। उस परिश्रमसे सत्यवानके सिरमें पीड़ा होने लगी। तब वह अपनी प्यारी स्त्रीके पास आया और थककर ऐसे बचन बोला, इस परिश्रमसे मेरे सिरमें पीड़ा होने लगी है, हे सावित्री ! मेरे अङ्ग टूटते हैं ; हे थोड़ा बोलनेवाली ! मैं अपनेको स्वस्थ्य नहीं देखता हूं, मेरे सिरमें शूल बेधनेके समान पीड़ा होती है, हे कल्याणी ! इस कारणसे मैं सोनेकी इच्छा करता हूं, बैठनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। सावित्री अपने पतिके निकट जाके उसके सिरको अपनी जङ्घापर धरके पृथ्वीमें बैठ गई। तब वह तपस्विनी नारदके बचनको स्मरण करती हुई उस मुहूर्त्त और दिनको मिलाने लगी। एक क्षणके पीछे उसने लालवस्त्रवाले सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त एक पुरुषको देखा, काले दांत और लाल नेत्रवाले, हाथमें फांसी लिये सत्यवानके पास बैठे उस पुरुषको देखकर सावित्री धीरे धीरे अपने पतिके सिरको पृथ्वीमें रखके खड़ी हुई और हाथ जोड़के हृदयमें कांपती हुई ऐसा बचन बोली।

सावित्री बोली मैं जानती हूं कि आप देवता हैं क्योंकि ऐसा शरीर मनुष्योंका नहीं होता ; विस्तारपूर्व्वक कहिये कि आप कौन हैं ? और क्या करना चाहते हैं ?

यमराज बोले, हे सावित्री ! तुम पतिव्रता और तपसे भरी हुई हो, इससे मैं तुमसे बोलता हूं ; हे कल्याणि ! तुम मुझे यमराज समझो, इस तुम्हारे पति सत्यवानकी अवस्था पूर्ण होगई ; इससे मैं बान्धकर इसे लेजानेको आया हूं।

सावित्री बोली, हे भगवान ! मैंने सुना है कि मनुष्योंके लेनेको आपके दूत आया करते हैं, तो आप स्वयम् किस कारणसे आये ?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् ! ऐसा सुनकर भगवान पितृराज सावित्रीके प्रसन्नार्थ विस्तारसे अपनी इच्छासे कहने लगे ! यह

धर्म्मवान गुणसागर सत्यवान मेरे दूतोंके लेजाने योग्य नहीं था, इस कारण मैं स्वयम आया हूं। हे राजन्! इसके पश्चात सत्यवानके शरीरसे अंगुष्ठमात्र पुरुषको यमराजने बांधके निकाला। तब सत्यवानका शरीर सांस प्राण और चेष्टा-रहित तथा देखनेमें अप्रिय होगया। यम उसको बांधकर दक्षिणकी ओरको चले। नियम और व्रतोंसे सिद्ध, महाभाग पतिव्रता दुःखसे व्याकुल सावित्रीभी यमके पीछे पीछे चली।

यमराज बोले, हे सावित्री! तुमको जहां तक पतिके सङ्ग जाना चाहिये था, वहांतक तुम आई अपने पतिसे तुम ऋणमुक्त होगई अब तुम लौट जाओ इसको क्रिया करो।

सावित्री बोली जहां मेरे पतिको कोई लेजाय वा आपही मेरा पति जाय, वहीं मुझे भी जाना चाहिये यह सनातन धर्म्म है। तप, गुरुभक्ति पतिस्नेह, व्रत और आपकी कृपासे मेरी गति कहीं नहीं रुक सकती। हे यम! तत्वको जाननेवाले पण्डित सात पग सङ्ग चलनेकी मित्रता मानते हैं, मैं मित्रताको समझके जो कहती हूं, उसे सुनो। अज्ञानी लोग बनमें नहीं रहते; न धर्म्म करते, न गुरु-कुलमें निवास, न परिश्रम कर सकते हैं, विज्ञा-नहीसे उन कर्मोंको मनुष्य करता है। इस लिये धर्म्महो प्रधान है। सज्जन जिसे मानते हों, वह एकही धर्म्म सबके मानने योग्य है दूसरे वा तीसरे धर्म्मकी इच्छा न करे। इस लिये महात्मा लोग धर्म्महीको प्रधान कहते हैं।

यम बोले, हे सावित्री! मैं तुम्हारे स्पष्ट स्वर व्यञ्जनयुक्त वाणीसे प्रसन्न हुआ। इसके जीवनके सिवाय जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो, मैं तुम्हें दूंगा।

सावित्री बोली, हमारे आश्रममें राज्यसे नष्ट अन्धा मेरा ससुर है, वह पुत्रयुक्त बल-वान और राजा हो, यही वर दीजिये।

यम बोले, हे निन्दारहित सावित्री! जो तुमने कहा मैं वही वर देता हूं, जान पड़ता है, कि मार्गकी थकाई तुम्हें आगई इस लिये अधिक श्रम मत करो, लौट जाओ।

सावित्री बोली, हे देवराज! मुझे पतिके सङ्ग थकाई नहीं आती, क्योंकि पतिही मेरा आश्रय है, इस कारणसे जहां मेरे पतिको लिये जाते हो, मैंभी वहीं चलूंगी और मेरे वचन सुनिये। सज्जनोंसे एक बारभी मिलना उत्तम उससे भी सज्जनोंसे मित्रता करना उत्तम है, सज्जनोंका सङ्ग निष्फल नहीं होता, इससे सज्जनोंके समागमहीमें रहना चाहिये।

यमराज बोले, हे भामिनी! तुमने जो वचन कहा, वह मनके अनुसार पण्डितोंकी बुद्धि बढ़ानेवाला और हितकारी है; इस कारणसे सत्यवानको जिलानेके सिवाय जो इच्छा हो सो वर मांगो।

सावित्री बोली, मेरे बुद्धिमान ससुरका पहिले जो राज्य नष्ट हो गया है, उस राज्यको वह फिर प्राप्त हों, और मेरे ससुर धर्म्मका परित्याग न करें, यही दूसरा वर मांगती हूं।

यमराज बोले, हे सावित्री! तुम्हारे ससुर फिर अपने राज्यको पावेंगे, और धर्म्मको कभी नहीं छाड़ेंगे, हे राजपुत्री! अब तुम्हारे कार्य्यको मैंने सिद्ध किया, तुम लौट जाओ।

सावित्री बोली, हे यमराज! आपने प्रजाको नियममें रखा है, आप सबके नियन्ता हैं, सबका कर्म्मका फल देते हैं; इसीसे आपका नाम यम है। आप मेरी वाणीको सुनिये, मन बचन और कायासे किसी प्राणीका द्रोह न करना, सबपर दया करना, दान देना, यह सज्जनोंका सनातन धर्म्म है। इस जगतके मनुष्य शक्तिहीन हैं; महात्मा लोग शत्रुपरभी दया करते हैं!

यमराज बोले, प्यासेको जैसे जल मिले, इस प्रकारसे तुमने यह वाणी कही, इसलिये

सत्यवानको जिलानेके भिन्न जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो।

सावित्री बोली, मेरा पिता राजा होकर भी पुत्रहीन है, उसके सौ पुत्र हों जिससे मेरे पिताका कुल चले यह तीसरा वर मांगती हूं।

यमराज बोले, हे राजपुत्री! तुम्हारे पिताके कुलको बढ़ानेवाले बड़े तेजस्वी सौ पुत्र होंगे, हे कल्याणि! तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ, तुम बहुत दूर आगई हो, लौट जाओ।

सावित्री बोली, तुम सूर्य्यके पुत्र बड़े प्रतापी हो, इससे तुम्हें पण्डित लोग वैवस्वत कहते हैं, प्रजा तुम्हारी आज्ञासे शम दममें रहती हैं, इससे तुम्हारा नाम धर्म्मराज है, मनुष्योंको जैसा विश्वास सज्जनोंमें होता है, वैसा अपनी आत्मामेंभी नहीं होता, इससे महात्मासे सब प्रार्थना करते हैं। महात्मा सब प्राणियोंके मित्र होते हैं, इसीसे विशेष करके सब प्राणी महात्माओंका विश्वास करते हैं।

यमराज बोले, हे कल्याणि! जैसा तुमने बचन कहे ऐसे तुम्हारे सिवाय और किसीसे मैंने नहीं सुने। इससे मैं प्रसन्न हुआ हूं, इसके जीवनेके सिवाय और जो चाहो, सो वर मांगो।

सावित्री बोली, हे देव! मेरे गर्भसे और सत्यवानके वीर्य्यसे हमारे कुलको बढ़ानेवाले बलवान सौपुत्र उत्पन्न हों, यह मैं मांगती हूं।

यमराज बोले, हे स्त्री! तुम्हारे बलवान सौ पुत्र होंगे, तुमको बहुत परिश्रम न हो। इस लिये लौट जाओ, अब बहुत दूर आगई हो!

सावित्री बोली, सज्जनोंकी धर्म्ममें प्रवृत्ति रहती है, सज्जन कभी दुःखी नहीं होते; न पछताते हैं, सज्जनोंका सङ्ग निष्फल नहीं होता, सज्जन अभयदान देके फिर नहीं लौटाते, वे भूत और भविष्यतके आश्रय हैं, साधुजन सत्यसे सूर्य्यको और तपसे पृथ्वीको धारण करते हैं, सज्जन कभी दुःखी नहीं होते। हे यमराज! यह व्रत आर्य्योंसे करने योग्य है, इस सनातन धर्म्मको जानके साधुजन पराया उपकार करते हैं, और दूसरोंसे अपने उपकारकी इच्छा नहीं रखते, सज्जनोंपर जो दया की जाती है, वह नाश नहीं होती, अर्थ और मान भी नष्ट नहीं होता, इस कारणसे महात्माओंमें धर्म्म रहता है, और वह धर्म्मकी रक्षा करते हैं।

यमराज बोले, हे भामिनी! तुम जो जो धर्म्मके अनुसार और मनको प्यारी बातोंको कहती हो, सो सब गम्भीर अर्थोंसे भरी हुई हैं। हे पतिव्रते! तुम्हारी बातोंको सुनकर हमारी भक्ति बढ़ती जाती है, इस लिये तुम विशेष वर मांगो।

सावित्री बोली, हे वरदान देनेवाले! तुमने जो हमको सौ पुत्र होनेका बरदान दिया है, मैं उसीकी सिद्धि चाहती हूं, इस लिये मैं ये वरदान मांगती हूं कि मेरे पति जी जायं क्योंकि मैंभी बिना पतिके मरे हुएके समान हूं, मैं बिना पतिके कोई सुख नहीं भोगना चाहती, मैं बिना पतिके घरमें नहीं जाना चाहती, मैं बिना पतिके धनकी इच्छा नहीं करती, और न बिना पतिके जी सकती हूं। तुमहोने पहले मुझको बरदान दिया है कि तुम्हारे गर्भसे और सत्यवानके वीर्य्यसे सौ पुत्र उत्पन्न होंगे। सो तुमही हमारे पतिको लिये जाते हो, तब उस बरकी सिद्धि कैसे होगी? इस लिये मैं यह वरदान मांगती हूं कि मेरे पति जी जायं, क्योंकि उनके जीनेहीसे आपके बचन सिद्ध होंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! सूर्य्यपुत्र यमराज सावित्रीके वचन सुनकर प्रसन्न हुए, और सत्यवानको फांसीसे छोड़कर कहने लगे, हे भद्रे! हे कुलनन्दिनी! हमने तुम्हारे पतिको छोड़ दिया, ये रोगरहित स्तुति करनेके योग्य और अर्थोंको सिद्ध करनेवाला होगा, इसकी अवस्था चार सौ वर्षकी होगी, ये तुम्हारे

सहित धर्मपूर्व्वक अनेक यज्ञोंको करके लोकमें कीर्त्तिको प्राप्त करेंगी, जो इसके बीर्य्यसे और तुम्हारे गर्भसे सौ पुत्र उत्पन्न होंगे वे सब राजा बलवान पुत्र पौत्रोंसे युक्त जगतमें विख्यात और बहुत समय तक तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध रहेंगे। तुम्हारे पिताके बोर्य्यसे तुम्हारी माताके सौ पुत्र उत्पन्न होंगे,वे सब लोग मालवीसे उत्पन्न होनेसे कारण मालव नामसे प्रसिद्ध होंगे। तुम्हारे सौ भाई देवतोंके समान बलवान तथा पुत्र और पौत्रोंके सहित बहुत दिनतक आनन्द करेंगे। महा प्रतापी यमराज साविलोको ऐसा बर देकर और उसको पीछेको लौटाकर अपने घरको चले गये। जब यमराज चले गये और साविलीने अपने पतिको प्राप्त कर लिया, तब सावित्री पुन: उसी स्थानपर आई जहां उसके मरे हुए पतिका शरीर पड़ा था। वह अपने पतिको मरा हुआ देख, उसके पास गई और उसके सिरको अपनी गोदमें रखकर भूमि पर तैठ गई, उसी समय सत्यवान जागे और साबि-वोसे कहने लगे। उस समय सत्यवान प्रेमसे अपनी स्त्रीको बार बार इस प्रकार देखने लगे, जैसे कोई परदेशसे आकर अपनी स्त्रीको देखता है।

सत्यवान बोले मैं बहुत समय तक सोता रहा; तुमने क्यों नहीं जगाया? वह जो काला पुरुष मुझको खींचता था, सो अब कहां गया?

सावित्री बोली, हे पुरुषसिंह! तुम मेरी गोदमें बहुत देर तक सोते रहे, पुरुषोंको नियममें रखनेवाले भगवान यमराज अपने घरको चले गये। हे राजपुत्र! तुम बहुत थक गये हो। और तुम्हारी निद्राभी खल गई है, यदि तुमको उठनेकी शक्ति हो ता उठो; देखो यह समय आधी रातका है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! उसी समय सत्यवान चैतन्य होकर इस प्रकार उठे, जैसे कोई सुखसे सोकर उठता है। तब सब दिशाओंको और बनको देखकर साबिलीसे बोले, हे पतली कमरवाली! मैं सदा फल खाकर रहता हूं आज तुम्हारे सहित फल लेने बनको आया था परन्तु काठ उखाड़ते समय मेरे सिरमें पीड़ा हुई; उस दु:खसे अत्यन्त पोड़ित होकर खड़ा न हो सका, तब तुम्हारी गोदमें सो रहा मुझको यहां तक सब स्मरण है। हे सुन्दरी! जब मैं तुम्हारी गोदमें सोया, तब मेरा मन निद्राके बशमें होगया; इसके पश्चात् मुझको घोर अन्धकार दिखाई दिया, फिर मैंने एक महातेजस्वी पुरुषको देखा, हे सुन्दरी! यदि तुम इस बृत्तान्तको जानती हो तो मुझसे कहो। क्या मैंने स्वप्न देखा था अथवा ये सब सत्य हैं?

साविली बोली, अधिक बात करनेसे रात बीत जायगी; इस लिये मैं तुमसे यह सब हत्तान्त प्रात:काल कहूंगी। हे उत्तम व्रत-धारी! तुम्हरा कल्याण हो उठो और चल-कर अपने माता पिताको देखो। यह अंधियारी रात है, सूर्य्य अस्त होगया है, ये घोर शब्द करनेवाले राक्षस प्रसन्न होकर घूम रहे हैं, बनमें घूमते हुए हरिनोंके पैरोंमें लगकर पत्तोंका शब्द हो रहा है, ये सियारी दक्षिणको मुंह करके घोर शब्द कर रही हैं, ये कभी कभी पश्चिमको मुंह करके भी घोर शब्द करने लगती हैं, इससे मेरा हृदय कांपा जाता है। सत्यवान बोले, इस बनमें घोर अन्धकार छा गया है; इससे मार्ग नहीं दिखाई देता और तुम चल भी नहीं सकोगी।

साबिती बोली, हे राजपुत्र! इस बनमें आग लग रही है और एक वृक्ष जल रहा है; उससे वायुसे उड़कर कहीं कहीं अग्नि दिखाई देती है। मैं वहांसे अग्नि ले आती हूं और इन लकड़ियोंमें लगाती हूं, तब चांदना होनेसे मार्ग दीखने लगेगा। आप अपने दु:खको दूर कीजिये; यदि आप पीड़ाके

कारण इस समय न चल सकें, और इस अन्धकारसे भरे हुए वनमें मार्गको न देख सकें तो आपकी आज्ञानुसार हम इसरात भर इसही वनमें रहैं, प्रातःकाल जब सूर्य्य उदय होगा तब यहांसे चलेंगे।

सत्यवान बोले, मेरे सिरकी पीड़ा दूर होगई और सब शरीर सावधान है; इस लिये मेरी इच्छा है, कि तुम्हारी प्रसन्नतासे अपने माता पिताका दर्शन करूं। मैं पहिले कभी इतने समय तक आश्रमसे बाहर नहीं रहा। सन्ध्या होतेही मेरी माता मुझे बाहर नहीं निकलने देती हैं, दिनको यदि मै कहीं चला जाता हूं, तो मेरे माता पिता घबड़ाने लगते हैं; निश्चय मेरे पिता आश्रमवासियोंके सहित ढूंढ़ते फिरते होंगे, मेरे मातापिताने बहुत दुःखसे मुझको प्राप्त किया है; उन्होंने उसी समय कहा था, कि तुम शीघ्र आना, मुझे बहुत चिन्ता है, कि आज मेरे लिये उन दोनोंकी क्या दशा हुई होगी। उनको बिना देखे मुझको भी बहुत दुःख होता है। उन दोनों बूढ़ोंने बहुत प्रीतिके सहित चलते समय रोकर मुझसे कहा था, हे पुत्र! हम दोनों तुम्हारे बिना चण भरभी नहीं जी सकते हैं; जबतक तुम नहीं आओगे तब-तक हमारा जीना कठिन हैं; तुम हमारी दृष्टि, वंशके कर्त्ति, पिण्डदाता और कीर्त्तिके बढ़ानेवाले पुत्र हो; मेरे माता और पिता दोनों बूढ़े हैं; मैं उनकी लाठी हूं; इस रात्रिमें मुझको न देखकर उनकी क्या दशा हुई होगी; मैं इस निद्राकी बहुत निन्दा करता हूं; उस अनुपकारिणीके कारणसे मेरे माता पिताको और मुझे इतना दुःख हुआ, मैं इस समय घोर आपत्तिमें पड़ा हूं, क्योंकि बिना माता पिताके देखे, जी नहीं सकता, निश्चय मेरे अन्धे पिता घबड़ा-कर एक एक आश्रमवासीसे मेरा समाचार बूझ रहे होंगे। हे सुन्दरी! मुझे अपना इतना सोच नहीं है, जितना पिता और पतिव्रता माताका है, क्योंकि वे दोनो मेरेही कारणसे घोर दुःखमें पड़े हैं; उनके जीनेसे मैं भी जी सकता हूं, क्योंकि उनकी पालन करना और उनका प्रिय काम करनाही मेरा धर्म्म है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! पिताके प्यारे पिताके भक्त धर्म्मात्मा सत्यवान ऐसा कहकर दुःखसे व्याकुल होकर और अपने हाथोंको फैलाकर ऊंचे स्वरसे रोने लगे; धर्म्म करनेवाली सावित्री अपने पतिको शोकसे व्याकुल देखकर और उनकी आंसुओंको अपने हाथसे पोंछकर कहने लगी, कि यदि मैंने कुछ तप किया हो, यदि मैने अग्निमें कुछ आहुति दी हो, तो उस पुण्यसे मेरे ससुर और सासको यह रात्रि सुखसे बीते, मुझे स्मरण नहीं है कि मैंने कभी खेलनेमेंभी झूठ बोला हो। वही शक्ति मेरे सास और ससुरकी रक्षा करे।

सत्यवान बोले, हे सावित्री! मैं अपने माता पिताके दर्शन करना चाहता हूं; इस लिये तुम शीघ्र चलो विलम्ब मत करो। हे सुन्दरमुखी! मैं अपने आत्माकी शपथ करके सत्य कहता हूं, कि यदि मेरे मातापिताको कुछ भी अनिष्ट हुआ होगा, तो मैं नहीं जीऊंगा, यदि तेरी बुद्धि धर्म्ममें हो, यदि तुम मुझे जिलाना चाहती हो, और मेरा प्रिय कार्य्य करनेकी तुम्हारी इच्छा है, तो शीघ्र आश्रमको चलो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! अपने पतिके ऐसे वचन सुन सुन्दरी सावित्रीने उठ-कर अपने बालोंको बांधा, तब हाथ पकड़-कर अपने पतिको उठाया; सत्यवानने उठकर अपने शरीरको हाथसे पोंछा, फिर सब दिशाओंको देखकर फलकी टोकरीको देखने लगे, तब सावित्री बोली, कि इन

फलोंको आप प्रातःकाल ले जाइयेगा, आपके कल्याणके निमित्त मैं कुल्हाड़ी ले चलती हूं, फिर सावित्रीने उस फलके टोकरेको एक वृक्षमें बांध दिया, और कुल्हाड़ी उठाकर अपने पतिके पास आई। गजगामिनी सुन्दरी सावित्री दाहिने कन्धेपर अपने पतिका हाथ रखकर और बांये कन्धेपर कुल्हाड़ी रखकर चली।

सत्यवान बोले, हे सुन्दरी! आश्रमके समीप आनेसे मैं सब मार्गोंको जान गया, और वृक्षोंके बीचमें बिजली चमकनेसे भी सब मार्ग दीखने लगे। हे सुन्दरी! अब हम उसी स्थानमें आगये जहांसे फल तोड़े थे, अब मार्गका कुछ विचार न करो, सुखसे चली चलो। आगे ढांककी वनमें दो मार्ग आवेंगे, उसमेंसे उत्तरकी ओर-वाला जो मार्ग है, उसीसे तुम शीघ्र चलना; मैं बहुत सावधान और बलवान होगया हूं। अब मेरी इच्छा माता पिताके देखनेकी है, सावित्री और सत्यवान इस प्रकार बात करते हुए आश्रमकी ओरको चले।

२९६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! उसही समय महाबलवान राजा द्युमत्सेनकी दृष्टि ठीक होगई, और वे प्रसन्न होकर जगतकी सब वस्तुवोंको देखने लगे। तब वे अपनी शैब्या स्त्रीके सहित सब आश्रममें अपने पुत्रको ढूंढ़ने लगे, परन्तु उसे न पाकर बहुत दुःखी हुए। तब वे दोनों स्त्री पुरुष रात्रिहीमें आश्रम, वन नदी और तलावोंमें अपने पुत्रको ढूंढ़ने लगे, किसीका शब्द सुनकर अपने पुत्रकी शङ्काकर उधरहीको देखने लगते थे, और कहने लगते थे कि वह सावित्रीके सहित सत्यवान चला आता है, इस प्रकार घूमनेसे उन दोनोंके पैरोंमें घाव हो गये, और रुधिर बहने लगा, उनके शरीर कुशके कांटोंके लगनेसे छिद गये, तब वे उन्मत्तके समान इधर उधर घूमने लगे, अनन्तर आश्रमके रहनेवाले ब्राह्मण उनके पास गये और उनको समझाकर आश्रममें ले आये, तपोधन वृद्ध ब्राह्मणोंने स्त्री सहित राजा द्युमत्सेनसे पुराने राजोंकी कथा कहीं। उनको सुनकर वे दोनों वूढ़े स्थिर हुए, और अपने पुत्रके बाल चरित्रोंको स्मरण करके बहुत दुखसे उसका मार्ग देखने लगे; फिर वे दोनों वूढ़े बहुत दुःखसे व्याकुल होकर हा पुत्र! हा पतिव्रता बहू! तुम दोनों कहां हो! ऐसा कहकर रोने लगे, तब सत्यवादी सुवर्चा नामक ब्राह्मण कहने लगे।

सुवर्चा बोले, सावित्री तप सत्य और आचारसे भरी है, इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

गौतम मुनि बोले, मैंने अङ्गोंके सहित वेदोंको पढ़ा है, मैंने बहुत तप और बाल्यावस्थासे ब्रह्मचर्य्य साधन किया है, मैंने सावधान होकर समस्त व्रतोंको किया है, और विधिके सहित वायु भक्षण तथा उपवासभी किये हैं, उसही तपके बलसे सबके कर्मोंको जानता हूं, मैं सत्य कहता हूं, कि सत्यवान बहुत सुखी है।

शिष्य बोला, हमारे गुरुजीके मुखसे जो कुछ वचन निकला है, सो कभी मिथ्या नहीं होगा, इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

ऋषिलोग बोले, हमें खूब निश्चय है कि सावित्रीके शरीरमें विधवा होनेका कोई लक्षण नहीं है; इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

श्रीभरद्वाज मुनि बोले, सत्यवानकी स्त्री सावित्री तप, सत्य और शुद्धाचारसे भरी है, इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीदालभ्य मुनि बोले, हमने अपनी दृष्टिसे

सावित्रीके व्रतोंको देखा है, उसने निरन्तर कई उपवास किये हैं; इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीआपस्तम्ब मुनि बोले, देखो यह शान्ति दिशामें पक्षी और हरिण बोल रहे हैं, इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

श्रीधौम्य मुनि बोले, तुम्हारा पुत्र सुलक्षणों से युक्त सब जगतका प्रिय और दीर्घआयु है; इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! जब सत्यवादी तपस्वी महात्माओंके ऐसे बचन सुने और उन सबका विचार करके राजा द्युमत्सेन कुछ शान्त हुए उसही समय सावित्री भी प्रसन्न होती हुई अपने पति सत्यवानके सहित आश्रममें आ पहुंची।

ब्राह्मण लोग बोले, हे पृथ्वीनाथ! हम-लोग पुत्र और दृष्टि सहित आपको देखकर बहुत प्रसन्न हुए हम लोग आपकी वृद्धि चाहते हैं। प्रारब्धहीसे सावित्री और सत्यवान मिले हैं और आपके नेत्र ठीक हुए हैं, तीनोंको पाकर आप प्रारब्धहीसे वृद्धि लाभ करेंगे। हम सब लोगोंने जो पहिले कहा था; उसमें कुछ भी सन्देह नहीं है अब शीघ्रही आपकी उन्नति होगी उसी समय फिर ब्राह्मणोंने अग्नि जलाई और राजाके समीप बैठ कर अग्निहोत्र करने लगे। उसी समय एक ओर सावित्री बैठ गई। तब उन सबने ब्राह्मणोंकी आज्ञासे शोकको दूर किया, तब ऋषियोंने राजाकेसमीप बैठकर कौतूहलके सहित राज पुत्र सत्यवानसे पूंछा। ऋषि लोग बोले, हे राजपुत्र! तुम अपनी स्त्रीके सहित पहिलेसे क्यों नहीं आये? तुमने इतनी अधिकरात्रि क्यों कर दी? वहां ऐसा विशेष कार्य्य क्या होगया था? तुम्हारे न आनेसे तुम्हारे माता पिताको बहुत दुःख हुआ, हमलोग इसके कारणको नहीं जानते; तुम हमसे कहो।

सत्यवान बोले, मैं अपने पिताकी आज्ञा लेकर सावित्रीके सहित बनको गया। वहां काठ उखाड़ते समय मेरे शिरमें पीड़ा हुई। मैं वहां सो गया और बहुत समय तक न जागा, जैसा मैं आज सोया वैसे पहिले कभी नहीं सोया था, इसलिये आप कुछ दुःख न कीजिये, इसी लिये मुझे इतनी रात्रि होगई इसके सिवाय और कोई कारण नहीं है।

गौतम मुनि बोले, अकस्मात तुम्हारे पिताके नेत्र खुल गये, इसका कारण तुम नहीं जानते सावित्री कहेंगी। हे सावित्री! तुम आदि अन्तको जानती हो हम तुमको तेजमें गायत्रीके समान जानते हैं यदि इसमें कोई गुप्त बात न हो तो तुम हमसे वर्णन करो, क्योंकि तुम इसके सब कारणोंको जानती हो।

सावित्री बोली, हे ब्रह्मन्! आपने जो कहा सो सब सत्य है। आप लोगोंका सङ्कल्प झूंठा नहीं है और इसमें कोई गुप्त बात भी नहीं है; मैं सब सत्य सत्य कह देती हूं। मुझसे महात्मा नारदने मेरे पिताके घरमें कहा था, कि तुम्हारे पतिकी मृत्यु होजायगी, सो दिन आजही था, इस लिये मैंने इनका संग नहीं छोड़ा। जब यह बनमें सो गये, तब साक्षात यमराज अपने दूतोंके सहित इनके पास आये, और इनको फांसीमें बांधके दक्षिणकी ओर ले चले, उसी समय मैंने सत्य बचनसे जगतके स्वामी भगवान यमराजकी स्तुति करी, तब उन्होंने मुझको पांच वरदान दिये मेरे ससुरको राज्य और नेत्र प्राप्त हों मैंने ये दो बर दान ससुरके लिये मांगे। अपने पिताके सौ पुत्र, अपने सौ पुत्र, ये दो बर—प्राप्त किये। पांचवां बर मैंने अपने पतिके लिये मांगा, जिससे सत्यवानकी चार सौ बर्षकी अवस्था हुई। मैंने अपने पतिके जिलानेके लियेही यह व्रत किया था। मैंने सब कारण विस्तार पूर्व्वक आप लोगोंसे

कहा। आज मैं बहुत प्रसन्न हुई, मेरा सब दुःख नष्ट होगया।

ऋषिलोग बोले, हे सुन्दरी! तुमने राजा द्युमत्सेनके कुलको घोर दुःखके तलावमें डूबनेसे बचा लिया; वह तलाव घोर अन्धकार और दुःखोंसे भरा था। हे सुशीले! तुम बहुत कुलीन पतिव्रता और साध्वी हो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकार सब मुनियोंने पतिव्रता सावित्रीकी प्रशंसा करी फिर वे सब लोग राजा द्युमत्सेन और सत्यवानकी सम्मतिसे प्रसन्न होकर अपने अपने घरको चले गये।

२९७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! जब वह रात्रि व्यतीत होगई और सूर्य्य उदय हुए तब सब मुनि लोग राजा द्युमत्सेनके पास आये, वे सब महर्षि लोग सावित्रीकी कथा कहते कहते तृप्त नहीं होते थे; इस लिये बार बार कहते जाते थे। हे राजन्! उसी समय शाल्व देशसे राजा द्युमत्सेनके मन्त्री आये; और उनमेंसे प्रधान मन्त्री राजा द्युमत्सेनसे कहने लगा, कि हमने आपके शत्रुवोंको मार डाला। राजा द्युमत्सेनने जब सुना, कि हमारा शत्रु बन्धुबान्धव और सेनाके सहित नाश होगया, और हमारे सब मन्त्री लोग एक मत होकर हमको राज्य देना चाहते हैं, वे लोग कहते हैं कि राजा द्युमत्सेन चाहे अन्धे हों चाहे नेत्रवान हों, हम उनहींको राजा बनावेंगे ऐसाही निश्चय करके ये लोग यहां आये हैं, तब राजा द्युमत्सेन बहुत प्रसन्न हुए। तब एक मन्त्री कहने लगा, हे महाराज! यह आपकी चतुरङ्गिणी सेना उपस्थित हैं, आपका कल्याण हो। नगरमें आपकी विजय हुई है; अब चलकर बहुत दिनतक अपने पिता पितामहका राज्य कीजिये। जब मन्त्रियोंने राजाको नेत्रवान और तेजवान देखा, तब सब लोगोंने प्रसन्न होकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया। तब राजा द्युमत्सेनने बहुत प्रसन्न होकर आश्रममें रहनेवाले बूढ़े ब्राह्मणोंको प्रणाम किया। अनन्तर अपने मन्त्रियोंके सहित नगरको चले गये, अनन्तर शैव्या महा तेजस्विनी सावित्रीके सहित एक पालकीमें बैठकर सेनाके सहित चलीं, नगरमें पहुंचनेके पश्चात पुरोहितोंने राजा द्युमत्सेनका अभिषेक किया और महात्मा सत्यवानको युवराज बनाया, बहुत समय बीतनेके पश्चात सावित्रीके सौ पुत्र उत्पन्न हुए। वे सब महा बलवान और युद्ध करनेवाले थे, इसी प्रकार सावित्रीके पिताके भी सौ पुत्र उत्पन्न हुए। इस प्रकार सावित्रीने पिता, माता, सास, ससुर, पति अपने और कुलको दुःखसे उद्धार किया। इसही प्रकार शीलवती कल्याणी द्रौपदी भी सावित्रीके समान आप लोगोंके कुलका उद्धार करेंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! मार्कण्डेय मुनिके ऐसे वचन सुन पाण्डुपुत्र महात्मा युधिष्ठिर शोक और दुःखसे रहित होकर काम्यक बनमें रहने लगे, जो पुरुष इस सावित्रीकी कथाको सुनता है, वह सदा सुखी रहता है और उसके सब प्रयोजनभी सिद्ध होजाते हैं।

२९८ अध्याय समाप्त।

पतिव्रता महात्म्यपर्व्व समाप्त।

अथ कुण्डलाहरण पर्व्व।

राजा जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन! इन्द्रकी आज्ञानुसार लोमश मुनिने जो राजा युधिष्ठिरसे आकर कहा था, कि जिस घोर भयको तुम किसीसे नहीं कहते हो, अर्जुनके यहां आनसे हम उसका नाश करेंगे, हे महा तपस्विन्! क्या वह घोर भय कर्णहीसे था? क्या धर्मात्मा

युधिष्ठिरने यह समाचार किसीसे नहीं कहा था?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजशार्दूल! हम तुमसे इस कथाको कहते हैं, तुम हमारे वचनका विश्वास करो। जब पाण्डवोंको बनमें रहते रहते बारह वर्ष बीत गये, और तेरहवां वर्ष आरम्भ हुआ तब पाण्डवोंके हित करनेवाले इन्द्रने कर्णसे भिक्षा मांगनेका विचार किया, हे महाराज! जब सूर्य्यने जाना कि इन्द्र कर्णके पास कुण्डल लेनेको आवेंगे, तब वे कर्णके पास गये, उस समय कर्ण महामूल्य पलङ्गपर उत्तम बिछौना बिछाये सो रहे थे, जब महात्मा, सत्यवादी, ब्राह्मण-भक्त कर्ण सोते थे, उसी समय सूर्य्यने अपना पुत्र जानकर कर्णपर बड़ी कृपा करी, सूर्य्यने परम सुन्दर वेदपाठी ब्राह्मणका रूप बनाया, और कर्णका कल्याण करनेके लिये ऐसा कहा, हे कर्ण! हे तात! हे सत्यवादियोंमें श्रेष्ठ! हे महाबाहो! तुम हमारे हितके वचनोंको सुनो, हम तुम्हारे प्रेमसे कहते हैं, तुम्हारे पास पाण्डवोंका कल्याण करनेके लिये इन्द्र आवेंगे, वे ब्राह्मणका रूप बनाकर तुमसे कुण्डल मांगेंगे, उन्होंने तुम्हारे और जगतके स्वभावको जान लिया है, वे अच्छी प्रकारसे जानते हैं, कि तुम मांगनेवालेको सब कुछ देते हो, और किसीसे कुछ मांगते नहीं हो, हे तात! तुम्हारा यह स्वभाव है, कि जो ब्राह्मण धनादि कुछ वस्तुको मांगता है, तुम उसे मना नहीं करते, तुम्हारा यह स्वभाव जानकर इन्द्र आपही कुण्डल और कवच मांगनेको तुम्हारे पास आवेंगे, तुम उनको कुण्डल मत देना और शक्तिके अनुसार उनको प्रसन्न कर लेना, इसीमें तुम्हारा परम कल्याण होगा, हे तात! जब वह तुमसे कुण्डल मांगें तब तुम और धन देकर उसको निवारण करना; स्त्री, गऊ, अनेक प्रकारके रत्न और अनेक प्रकारके धन देना; परन्तु इन्द्र तुमसे कुण्डलही मांगेंगे। हे कर्ण! यदि तुम सङ्ग उत्पन्न हुए सुन्दर कुण्डलोंको दे दोगे, तब तुम्हारी आयु नष्ट हो जायगी और तुम मर जाओगे, तुम हमारे वचनोंको निश्चय मानो, कि जबतक तुम्हारे शरीरमें कवच और कुण्डल हैं, तबहीतक तुमको कोई शत्रु युद्धमें नहीं मार सकता है। हे कर्ण! ये रत्नरूपी कवच और कुण्डल अमृतसे उत्पन्न हुए हैं। तुमको अपना जीवन प्रिय है, तो इनको रक्षा करो।

कर्ण बोले, हे भगवन्! आपके समान हमारा कल्याण करनेवाला कौन होगा? आपने हमारे हितके वचन कहे, अब आप हमसे कहिये, कि ब्राह्मण वेषधारी आप कौन हैं।

ब्राह्मण बोले, हे तात! मैं सूर्य्य हूं, और प्रेमके वशमें होकर तुम्हारे पास आया हूं, और तुमसे यह सब कह दिया है, तुम हमारे वचनोंको करोगे, तो तुम्हारा कल्याण होगा।

कर्ण बोले, जिसके साक्षात सूर्य्य स्वामी हैं, ऐसे कर्णका सदा कल्याण ही है, आप हमारे वचनोंको सुनिये। आपने हमारे हितके लिये यह सब कहा, परन्तु हम आपकी स्तुति करते हैं, और हम आपको प्रणाम करके विनय करते हैं, कि यदि आप हमसे प्रेम करते हैं, तो हमको इस व्रतसे निवारण न कीजिये, हे सूर्य्य! हमारे इस व्रतको सब जानता है, मेरा यह प्रण है, कि मैं ब्राह्मणोंको अपने प्राणभी दे दूंगा, हे आकाशगामियोंमें श्रेष्ठ! यदि पाण्डवोंका कल्याण करनेके लिये ब्राह्मणका वेष बनाकर इन्द्र मेरे पास भिक्षा मांगनेको आवेंगे, तो मैं कुण्डल और उत्तम कवचको देदूंगा, हे देवश्रेष्ठ! मेरी यह इच्छा है, कि मेरे यशका नाश न हो। मेरे समान पुरुषको उचित है कि प्राणोंकी रक्षा न करके यशकी रक्षा करे, क्योंकि यशके सहित मरण

उत्तम है, यदि बलि और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र मेरे पास भिक्षा मांगनेको आवेंगे; तो मैं कवच और कुण्डल दे दूंगा, यदि पाण्डवोंके कल्याणके निमित्त इन्द्र मुझसे कवच और कुण्डल मांगनेको आवें तो मेरी बहुत कीर्त्ति बढ़ेगी। हे सूर्य्य! मैं अपना शरीर देकरभी कीर्त्तिकी रक्षा चाहता हूं, क्योंकि कीर्त्तिवानको स्वर्ग मिलता है और कीर्त्तिहीनका नाश हो जाता है। कीर्त्ति माताके समान पुरुषकी रक्षा करती है, अपकीर्त्ति जीते हुए पुरुषका भी नाश कर देती है. हे सूर्य्य! इस पुराने श्लोकमें साक्षात ब्रह्माने कीर्त्तिको पुरुषकी आयु बताया है, इस लोकमेंभी कीर्त्ति आयुको बढ़ाती है, सो अब मैं अपने सङ्ग उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलको देकर अनन्त कीर्त्तिको प्राप्त करूंगा, ब्राह्मणोंको विधिपूर्व्वक दान देकर घोर कर्म्म करके युद्धमें अपने शरीरको छोड़ूंगा; मैं सब शत्रुवोंको जीतकर अपने यशको रक्षा करूंगा, जो लोग युद्धमें जीवदान मांगेंगे उन्हें अभय दूंगा, बूढ़े बालक और ब्राह्मणोंको महा भयसे छुड़ाकर इस लोकमें यश और परलोकमें सुख प्राप्त करूंगा, मैं अपना जीव देकर भी यशको रक्षा करूंगा, यही मेरा प्रण है, अब मैं ब्राह्मण वेषधारी इन्द्रको कवच और कुण्डल देकर यशको प्राप्त करूंगा!

२९९ अध्याय समाप्त।

सूर्य्य बोले, हे कर्ण! तुम अपना, मित्रोंका पुत्रोंका, माताका, स्त्री और पिताका अहित कर्म्म मत करो, हे शरीरधारियोंमें श्रेष्ठ! पुरुषका उचित है कि जो कर्म्म शरीरके अनुकूल हो उसीको करे, क्योंकि शरीर रहनेसे इस लोक और परलोकमें यश स्थिर होता है, तुम अपना शरीर देकर जो कीर्त्तिकी इच्छा करते हो; इससे निःसन्देह तुम्हारा शरीर नाश हो जायगा, जीवतेके लिये, पिता, माता, पुत्र आदि सब बान्धव लोग कार्य्यको करते हैं, हे पुरुषसिंह! हे महातेजस्वी! राजा लोग भी पौरुष करके कीर्त्तिका लाभ करते हैं, परन्तु कीर्त्ति जीतेहीमें कार्य्य सिद्ध कर सकती है, और मरनेके पश्चात शरीर जल गया, तब कीर्त्ति किस काम आवेगी मरा हुआ, मनुष्य कीर्त्तिको देखने नहीं आता, जीता कीर्त्तिको भोगता है, मरे हुए की कीर्त्ति ऐसीही है कि जैसे मरे हुएको माला पहिनानी, हम तुमको भक्त जानकर ये सब हितकी बात कहते हैं, क्योंकि भक्तोंकी रक्षा करना हमारा काम है, हे महाभुज! हम तुमको अपना परम भक्त मानते हैं, तुमको भक्त देखकर हमकोभी भक्ति उत्पन्न हुई है, इससे तुम हमारे बचनोंको ग्रहण करो, इसमें कुछ देवतोंकी बनाई हुई गुप्त बातभी है, इसी लिये हम तुमसे कहते हैं कि हमारे बचनोंमें शङ्का मत करो, तुम देवतोंको नहीं जान सकते हो। इससे यह पूरी बात हम तुमको नहीं सुनाते हैं, तुम समयपर आप जान लोगे, हे राधापुत्र! हम तुमसे बार बार यही बात कहते हैं कि, तुम इन्द्रको अपने कुण्डल मत देना, हे महातेजस्वी! इन दोनों कुण्डलोंसे तुम्हारी ऐसी शोभा होती है, जैसे विशाखाके बीचमें आकाशमें उदय हुए चन्द्रमाकी, तुम इस बातका निश्चय जानो कि जीते हुए पुरुषका कीर्त्ति सहायक है, इस लिये इन्द्र जब तुमसे कुण्डल लेनेको आवें, तब मना कर देना, हे पापरहित! जब देवराज इन्द्र तुम्हारे पास कुण्डल मांगनेको आवें तब तुम अनेक प्रकारकी बात करके, उनको कुण्डल न देना तुम देवराजको, इच्छाको बार बार निवारण करना, तुम मीठे हेतुके सहित मनोहर वचनोंसे इन्द्रको बुद्धिको अपने वशमें कर लेना, हे पुरुषसिंह!

तुम सदाही अर्ज्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा रखते हो। वही वीर अर्ज्जुन तुमसे युद्ध करनेको आवेंगे, यदि साक्षात इन्द्रभी अर्ज्जुनके मित्र हों तो भी कुण्डलोंके सहित तुमको नहीं मार सकते हैं, हे कर्ण! यदि तुम अर्ज्जुनके जीतनेकी इच्छा करते हो, तो ये सुन्दर कुण्डल इन्द्रको मत देना।

३०० अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, हे सूर्य्य! मैं आपका भक्त हूं, परन्तु आप मुझको जानते हैं कि जगतमें कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जिसको मैं न दान करूं, हे सूर्य्य मुझको जैसा आप प्रिय हैं, तैसे स्त्री पुत्र मित्र और अपना शरीरभी नहीं है, जगतकी यह रीति है कि महात्मा लोग अपने भक्तोंके ऊपर कृपा और उनका कार्य्य सिद्ध करतेही हैं, हे सूर्य्य! आप निःसन्देह इन सब बातोंको जानतेही हैं कि कर्ण मेरा प्यारा भक्त है. वह कभी किसी दूसरे देवताकी उपासना नहीं करता, इस लिये तुमने यह सब हमसे कहा है, अब हम आपके चरणोंमें सिरसे प्रणाम करते हैं, और बार बार यही बरदान मांगते हैं कि आप हमारे इन सब अपराधोंको क्षमा कीजिये, हम इतना मृत्युसे नहीं डरते, जितना झूठसे विशेषकर हम पण्डित ब्राह्मणोंसे अधिक डरते हैं, मैं अपना जीव देनेमें भी कुछ विचार नहीं करता, तुमने जो हमसे अर्ज्जुनको बात कही, सो उसके लिये कुछ आप अपने मनमें दुःख न कीजिये, मैं अर्ज्जुनको युद्धमें जीत लूंगा। हे देव! तुम हमारे अशस्त्र बलको जानते हो। हमने परशुराम और महात्मा द्रोणाचार्य्य जीसे अशस्त्र विद्या सीखी है, हे देव श्रेष्ठ! आप हमारे इस व्रतको जानतेही हैं, इस लिये यदि इन्द्र हमारा शरीरभी मागेंगे तो हम दे देंगे।

सूर्य्य बोले, हे तात! यदि तुम इन्द्रको अपने सुन्दर कुण्डल दो, तो उनसे अपने विजयके लिये बरदान मांग लेना, तुम उनसे कहना कि हे इन्द्र! तुम हमसे नियम कर लो तो हम कुण्डल दें हे कर्ण! तुम इन कुण्डलोंके सहित सब प्राणियोंसे अवध्य हो, परन्तु दानवनाशन इन्द्र तुमसे कहेंगे कि, अर्ज्जुन तुमको मारेंगे, ऐसा कहकर वे तुमसे कुण्डल ले लेंगे, तब तुम बार बार अच्छी बातें कहकर, प्रसन्न करना, इस प्रकार तुम देवराज इन्द्रकी आराधना करना तब तुम्हारा कल्याण होगा, जब इन्द्र प्रसन्न हों, तब उनसे कहना कि आप हमको शत्रुओंके नाश करनेवाली अमोघशक्ति दीजिये, हे सहस्राक्ष! तब हम आपको अपने उत्तम कुण्डल और कवच देंगे, हे कर्ण! जब इन्द्र इस विषमको मान लें तब तुम अपने कवच और कुण्डल देना, हे कर्ण! उस शक्तिसे युद्धमें तुम अपने शत्रुओंका नाश करोगे, हे महाबाहो! वह, इन्द्रकी शक्ति सैकड़ों सहस्रों शत्रुओंको मारे विना पुनः हाथमें नहीं आती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सूर्य्य कर्णसे ऐसा कहकर वहीं अन्तर्द्धान हो गये, तब कर्णने सन्ध्या करनेके पश्चात अपने देखे हुए, स्वप्नकी और रातकी बातोंको सूर्य्यसे कह दिया, इस सब समाचारको सुनकर राहुके जीतनेवाले भगवान सूर्य्यने हंसकर कहा कि यह सब सत्य है, शत्रुनाशन राधापुत्र कर्ण इस सबको सत्य जानकर शक्तिको इच्छा कर इन्द्रका मार्ग देखने लगे।

३०१ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे तपोधन! वह कौनसी गुप्त बात थी जो सूर्य्यने कर्णसे नहीं कही? कर्णके कवच और कुण्डल कैसे थे, और कहांसे उत्पन्न हुए थे; हम सब कथाको सुनना चाहते हैं, आप कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय!

हम आपसे सूर्यकी गुप्त बात तथा कर्णके कवच और कुण्डलोंका वर्णन करते हैं, हे राजन्! पहिले समयमें राजा कुन्तिभोजके पास एक ब्राह्मण गया, वह महा तेजस्वी सुन्दर लम्बा जटामूछ और दण्डको धारण किये, सुन्दर नवीन शरीरवाला तेजसे प्रकाशित होता हुआ, आगौर वर्ण और मीठे वचनवाला वेद-पाठी था, वह महा तपस्वी ब्राह्मण राजा कुन्तिभोजसे कहने लगा, हे छलरहित! यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम तुमसे एक भिक्षा-मांगें, तुम अपने दासोंके सहित हमारे वच-नोंको स्वीकार करो, हेपापरहित! यदि तुम हमारे वचनोंको स्वीकार करो तो हम तुम्हारे घरमें रहैं, हम अपनी इच्छानुसार बाहर जायंगे और इच्छानुसार आवेंगे हे राजन्! मेरी शय्या ओर आसनपर कोई बैठने न पावे, तब राजा कुन्तिभोजने प्रसन्न होकर ब्राह्मणसे कहा आप जैसा कहते हैं वैसाही होगा, मेरी पृथा नामक यशस्विनी कन्या है, वह बड़ी शीलवती धर्म्मचारिणी सती और साध्वी है, वह आपकी पूजा और सत्कार करेगी, आप उसके शीलको देखकर प्रसन्न हूजियेगा, ऐसा कहकर राजाने उस ब्राह्मणकी पूजा करी, तब विशालनैनी कुन्तीको बुलाकर कहने लगे, हे पुत्री! यह महाभाग ब्राह्मण हमारे घरमें रहनेकी इच्छा करते हैं मैंनेभी इनको यहां रखनेकी प्रतिज्ञा किया है, हे पुत्री तुम इस ब्राह्मणकी सेवा करो, तुम हमारे बचनको सदाही सत्य करना, यह तपस्वी ब्राह्मण सदा वेद पठन करता है, यह तेजस्वी ब्राह्मण जो तुमसे मांगे सो देना कभी छल मत करना, ब्राह्मणही परम तेज है ब्राह्मणही परम तप है ब्राह्मणोंके नमस्कार करनेहीसे आकाशमें सूर्य्य तपता है, वातापी नामक दानवने ब्राह्म-णका सम्मान नहीं किया था इसीसे उसका नाश होगया और तालजङ्घका भी इसीसे नाश हुआ है हे पुत्री! हम इस महा भारको तुम्हारे सिर देते हैं; तुम सावधान होकर इस ब्राह्मणकी सदा सेवा करना हे नन्दिनी! हम तुम्हारे स्वभावको बालकपनसे जान्ते हैं तुम ब्राह्मण गुरु और बन्धुओंको समानही जानती हो तथा सेवक सम्बन्धी और मित्रमें भी सदासे तुम्हारी समान प्रीति है, तुम मुझे और अपनी माताको जैसा मानती हो वैसाही सबको मानना होगा; रनवासमें और नगरमें तुमसे असन्तुष्ट कोई नहीं है, हे सुन्दरी! तुम्हारी सेवकोंमें भी समान प्रीति है, मैं तुमको आज्ञा देकर कहता हूं कि, हे बाले हे पृथे! तुम उत्तम वृष्णि वंशमें उत्पन्न हुई हो, और वीरपुत्री हो, मैं तुमसे बहुत प्रेम भी करता हूं तुम्हारे पिताने प्रसन्न होकर तुम्हे मुझे दे दो थी तुम वसुदेवको बहिन हो, और मेरी सब पुत्रि-योंमें श्रेष्ठ हो, मैंने तुम्हारे पितासे पहिले ऐसोही प्रतिज्ञा को थी, इससे तुम मेरी पुत्री हो, तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न औरपालित हुई हो, निरन्तर सुखहीमें रही हो, हे सुन्दरी! प्रायः स्त्रीलीग बाला भावसे दुष्टता कर बैठती हैं, परन्तु वे दुष्ट कुलमें उत्पन्न हुई और बन्धन रहित होती हैं, हे पृथे! तुम राजकुलमें उत्पन्न हुई हो और रूपभी तुम्हारा अद्भुत है, इससे तुम्हारे समान और कोई स्त्री चतुर नही है, इसलिये तुम अभि-मान नहीं करो और छलको छोड़कर बरदान देनेवाले ब्राह्मणकी सेवा करो, हे कल्याणी! ऐसा करनेसे निश्चय तुम्हारा कल्याण होगा, यदि ब्राह्मण क्रुद्ध होगा तो वह तेरे सब बंशको भस्म कर देगा।

३०२ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली हे राजन्! मैं सावधान होकर ब्राह्मणकी सेवा करूंगी आपकी प्रतिज्ञाको कभी झूंठी नहीं करूंगी, हे राजेन्द्र! मैं सत्य

कहती हूं कि ब्राह्मणोंकी पूजा करना मेरा स्वभावही है तिसमें भी आपका प्रिय कार्य्य करनेसेही मेरा कल्याण होगा। चाहे वो ब्राह्मण दिनमें आवे चाहे रात्रिमें आवे चाहे सध्यामें आवे अथवा आ आधो रात्रिहीको क्यों न आवें परन्तु मैं ऐसी सेवा करूंगी कि उन्हें कभी क्रोध न होगा, हे राजेन्द्र! मुझको ब्राह्मणकी सेवा करनेसे बहुत लाभ होगा, हे नरोत्तम! आपकी आज्ञामें रहनेसे मेरा बहुत हित होगा। हे राजेन्द्र! आप साव-धान हूजिये, मैं बिना अपराधके ब्राह्मणकी सेवा करूंगी, मैं सत्य कहती हूं कि हमारे घरमें रहनेसे ब्राह्मणको कुछ दुःख नहीं होगा। हे पापरहित! जिससे ब्राह्मण प्रसन्न हो और जिसमें आपका लाभ हो, मैं वैसाही यत्न करूंगी आप अपने मनके दुःखको दूर कीजिये, हे पृथ्वीनाथ! महाभाग ब्राह्मण लोग पूजा करनेसे तार सकते हैं और क्रोध करके नाश कर सकते हैं, मैं इन सब बातोंको बिचार कर ब्राह्मण श्रेष्ठ तपस्वीकी सेवा करूंगी, आपको मेरे कारणसे कुछ दुःख नहीं होगा, हे राजेन्द्र! दूसरोंके अपराधसे भी ब्राह्मण लोग राजका नाश कर देते हैं, जैसे च्यवन मुनिने सुकन्याके अपराधसे राजा शर्य्यातीको शाप दिया था, मैं परम यत्न करके नियम पूर्व्वक ब्राह्मणकी सेवा करूंगी, हे नरेन्द्र! जैसे तुमने कहा यह सब काम वैसाही होगा। कुन्तीके इस प्रकारके बचन सुन, राजाने उसको अपने हृदयमें लगाया, और उसको सब कार्य्य समझा दिया।

राजा बोले, हे भद्रे! तुम इन सब कार्य्यों-की शङ्का रहित होकर करना, हे अनिन्दिते! इसमें तुम्हारा मेरा और कुलका कल्याण होगा, महा यशस्वी राजा कुन्तिभोजने यह कह कन्या ब्राह्मणको दे दी, फिर ब्राह्मणभक्त राजाने ब्राह्मणसे कहा, हे ब्राह्मण! यह मेरी कन्या जन्मसे सुखमें रही है, और अभी इसकी अवस्था बहुत कम है, यदि आपका कोई अप-राध करे तो क्षमा कीजियेगा, महाभाग ब्राह्मण लोग बूढ़े बालक और तपस्वियोंपर अपराध करनेसे भी क्रोध नहीं किया करते। हे द्विजो-त्तम! ब्राह्मणोंको चाहिये कि चाहे कोई कैसाही अपराध करे उस पर शान्ति रक्खें और उत्साह तथा शक्तिके अनुसार पूजा ग्रहण करें, जब ब्राह्मणने कहा बहुत अच्छा, तब राजाने प्रसन्न होकर चन्द्रमाकी किरणोंके समान शुक्ल घर ब्राह्मणको दिया, उस स्थानमें शयन करनेका आसन और आहारादिकी सब वस्तु रक्खी हुई थी, राजपुत्रीने उस आलसयुक्त ब्राह्मणकी बड़े यत्नके साथ सेवा करनी आरम्भ-की, कुन्तीने बहुत शुद्ध होकर देवताके समान बिधि पूर्व्वक ब्राह्मणकी सेवा करी।

२०३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! उस व्रत करनेवाले ब्राह्मणको उस कन्याने शुद्ध मनसे सेवा करके प्रसन्न किया, वह ब्राह्मण कभी यह कहके कि मैं प्रातःकालही आऊंगा, सन्ध्याको कहके रात्रीको आता था, परन्तु सब समयमें खाने वा पीने योग्य भोजन वह कन्या तयार रखती थी, अन्नादिक तथा शय्या और आसन आदिसे सेवा करनेमें उस कन्याको श्रद्धा प्रतिदिन बढ़ती जाती थी, कम नहीं होती थी, ब्राह्मणके अप्रिय वचन तथा घुड़की सहकरभी कुन्तीने कभी ब्राह्मणका अनादर न किया, कभी वह ब्राह्मण बिना समयके आता था और कभी समय पर भी नहीं आता था, और बहुत दुर्लभ भोजन मांगता था, जो वह मांगता था, वह सब बना हुआ, पाता था, कुन्तीने उसकी शिष्यके समान पुत्रके तुल्य अथवा पुत्रबधूके समान सेवा करी, हे राजेन्द्र! मनकी इच्छाके अनुसार ब्राह्मणका निन्द्रारहित कुन्तीने प्रसन्न किया, वह ब्राह्मण उत्तम कुन्तीके शील और

व्रतसे प्रसन्न हुआ, और बड़े यत्नसे उसके कल्याणकी चिन्ता करने लगा, कुन्तीका पिता सन्ध्यासमय प्रातःकाल बूझता था कि हे पुत्री! तुम्हारी सेवासे ब्राह्मण प्रसन्न है या नहीं? यशोवती कुन्ती अपने पिता राजा कुन्तिभोजसे यही कह देती थी कि ब्राह्मण बहुत प्रसन्न है, तब राजा कुन्तीभोजभी बहुत प्रसन्न होते थे, इस प्रकारसे जब एक वर्ष पूरा होगया, और उस ब्राह्मणने कुन्तीका कोई दोष न देखा तब कुन्तीके कल्याण चाहनेवाले ब्राह्मणने कहा, हे कल्याणी! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो वह बहुत कठिनभी होगा, तौभी मैं दूंगा, जिससे तुम्हारा जगतमें यश हो। कुन्ती बोली, हे वेदके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! जो तुम और मेरे पिता प्रसन्न हुए, तो मेरे सब कार्य्य सिद्ध हुए, ब्राह्मण बोला कि हे अच्छे हंसनेवाली! जो तुम मुझसे वर नहीं मांगती हो तो देवतोंके बुलानेके वास्ते यह मन्त्र देता हूं, इसे ग्रहण करो इस मन्त्रसे तुम जिस जिस देवताको बुलाओगी वही तुम्हारे वशमें हो जायगा, कामना सहित या कामना रहित जिस देवताको बुलाओगी वही इस मन्त्रके प्रतापसे तुम्हारा सेवक हो जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ब्राह्मणके शापके भयसे दूसरी बार कुन्ती उनके वचनका उत्तर न दे सकी, तब उस ब्राह्मणने उत्तम अङ्गवाली कुन्तीको अथर्ववेदमें लिखा हुआ मन्त्र उपदेश किया, कुन्तीको मन्त्र उपदेश करके राजा कुन्तिभोजसे ब्राह्मणने कहा मैं तुम्हारी कन्याकी सेवासे बहुत सुखी रहा, तुम्हारे घरमें सुखी रहा, इसी कारणसे तुम्हारे घरमें कल्याण होगा, ऐसा कहकर वह ब्राह्मण वहीं अन्तर्द्धान होगया। राजा कुन्तीभोज उसको अन्तर्द्धान हुआ देखके बहुत आश्चर्य करने लगे, और कुन्तीकी पूजा करी।

२०४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब वह ब्राह्मण चला गया, तब कुन्तीने उस मन्त्रके दिये हुए बलाबलका विचार किया, उस महात्माने मुझे यह मन्त्र कैसा दिया है, इसके बलको शीघ्रही विचारना चाहिये; इस प्रकारसे जब कुन्ती चिन्ता कर रही थी, उसी समय उसको अचानक रजस्वलापन जान पड़ा, उसे देखके कुन्ती बहुत लज्जित हुई, तब महलपर उत्तम शय्याके ऊपर बैठी हुई कुन्तीने पूर्व्व दिशामें निकलते हुए, सूर्य्यको देखा, कुन्तीने मन और दृष्टि सूर्य्यमण्डलमें लगा दी सूर्य्यके रूपसे कुन्तीको कुछभी क्लेश न हुआ, कुन्तीकी दृष्टि दिव्य होगई तब उसने कुण्डल और कवचके सहित सूर्य्यदेवको प्रत्यक्ष रूपसे देखा, उसका पहिलेहीसे उस मन्त्रके बलको देखनेका विचार था, तब उसने सूर्य्यकाही आह्वान किया, कुन्तीने प्रणाम करके सूर्य्यके नामकी आहुती दीं, तब बहुत शीघ्रताके साथ सूर्य्य वहां आगये; पिङ्गल वर्ण कबूतरके समान कण्ठवाले महाबाहु आभूषण पहिने अपने तेजसे दिशाओंका प्रकाश करते हुए, योगसे अपने दो स्वरूप बनाके सूर्य्यदेव कुन्तीके पास आये, और कुन्तीसे शान्तिपूर्व्वक ऐसे वचन बोले।

सूर्य्य बोले, हे रानी! मैं मन्त्रके प्रतापसे तुम्हारे वशमें होगया हूं, कहो मैं तुम्हारा क्या काम करूं, कुन्ती बोली, हे भगवान! आप जहांसे आए हैं आप वहींको चले जाइये मैंने क्रीड़ा खेलसे तुमको बुला लिया था।

सूर्य्य बोले; हे सुन्दर अङ्गवाली! जैसा तुम कहती हो, मैं वैसेही चला जाऊंगा, किन्तु देवताको बुलाके वृथा भेजना अच्छा नहीं, हे कल्याणि सूर्य्यके वीर्य्यसे कवच कुण्डल धारण किये, अनुपम तुम्हारे पुत्र हो, हे हाथीके समान चालवाली! तुम मुझे

यह वरदान दी कि तुम्हारी इच्छाके अनुसार पुत्र उत्पन्न हो। हे कल्याणी! मैं फिर चला जाऊंगा, यदि तुम मेरे बचनको न करोगी तो मैं ब्राह्मणको तुम्हारे पिताको शाप दूंगा, और तुम्हारे वास्ते उन सबको भस्म कर दूंगा! तेरे मूर्ख पिता कोभी भस्म कर दूंगा, मैं तेरे अन्यायको नहीं जानता था, तेरे स्वभावको बिना जाने मैं यहां आगया, ये इन्द्रादिक देवता सब मुझे लज्जित करेंगे, तुझसे ठगा हुआ मुझे देखेंगे। हे भामिनी! तुम इन्द्रादिक देवतोंको अन्तरीक्षमें देखो, मैंने दिव्यदृष्टि तमको प्रथम दी थी जिससे तुमने मुझे देखा था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब कुन्तीने विमानोंमें बैठे हुए, सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त देवतोंको देखा उनको देखके कुन्ती लज्जित हुई और सूर्य्यसे ऐसे वचन बोली, हे गोपते! आप अपने विमानमें चले जाइये मैंने बालकभावसे आपका यह अपराध किया है माता पिता तथा और बड़े लोग इस शरीरको दान करनेमें समर्थ होते हैं मैं धर्म्मको नाश नहीं कर सकती हूं, स्त्रियोंका परम धर्म्म अपनी देहको रक्षा करना है, हे सूर्य्य! मैंने मन्त्रका बल जाननेके लिये आपको बुलाया था, सोभी बालक भावसे आप मुझे बालिका जान कर क्षमा कोजिये।

सूर्य्य बोले, कि जो मैं बालिका समझके तुम्हारे अपराधको क्षमा कर दूं तो और लोगभी ऐसाहो अपराध करेंगे, तुम आपको मुझे दान करो इससे तुमको शान्ति प्राप्त होगी, मुझको वृथा जाना उचित नहीं है, मैं अपने लोकमें जाके सब देवतोंसे हसने योग्य हूंगा, इस लिये तुम मुझसे सङ्गम करो, ऐसा करनेसे तुम्हारे मेरेही समान पुत्र उत्पन्न होगा और सब लोकमें तुम्हारी कीर्त्ति होगी।

३०५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, कि वह कन्या अनेक भांतिके मीठे बचन कह करके भी सूर्य्यको निवारण न कर सकी, जब अन्धकारको निवारण करनेवाले सूर्य्यको निवारण न कर सकी तब सूर्य्यके शापसे डरी कुन्तीने विचारा कि ये बिना अपराध किये मेरे पिताको तथा दुर्व्वासा ब्राह्मणको क्रोध करके शाप देंगे, बालकपनमेंभी जो मोहसे पाप किया जाता है, वहभी यशस्वियोंके द्वारा फलको देता है, मैं अब भयसे व्याकुल हुई सूर्य्यको किस प्रकारसे आत्मदान करूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! वह कन्या भयसे व्याकुल मोहसे भरी लज्जित होके बारम्बार विचारने लगी, हे पृथ्वीपाल! कुन्ती सूर्य्यके भयसे व्याकुल सखियोंसे लज्जित शापसे डरकर सूर्य्यसे ऐसा बचन बोली।

कुन्ती बोली, हे देव! मेरे पिता माता और बन्धु बांधव लोग जीते हैं, उनके जीते हुए मैं धर्म्मको नाश नहीं कर सकती, यदि वेद विधिको छोड़कर मैं तुमसे सङ्गम करूं तो मेरे पिताकी कीर्त्ति नाश हो जायगी, और जो तुम सबको धर्म्म मानते हो तो बिना बन्धुवोंके दिये मैं तुमसे सङ्गम नहीं करूंगी, हे देव! आत्मदान बहुत कठिन है, मैं सती हूं किस प्रकारसे आत्म दान करूं, प्राणियोंका यश और आयु तुमसेही स्थिर है।

सूर्य्य बोले, हे मन्द हंसनेवाली! तुम्हारे माता पिता और गुरु लोग तुम्हारे स्वामी रहेंगे, कन्या सब कामोंमें स्वतन्त्र रहती है, इसीसे वह कन्या कहलाती है, हे उत्तम वर्णवाली! जो तुम काम करोगी वह अधर्म्म नहीं होगा, जिसे मैं कहता हूं वह अधर्म्म क्योंकर हो सकता है? हे उत्तमवर्णवाली! स्त्री और पुरुष बन्धन रहित हैं, इच्छाको रोकनाही बिकार कहाता है, इस

वास्ते तुम मुझसे सङ्गम करके फिर कन्या हो जाओगी, तुम्हारा पुत्र बड़ा बलवान और कीर्त्तिवान होगा।

कुन्ती बोली, हे अन्धकारके दूर करनेवाले! यदि तुमसे कुण्डल कवच धारण किये पुत्र हो तो मैं प्रसन्न हूं;

सूर्य्य बोले, हे कल्याणी! तुम्हारा पुत्र बड़ा बलवान और कुण्डल कवच धारण किये होगा।

कुन्ती बोली, यदि मेरा पुत्र गर्भसे कुण्डल कवच पहिने हो तो जैसा आप कहते हैं, वैसेही मेरे साथ सङ्गम कीजिये, परन्तु मेरा पुत्र रूप तेजमें आपके समान तथा धर्म्मात्मा हो।

सूर्य्य बोले, अदितीने मुझे प्रकाश युक्त कुण्डल दिये थे, वे मैं तुम्हारे पुत्रको दूंगा, और यह उत्तम कवच भी दूंगा।

कुन्ती बोली, हे भगवन्! यदि आपके कहनेके अनुसार मेरे पुत्र हो, तो मैं तुमसे सङ्गम करूं।

वैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहके राहुके शत्रु, आकाशचारी सूर्य्य कुन्तीके पास गये, और उसकी नाभीको स्पर्श किया, तब वह कन्या सूर्य्यके तेजसे विकल होगई और मूर्च्छित होकर शय्यापर गिर पड़ी।

सूर्य्य बोले, हे सुन्दरी! हम तुमको प्रसन्न करेंगे, तुम्हारे गर्भमें सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ पुत्र होगा, और तुम फिर कन्या होजाओगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजेन्द्र! जब कुन्तीने देखा कि महातेजस्वी सूर्य्य मुझसे सङ्गम करनेको उपस्थित है, तब लज्जासे उनके बचनको स्वीकार किया, फिर लज्जासे व्याकुल होकर टूटी हुई, लताके समान मूर्च्छित होकर शय्यापर गिर गई तब सूर्य्यने अपने तेजसे उसको पूरित कर दिया, और अपनी आत्माको उसके शरीरमें प्रवेश किया, परन्तु उसका कन्या भाव नष्ट नहीं किया, तब कुन्तीको फिर संज्ञा प्राप्त हुई।

३०६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! उसी दिन कुन्तीको गर्भ रह गया, तब वह गर्भ शुक्लपक्षके चन्द्रमा समान बढ़ने लगा, कुन्ती अपने बान्धवोंके भयसे गर्भको छिपाने लगी, इससे किसीने नहीं जाना कि सुन्दरी कुन्तीको गर्भ है, धात्रीके सिवाय और कोई स्त्री उसके गर्भको नहीं जान सकी

वह अपने घरमें रहकर गर्भकी रक्षा करती रही, अनन्तर उत्तम वर्णवाली कुन्तीके गर्भसे देवताके समान पुत्र उत्पन्न हुआ और कुन्ती सूर्य्यकी कृपासे फिर कन्या होगई वह बालक कवच और सोनेके समान प्रकाशमान सुन्दर कुण्डल धारण किये उत्पन्न हुआ उसके नेत्र सिंहके समान और कन्धे बैलके कन्धेके समान ऊंचे थे, उस बालकके उत्पन्न होतेही कुन्तीने अपनी धात्रीके सङ्ग सम्मति करके उस लड़केको एक मोमसे लिपी हुई सुन्दर विस्तृत कोमल सोनेके योग्य कंडीमें लिटाकर नदीमें बहा दिया, कुन्ती जानती थी कि कन्या गर्भको धारण नहीं कर सकती है, तो भी पुत्रके प्रेमसे रोने लगी पुत्रको नदीमें बहाते समय कुन्तीने रोकर जो कुछ वचन कहे सो सुनिये, हे पुत्र! आकाश पृथ्वी स्वर्ग और जलमें रहने वाले प्राणी तुम्हारी रक्षा करें, तुम्हारा मार्गमें कल्याण हो तुम्हें कोई शत्रु दुःख न दे, हे पुत्र! जो तुम्हारा शत्रु तुम्हारे समीप आवे, वो भी तुम्हारा मित्र हो जाय, जलमें जलके स्वामी वरुण और आकाश गामी पवन तुम्हारी रक्षा करें, जिन्होंने दिव्य विधिसे तुमको मुझे दिया था, वह सब तेजधारियोंमें श्रेष्ठ तुम्हारे पिता सूर्य्य तुम्हारी रक्षा करें, वसु, रुद्र, साध्य, विश्वदेव, मरुत, इन्द्र, दिशा, और दिग्पाल

आदि सब देवता सुख और दुःखसे तुम्हारी रक्षा करें; मैं जब तुम्हें बिदेशमें भी देखूंगी, तब इसही कवचसे पहिचान लूंगी, हे पुत्र! तुम्हारे पिता सूर्य्यको धन्य है जो अपनी दिव्य दृष्टिसे, तुम्हें नदीमें बहता हुआ देखेंगे, हे देव पुत्र! उस स्त्रीको धन्य है जो तुमको अपना पुत्र बनावेगी और प्यासमें जिसका तुम दूध पीयोगे, उस स्त्रीने कौन स्वप्न देखा होगा, जो सूर्य्यके समान तेजस्वी दिव्य कवच कुण्डलधारी पद्मके समान लाल वर्णवाले, सुन्दर केशवाले तुमको अपना पुत्र बनावेगी? उन स्त्रियोंको धन्य है जो तुमको पृथ्वीमें चलते हुए, तोतली-बानी बोलते हुए और धूलमें लिपटे हुए देखेंगी हे पुत्र! उन पुरुषोंको धन्य है जो तुमको यौवन अवस्थामें हिमाचलके बनमें उत्पन्न हुए सिंहके समान बलवान देखेंगे इस प्रकारसे बहुत रोकर कुन्तीने उस बालकको अश्व नदीके जलमें बहा दिया, फिर कमलनयनी कुन्ती उसही आधीरातके समय पुत्रके शोकसे व्याकुल रोती हुई, अपनी धात्रीके सङ्ग पिता पुत्रके भयसे नगरको चली आई और शोकसे व्याकुल होकर राजभवनमें चली गई। वह करण्डी अश्व नदीमें बहती बहती चरमरावतीमें पहुंची, वहांसे जमुनामें और जमुनासे गङ्गामें बहती सूतकी राजधानी चम्पापुरीमें पहुंची, वह बालक गङ्गाकी तरंगोंसे कभी ऊंचा और कभी नीचा हो जाता था। इस अमृतसे उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलको धारण किये, वह बालक प्रारब्धमें जीता हुआ चम्पापुरीमें पहुंचा।

३०७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उसही समय राजा धृतराष्ट्रका मित्र अधिरथ नामक सूत अपनीस्त्रीके सहित गङ्गास्नान करने गया था अधिरथकी सुन्दरी स्त्रीका नाम राधा था, उसके समान सुन्दरी पृथ्वीमें कोई नहीं थी परन्तु उसके पुत्र नहीं था, वह सदा पुत्रके लिये अनेक यत्न किया करती थी, उसने नदीमें बहती हुई कंडीको देखा, इतनेहीमें वह घाससे ढकी हुई हाथसे पकड़ने योग्यसुन्दर करण्डी गङ्गाकी तरङ्गोंसे बहती हुई राधाके पास आगई, तब सुन्दरी राधाने उसे खेल जानकर पकड़ लिया, फिर अपने पति अधिरथसे कह दिया, अधिरथने अनेक यन्त्रोंसे उसके पासके जलको हटाकर उसे निकाल लिया, और उससे दो पहरके सूर्य्यके समान तेजस्वी कवच और कुण्डलधारी सुन्दर मुखवाले एक बालकको देखा, तब अधिरथ अपनी स्त्रीके सहित बहुत आश्चर्य करने लगा, और उस बालकको गोदमें लेकर अपनी स्त्रीसे बोला, हे सुन्दरी! यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि यह देवपुत्र हमको प्राप्त हुआ, इसमें कुछ सन्देह नहीं कि देवतोंने मुझे पुत्र-रहित जानकर यह पुत्र दिया है, ऐसा कहकर उस पुत्रको अपनी स्त्रीको दे दिया, राधाने उस दिव्यरूपी कमलके समान सुन्दर लक्ष्मीवान देवपुत्रको ग्रहण किया, और विधिपूर्व्वक पालने लगी, बलवान कर्णभी बड़ेहोने लगे। इसके पश्चात् राधाके गर्भसे अनेक पुत्र उत्पन्न हुए, ब्राह्मणोंने कर्णको सोनेका कवच और कुण्डल धारण किये हुए देखकर वसुषेण नाम रक्खा और फिर अधिरथके बृष पुत्र हुए, कुन्तीनेभी दूतोंके मुखसे सुना कि वह दिव्य कवचधारी बलवान बालक सूतके घरमें पलता है। अधिरथ सूतने जब देखा कि मेरा पुत्र बड़ा होगया, तब उसे पढ़नेके लिये हस्तिनापुर भेज दिया, कर्ण वहां आकर द्रोणाचार्य्यके यहां रहने लगे, और उनसे धनुर्वेद पढ़ने लगे। कुछ दिनके पश्चात महा बलवान कर्ण और दुर्य्योधनसे मित्रता होगई, कर्णने द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य और परशुरामसे चार प्रकारके बाण

विद्या सीखी, अनन्तर लोकमें महा धनुषधारियोंमें गिने जाने लगे, फिर इन्होंने दुर्य्योधनसे मित्रता करके पाण्डवोंसे शत्रुता कर लो, ये सदा महात्मा अर्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा रखते थे, और अर्जुनका डाह किया करते थे, हे पृथ्वीनाथ! इसही प्रकार अर्जुनभी इनसे सदा युद्ध करनेको उपस्थित रहते थे, क्योंकि उन्होंने उनका बल देख लिया था। हे महाराज! यही गुप्त बात थी जो कर्णसे सूर्य्यने कही थी। इस प्रकार कर्ण कुन्तीके गर्भमें सूर्य्यके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए थे कर्णको दिव्य कवच कुण्डल धारण किये हुए देखकर राजा युधिष्ठिर सदा दुःखित होते थे, वे जानते थे कि कर्णको युद्धमें कोई नहीं मार सकता है, हे राजेन्द्र! जिस समय दिनके मध्यमें कर्ण स्नान करनेके पश्चात हाथ जोड़कर सूर्य्यको प्रणाम करते थे, उसही समय धन मांगनेके लिये अनेक ब्राह्मण उनके समीप आते थे; जगतमें कोई ऐसी वस्तु नहीं थी जो उस समय कर्ण ब्राह्मणोंको न दें, एक दिन इन्द्र ब्राह्मणका वेष बनाकर कर्णके पास भिक्षा मांगनेको आये, कर्णने उनका बहुत सत्कार किया।

३०८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उस कपटवेषी ब्राह्मणको आया देखकर कर्णने उसका आदर किया, पर उसके मनकी न समझा। अधिरथपुत्र कर्णने ब्राह्मणसे कहा कि मैं तुमको क्या दूं? सुवर्णके अलङ्कार कण्ठमें भूषण पहिरे स्त्री, गांव अथवा बहुतसी गौ?

ब्राह्मण बोला, मैं सोनेके आभूषणवाली अथवा प्रीतिका बढ़ानेवाली और वस्तुवोंको लेना नहीं चाहता हूं, यह किसी भिखारीको देना। यह जो तुम्हारे सङ्ग उत्पन्न हुआ, कवच और कुण्डल है, उनको अपने शरीरसे उतार कर मुझे दो, हे पापरहित! यही मैं मांगता हूं। हे शत्रुनाशन! यही मेरा सब लाभसे उत्तम लाभ है, यही आप मुझे दीजिये।

कर्ण बोले, हे ब्राह्मण! मैं तुमको पृथ्वी, गौ और अनेक वर्षोंका भोजन दे सक्ता हूं, किन्तु कवच और कुण्डल नहीं दूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकारसे उस ब्राह्मणसे कर्णने अनेक वाक्य कहे, पर उसने कोई दूसरा वर न मांगा। कर्णने अपनी शक्तिके अनुसार उस ब्राह्मणको शान्तभी किया और उनकी पूजा करी परन्तु उस ब्राह्मणने कोई दूसरा वर न मांगा। तब हंसकर राधापुत्र कर्णने ब्राह्मणसे कहा, हे ब्राह्मण! यह कवच और कुण्डल माताके गर्भसे ही मेरे सङ्ग उत्पन्न हुआ है, इससे मैं शत्रुवोंसे मारनेके अयोग्य हूं; इसही कारणसे मैं इसे नहीं उतार सकता हूं। हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! तुम मुझसे बहुतसा निष्कण्टक, कुशलतासे पूर्ण पृथ्वीका राज्य लो। हे ब्राह्मणमें श्रेष्ठ! जब मैं अपने सङ्गमें उत्पन्न हुए कुण्डल और कवचसे हीन हो जाऊंगा तब शत्रु लोग मुझे मार डालेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जब भगवान इन्द्रने दूसरा वर न मांगा, तब कर्णने फिर हंसके ऐसे वचन कहे। हे देवतोंके स्वामी? मैं आपको पहिलेही जान गया था, परन्तु यह उचित नहीं है कि मैं आपको वृथा वर दूं। आप साक्षात देवपति इन्द्र हैं, आपको चाहिये कि मुझे वर दें, आप सब प्राणिवोंके स्वामी हैं। हे देव! यदि मैं आपको कुण्डल और कवच दे दूं तो मैं शत्रुवोंसे मारनेयोग्य होजाऊंगा, और आपकी जगतमें हंसी होगी। हे इन्द्र! इस कारणसे आप एक प्रण करके मुझसे कवच और कुण्डल लीजिये।

इन्द्र बोले, जब मैं तुम्हारे पासको आता था तबही सूर्य्यने मुझे जान लिया था, इसीसे

तुमको मेरा हाल मालुम होगया। हे कर्ण! जैसा तुम कहते, हो वैसाही हो, मेरे बज्रको छोड़के जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब कर्णने प्रसन्न चित्त होके इन्द्रसे कहा, और शत्रुओंको नाश करनेवाली तथा युद्धमें निवारण होनेके अयोग्य शक्ति मांगी।

कर्ण बोले, हे इन्द्र! कुण्डल और कवचके बदलेमें सेनाके मध्यमें शत्रुवोंको नाश करनेवाली अव्यर्थ शक्ति दीजिये। इन्द्र थोड़े समय तक विचार करके कर्णसे बोले, हे कर्ण! तुम मुझे कुण्डल और कवच देकर मुझसे शक्ति ग्रहण करो, यही हमारा तुमसे प्रण है। यह शक्ति मेरे हाथसे छूटकर सैकड़ों दैत्योंको नाश करके फिर मेरे हाथमें चली आती है। हे सूतपुत्र! वही अमोघशक्ति तुम्हारे हाथसे छूटकर एक शत्रुको मारकर फिर मेरे पास चली आवेगी।

कर्ण बोले, मैं युद्धमें गर्जते और दौड़ते एकही शत्रुको मारना चाहता हूं, एकही शत्रुसे मुझे भय है।

इन्द्र बोले, हे कर्ण! बलवान युद्धमें गर्जते हुए जिस एक शत्रुको मारना चाहते हो, उसकी महात्मा कृष्ण रक्षा करते हैं। वेदके जाननेवाले पण्डित लोग जिसे जीतनेके अयोग्य वराह और नारायण कहते हैं, वही कृष्ण तुम्हारे शत्रुकी रक्षा करते हैं।

कर्ण बोले, हे भगवन्! जैसा आप कहते हैं, वैसाही हो, एक प्रतापी वीरको मारनेके वास्ते आप अमोघ शक्ति दीजिये। इन्द्र बोले, हे कर्ण! तुमको कभी युद्धमें भय न होगा, और न तुम्हारे शरीरमें कभी घाव होगा क्योंकि तुम झूंठकी इच्छा नहीं करते हो। हे कर्ण! जैसा तुम्हारे पिताका वर्ण और तेज है, वैसाही अबसे तुम्हाराभी तेज और वर्ण होगा। तुम्हारे पास और शस्त्र हों यदि उस समय तुम इस अमोघ शक्तिको सावधानतासे रहित होकर चलाओगे तो यह शक्ति तुम्हारेही आकर लगेगी।

कर्ण बोले, हे इन्द्र! जब मुझे अपने प्राणोंका सङ्कट जान पड़ेगा तब मैं इस इन्द्रकी शक्तिको चलाऊंगा, जैसा आपने कहा है, वैसाही करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महीपाल! तब कर्णने जलती हुई, शक्तिको लेकर तीक्ष्ण शस्त्रोंसे अपने सब अङ्गोंको काट डाला, अपने अङ्गोंको काटते समय कर्णके मुखपर कुछभी विकार न आया, इस प्रकारसे कर्णको अपने अङ्गोंको काटते हुए, देखके देवता दानव और मनुष्योंने भयानक शब्द किया, उस समय आकाशमें दुन्दुभी बजने लगी, और फूलोंकी वर्षा होने लगी, कर्णको अपने अङ्ग काटकर हंसते हुए देखकर देवतोंने फूलोंकी वर्षा की! कर्णने अपने अङ्गोंसे निकालकर गीलाही कवच इन्द्रको दे दिया, ऐसेही कानोंको काटकर कुण्डलभी दे दिये, इसही कर्म्मसे सूतपुत्रका नाम कर्ण हुआ था। इन्द्र कर्णको छलकर तथा लोकमें कर्णको यशस्वी बनाके और पाण्डवोंके कार्य्यको पूरा हुआ समझके हंसते हुए स्वर्गको चले गये। धृतराष्ट्रपुत्र कर्णकी छला हुआ सुनके बहुत दीन और मान रहित होगये, बननिवासी पाण्डव लोग कर्णकी उस दशाको सुनके बहुत प्रसन्न हुए।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! उस समय पाण्डव लोग कहां रहते थे? उन्होंने इस प्यारी बातको किससे सुना था? बारह वर्षके पश्चात उन्होंने क्या किया? यह सब आप मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदीको प्राप्त करके और सिन्धुदेशके राजा जयद्रथको भगाकर, काम्यक वनमें मार्कण्डेय ऋषिसे ब्राह्मणोंके

सहित देवता और ऋषियोंके पुराने चरित्र सुनते हुए पाण्डव वहीं रहने लगे।

३०८ अध्याय समाप्त।

कुण्डलाहरण पर्व्व समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने? जब द्रौपदी हरी गई, तब पाण्डवोंने बहुत क्लेश उठाया, पश्चात द्रौपदीको पाकर पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकारसे द्रौपदीके हरे जानेपर कठिन क्लेशको पाकर महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित काम्यक वनको त्यागकर मनोहर स्वादयुक्त फल मूलसे भरे, अनेक भांतिके वृक्षोंसे पूर्ण द्वैतबनको चले गये। व्रत करनेवाले थोड़ा भोजन करनेवाले पाण्डव द्रौपदीके सहित द्वैत बनमें रहने लगे। राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवने द्रौपदीके सहित उस बनमें रहकर ब्राह्मणोंके हितके वास्ते बहुत दुःख पाया। उन कुरुकुलश्रेष्ठोंने जो उस बनमें रहकर सुख और दुःख भोगे उनका वर्णन करता हूं सुनो। द्वैत बनमें एक तपस्वी ब्राह्मणकी अरणी और मंथानीसे एक हरिन आके अपने सिरको रगड़ने लगा; उस हरिनके सींगमें उस ब्राह्मणकी अरणी और मथानी फंस गई, हे राजन् जनमेजय! उस अरणी और मथानीको लेके वह बड़े वेगसे चलनेवाला महामृग ब्राह्मणके आश्रमसे शीघ्रही भाग गया। हे कुरुसत्तम! वह ब्राह्मण अपनी अरणी और मथानीको ले जाते देखकर बड़ी शीघ्रतासे अग्निहोत्रको देखनेके वास्ते अपने आश्रम पर गया। उस ब्राह्मणने द्वैत बनमें महाराज युधिष्ठिरको भाइयोंके सहित बैठे हुए देखा, ब्राह्मणने उनके पास जाकर बड़े दुःखके साथ यह कहा, हे महाराज! मेरी अरणी और मथानी एक वृक्षमें लटकी हुई थी, एक हरिन आके उस वृक्षसे अपने शरीरको रगड़ने लगा, रगड़ते हुए हरिनके सींगमें मेरी अरणी और मथानी उलझ गई। वह बड़े वेगवाला महामृग शीघ्रताके साथ उन्हें लेकर चला गया। हे पाण्डव लोगो! उस हरिनके पैरोंके चिह्नसे उस हरिनको पकड़कर मेरी अरणी और मथानीको आप लोग ला दीजिये जिससे अग्निहोत्रका नाश न हो।

३१० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर ब्राह्मणके वचनोंको सुनके बहुत दुःखी हुए, और धनुष लेके भाइयोंके सहित उठे। सब पाण्डव कवच पहनकर और धनुष धारण करके उस मृगके पैरोंके चिह्नपर चल दिये; कुछ दूर जाके उन्हें वह मृग मिल गया। महारथी पाण्डव लोग कानतक खींचकर बाण मारते थे, तौभी समीप खड़ा हरिन उन बाणोंसे न बेधा गया। उन यत्न करनेवालोंकी दृष्टिसे वह मृग अदृश्य होगया, हरिनके गुप्त होनेसे पाण्डवोंको बड़ा दुःख हुआ, उस घोर बनमें पाण्डव लोग भूख और प्याससे व्याकुल होकर एक बड़की ठंढी छायामें जा बैठे। जब पाण्डव लोग छायामें जा बैठे, तब दुःखके साथ क्रोध करके नकुल बड़े भाई युधिष्ठिरसे बोले, हे राजन! हमारे कुलमें कभी धर्म्मका लोप नहीं हुआ, और न कभी आलस्यसे अर्थका नाश हुआ है, परन्तु हम किस कारणसे संकटमें ग्रस्त हुए हैं।

महाराज युधिष्ठिर बोले, आपत्तिके कालमें कोई मर्य्यादा नहीं होती, आपदाओंका कोई निमित्त और कारणभी नहीं होता, पुण्य और पापका विभाग धर्म्मही करता है।

भीमसेन बोले, जब प्रतिकामी द्रौपदीको दासके समान सभामें लाया था, तब मैंने उसको नहीं मारा, इसही कारणसे हम लोगोंको यह कष्ट प्राप्त हुआ है।

अर्ज्जुन बोले, सूतपुत्र कर्णने बहुत कठोर बचन कहे थे, और मैंने उन्हें चमा कर दिया, इसही कारणसे हम लोगोंको यह कष्ट मिला है।

सहदेव बोले, जब शकुनिने आपको जुएमें जीता था, तब हमने उसे नहीं मारा इसही कारणसे हम लोगोंको कष्ट मिला है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इसके अनन्तर महाराज युधिष्ठिर नकुलसे ऐसा वाक्य बोले, हे माद्रीनन्दन! तुम वृत्तपर चढ़के दशों दिशाओंको देखो, कहीं समीपमें जलके किनारे वाले वृत्त और पानी हैं या नहीं; देखो यह तुम्हारे भाई प्यासे हो रहे हैं। नकुलभी बहुत अच्छा कहके शीघ्रताके साथ वृत्तपर चढ़ गये, और चारों ओरको देखके अपने बड़े भाईसे बोले, हे राजन्! मैं जलके तटपर होनेवाले अनेक वृत्तोंको देखता हूं, सारसोंका शब्दभी सुनाई देता है, वहां अवश्यही जल होगा। तब सत्यवादी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर बोले, हे सौम्य! तुम शीघ्रतासे तरकसमें जल भरकर लाओ। नकुल "बहुत अच्छा" कहके बड़े भाईकी आज्ञासे वहांको चले जहां पानी था और बहुत शीघ्र वहां पहुंच गये। नकुलने विमल जलको सारसोंसे घिरा हुआ देखके पीनेकी इच्छा करी, इतनेहीमें नकुलने आकाशवाणी सुनी।

यच बोला, हे प्यारे! साहस मत करो; मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पीना और लेभी जाना। नकुलने यचके वाक्यका अनादर करके जल पीया किन्तु जल पीतेही नकुल पृथ्वीमें गिर पड़े। जब नकुलको देर हुई, तब राजा युधिष्ठिरने शत्रुओंको नाश करनेवाले सहदेवसे कहा, हे पापरहित! हमारे भाईको गये बहुत देर हुई इससे तुम जाकर भाईके सहित पानीको ले आओ। सहदेवभी "बहुत अच्छा" कहके उसही ओरको गये और जलके समीप जाके अपने भाई नकुलको पृथ्वीमें मरा हुआ पड़ा देखा। सहदेव भाईके शोकसे और प्याससे बहुतही व्याकुल होकर पानी पीनेको चले। तब आकाशवाणी हुई, हे प्यारे! हठ मत करो, पहिले मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो फिर जल पीयो और लेभी जाओ। प्यासे सहदेवने उस वचनका अनादर करके ठण्ढा जल पिया, और पीकर गिर पड़े। इसके पश्चात युधिष्ठिरने अर्ज्जुनसे कहा, हे शत्रुओंको दुःख देनेवाले अर्ज्जुन! तुम्हारे दो भाई जल लेनेको गये हैं, तुम जाके दोनो भाइयोंको और जलको ले आओ। हे तात! हम दुःखियोंका तुमही आश्रय हो। ऐसे वचन सुनके धनुष बाण और नङ्गा खड्ग लेकर अर्ज्जुन उस तलावपर पहुंचे। वहां श्वेत घोड़ेवाले अर्ज्जुनने जो जल लानेको पहिले दोनो भाइ गये थे, उन दोनो पुरुषसिंहोंको पृथ्वीमें पड़ा हुआ देखा। सोए हुएके समान उन दोनो भाइओंको देखके अर्ज्जुनको बड़ा दुःख हुआ तब धनुष चढ़ाके अर्ज्जुन उस सब बनको देखने लगे, अर्ज्जुनने उस बनमें किसी प्राणीको न देखा, तब थककर पानी पीनेको चले। जब अर्ज्जुन जल पीनेको चले तब बिना शरीरकी वाणी सुन पड़ी। हे अर्ज्जुन! क्या तुम पानी पीना चाहते हो? सो तुम बलसे नहीं पी सकते हो, हे भारत! यदि मेरे प्रश्नोंका उत्तर दोगे तो जल पियोगे, और लेभी जाओगे। अर्ज्जुन्को जल पीनेसे जब रोका, तब अर्ज्जुनने कहा कि प्रत्यच्च होके मुझे रोको; मेरे बाणोंसे छिदकर फिर ऐसे न बोलोगे। अर्ज्जुनने ऐसे कहके बाणोंको दिव्य अस्त्रोंसे युक्त करके शब्दबेधी रीतिसे चारों ओर बाणवर्षा करनी आरम्भ की। हे भरतवंशी जनमेजय! कानों तक खींचकर निवारण होनेके अयोग्य बाणोंकी वर्षा करके अर्ज्जुनको बहुत प्यास लगी। अर्ज्जुनके बाणोंसे आकाश भर गया।

यच बोला, हे कुन्तीपुत्र! इस उपायसे

कुछ फल नहीं होगा, मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पियो बिना प्रश्नोंका उत्तर दिये, जल पीतेहो मर जायोंगे। सव्यसाची अर्ज्जुन इस बातको सुनके उस यक्षकी बणीका अनादर करके जल पीने लगे, और जल पीके मर गये। इसके पश्चात कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने भीमसेनसे कहा। हे शत्रुओंको तपानेवाले! नकुल, सहदेव और अर्ज्जुन बहुत देरसे जल लेनेको गये हैं, परन्तु कोईभी अबतक नहीं आये तुम जाकर सब भाइओंको और जलको ले आओ भीमसेनभी "बहुत अच्छा" कहके वहीं पहुंचे। जहां उनके भाई मरे पड़े थे, उनको देखकर भीमसेन बहुत दुःखी और प्याससे व्याकुल हो गये। महाबली भीमने समझा कि यह कर्म किसी यक्ष वा राक्षसका है; भीमसेनने विचार किया यहां पर युद्ध अवश्य करना चाहिये, ऐसा विचार कर भीमसेन जल पीनेको चले।

यक्ष बोला, हे प्यारे! हठ मत करो; पहिले मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पीयो और ले जाओ। भीमसेन यक्षकी बातको सुनके और तेजस्वी यक्षके प्रश्नोंका उत्तर बिनाही दिये जल पीकर पृथ्वीमें गिर पड़े। तब नरश्रेष्ठ कुन्तीनन्दन राजा युधिष्ठिर बारम्बार चिन्ता करके उठे, उस समय युधिष्ठिरका मन जलने लगा। युधिष्ठिरने उस बनमें प्रवेश किया जिसमें किसी मनुष्यका शब्द नहीं सुन पड़ता था, रुरु बनैले सुख और अनेक प्रकार पक्षी जिस बनकी सेवा करते थे, जो नीले और धौले वृक्षोंमे शोभायमान था, जिसमें भौरे और पक्षी शब्द कर रहे थे। यशस्वी युधिष्ठिरने उस बनमें जाके कमलोंसे भरे उस तालावको ऐसा देखा मानो इसे विश्वकर्म्माहीने बनाया है। वह तलाव कमलिनियोंसे भरा सम्मुभरे उत्तम जातिके कमलोंसे पूर्ण, केतकी, कनेर और पीपलके वृक्षोंसे घिरा हुआ था, थके हुए राजा युधिष्ठिर उस तलावको देखकर सुखको प्राप्त हुए।

३११ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिर गिरे हुए लोकपालोंके समान अथवा प्रलयकालमें इन्द्रके समान अपने भाइयोंको मरा हुआ देखा। अर्ज्जुनको धनुष बाण फेंके मरा हुआ पड़ा देखके ऐसाही भीमसेन और नकुल तथा सहदेवको पड़ा हुआ देख ऊंचे सांस लेकर शोकसे आंसू बहाने लगे। अपने सब भाइयोंको मरा हुआ देखकर महा बलवान युधिष्ठिर चिन्तासे व्याकुल होके विलाप करने लगे। हे भीमसेन! हे महाभुज! तुमने प्रतिज्ञा करी थी कि मैं युद्धमें दुर्य्योधनकी जङ्घा गदासे तोड़ूंगा, हे वीर! आज तुम्हारे मरनेसे वह प्रतिज्ञा व्यर्थ होगई। हे महाभुज! हे कुरुकुलकी कीर्त्तिको बढ़ानेवाले! तुम्हारी वाणी आज झूठी होगई। हे अर्ज्जुन! देवतोंकी वाणी झूंठ कैसे होगई? देवता लोगोंने तुम्हारी उत्पत्तिके समयही कहा था कि कुन्तिपुत्र अर्ज्जुन इन्द्रके समान होगा, तुमको सब प्राणी कहते थे कि, नष्ट हुई राज्यलक्ष्मीको अर्ज्जुन फिर लौटावेगा, युद्धमें इसको जीतनेवाला कोई न होगा और और जिसको युद्धमें यह न जीत सके ऐसाभी कोई नहीं होगा, वही अर्ज्जुन मेरी आशाओंको नाश करके पृथ्वीमें कैसे पड़ा है, वही महाबली अर्ज्जुन किस प्रकारसे मृत्युके वशमें होगये जिस अर्ज्जुनको हम लोग अपना नाथ जानते थे वही अर्ज्जुन आज क्योंकर मर गये? सदा शत्रुको मारनेवाले रणमें मत्त नकुल और सहदेव किस प्रकारसे शत्रुके वशमें होगये। जो अर्ज्जुन और भीमसब अस्त्रोंको जानने वालेथे उनको तथा नकुल और सहदेवको पृथ्वीमें पड़ा देखकरभी जो मेरा हृदय नहीं फटता है, इससे मैं जानता हूं, कि मेरा

हृदय लोहेसे भी कठोर है। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ लोगो! तुम सब देश, काल तथा शास्त्रके जाननेवाले, तप करनेवाले और क्रियायुक्त होकरभी अपने योग्य बिना कर्म्म कियेही क्यों सोते हो? हे जीतनेके अयोग्य भाइयो! बिना घाव खाये, बिना धनुष बाणको चलाए चेतनारहित होके पृथ्वीमें क्यों पड़े हो! बुद्धिमान राजा युधिष्ठिर पर्व्वतकी तलहटीके समान अपने भाइयोंको सुखसे सोया देखकर शोकसे बहुतही व्याकुल हुए। ऐसेही शोक करते करते राजा युधिष्ठिर अपने भाइयोंकी मृत्युके कारणको विचारने लगे। और यहभी विचारने लगे कि मुझे इस समय क्या करना उचित है, महाबुद्धिमान महाभुज देश और कालके विभागको जाननेवाले राजा युधिष्ठिरको कुछभी निश्चय न जान पड़ा। तब धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर अपने मनको स्थिर करके और अनेक विलाप करके बुद्धिसे विचारने लगे कि इन वीरोंको किसने मारा है, इनके शरीरोंमें कोई शस्त्रभी नहीं लगा है, न यहांपर किसीके पैर लगे दीखते हैं, मैं जानता हूं कि वह कोई अद्भुत जीव है, जिसने मेरे भाइयोंको मारा है। मैं चित्तको एकाग्र करके विचारूंगा वा जल पीके निश्चय करूंगा; हो सक्ता है कि दुर्य्योधनने गुप्त रीतिसे कोई उपाय किया हो अथवा कुटिल बुद्धिवाले गान्धार देशके राजा शकुनिने कोई छल किया हो, उसको करने योग्य और न करने योग्य सब कार्य्य एकसे ही दीखते हैं। उस पापीका कौन विश्वास कर सकता है? अथवा किसी दुरात्मा गुप्त दूतका यह काम है, इस प्रकारसे बुद्धिमान युधिष्ठिर अनेक भांतिके विचार करने लगे, परन्तु उनका मन ऐसे शुद्ध न हुआ जैसे दूषित जल। महाराज युधिष्ठिरने विचारा कि मरे हुए भाइयोंका वर्ण नहीं बिगड़ा है, उनके मुख अभीतक प्रसन्न हैं। इन एक एक महा बलियोंसे मृत्युके सिवाय और कोईभी नहीं लड़ सकता है। ऐसा विचार करके महाराज युधिष्ठिर जलमें घसे जलमें घसतेही युधिष्ठिरने आकाशवाणी सुनी।

यक्ष बोला, हे राजपुत्र! मैं शिवार और मछलियोंका खानेवाला बगुला हूं, मैंनेही तुम्हारे चार भाइयोंको मारा है, यदि मेरे प्रश्नका उत्तर न दोगे तो तुमभी इनके साथ पांचवें बनोगे। हे प्यारे! हठ मत करो, पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर देके जल पियो और लेभी जावो।

युधिष्ठिर बोले, मैं पूछता हूं कि तुम कौन हो? रुद्र, वसु वा मरुद्गणके प्रधान देवता हो, ऐसा प्रश्न पक्षी नहीं कर सकता है। हिमाचल पारिपात्र, विन्ध्याचल और मलय पर्व्वतके समान मेरे चार भाइयोंको किसने मारके गिराया है। हे बलवानोंमें श्रेष्ठ! जिस कर्म्मको देवता गन्धर्व्व यक्ष और राक्षस युद्ध करके नहीं कर सकते, उस महा कार्य्यको तुमने किया है। मैं नहीं जानता हूं कि दैवकी क्या इच्छा है, मुझे बड़ा आश्चर्य दुःख और शोक है, इस ही कारणसे मेरा चित्त घवड़ा रहा है, हे भगवन्! इसही कारणसे मैं पूछता हूं कि तुम कौन हो? जो यहां निवास करते हो।

यक्ष बोला, हे राजन्! तुम्हारा कल्याण हो,मैं यक्ष हूं, मैंनेही तुम्हारे तेजस्वी भाइयोंको मारा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब उस कल्याण रहित कठोर अक्षरोंसे भरी बाणीको सुनके राजा युधिष्ठिर सावधान होके खड़े होगये। राजा युधिष्ठिरने वृक्षके ऊपर बैठे हुए भयानक नेत्र और बड़ी देहवाले ताड़के समान लम्बे सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त पर्व्वतके तुल्य मेघके समान गर्जते हुए, यक्षको देखा।

यक्ष बोला हे राजन्! तुम्हारे भाइयोंको एक बार मैंने जल पीनेसे रोका, जब यह बलसे जल लेने लगे, तब मैंने मारडाला तुमकोभी

यदि प्राणकी रक्षा करनी हो तो जल मत पियो। हे कुन्ती पुत्र! हठ मत करो पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर देके जल पियो और लेभी जाओ।

युधिष्ठिर बोले, हे यक्ष! मैं तुम्हारी कथा सुनता हूं क्योंकि साधुजन इसकी सदा प्रशंसा नहीं करते हैं। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! तुम अपना आपही वर्णन करते हो इससे तुम प्रश्न करो मैं अपनी बुद्धिके अनुसार उत्तर दूंगा।

यक्ष बोला, सूर्य्यको कौन उदय करता है? सूर्य्यके पास कौनसे सेवक रहते हैं? कौन सूर्य्यको अस्त करता है, और सूर्य्य किस आरमें स्थित है?

युधिष्ठिर बोले, ब्रह्म सूर्य्यके सङ्ग चलते हैं, धर्म्म सूर्य्यको उदय करता है, और सत्यमें सूर्य्य-स्थित है।

यक्ष बोला, हे राजन्! किससे मनुष्य श्रोत्रिय होता है! किससे महत्वको प्राप्त होता है? किससे दूसरेसे युक्त होता है? और किससे बुद्धिमान होता है?

युधिष्ठिर बोले मनुष्य वेदसे श्रोत्रिय होता है, तपसे महत्वको पाता है, धारणासे दूसरेसे युक्त होता है, और वृद्धोंसे बुद्धिमान होता है।

यक्ष बोला, ब्राह्मणोंमें देवतापनक्या है? सज्जनोंका सद्धर्म्म क्या है? मनुष्यमें मनुष्य भाव क्या है? और दुष्टोंका धर्म्म क्या है?

युधिष्ठिर बोले, नित्यही वेदको पढ़ना ब्राह्मणमें देवतापन है, तपही सज्जनोंका सद्धर्म्म है, मरना मनुष्योंमें मनुष्यता और दूसरोंकी निन्दा करनाही दुष्टोंका साकर्म्म है।

यक्ष बोला, क्षत्रियोंमें देवतापन क्या है क्षत्रियोंमें सद्धर्म्म क्या है? क्षत्रियोंमें मनुष्य भाव क्या है? और क्षत्रियोंमें दुष्टभाव क्या है?

युधिष्ठिर बोले, बाण और अस्त्रोंको धारण करना, यज्ञ करना क्षत्रियोंका सद्धर्म्म और देवतापन है, भय करना क्षत्रियोंका मनुष्यभाव है, शरणागतको वा दुःखीको त्यागना क्षत्रियोंका दुष्ट कर्म्म है।

यक्ष बोला, सामवेदका एक यज्ञ कौन है? यजुर्वेदका एक वह मन्त्र कौनसा है, जिससे यज्ञ हो सकता हो? यज्ञकी आच्छादन करनेवाली कौन है? किसको यज्ञ नहीं नांघ सकता है?

युधिष्ठिर बोले, प्राणही सामवेदकी यज्ञका मन्त्र है, मन यजुर्वेदकी यज्ञका मन्त्र है, ऋचा यज्ञको आच्छादन करती हैं, ऋचाको यज्ञ नहीं नांघ सकता है।

यक्ष बोला, रक्षा करनेवालोंमें कौन श्रेष्ठ है? पितरोंको कौनसी वस्तु देनी चाहिये? प्रतिष्ठा चाहनेवालोंको क्या उत्तम है? और कुलकी वृद्धि चाहनेवालोंको क्या उत्तम है?

युधिष्ठिर बोले, रक्षा करनेवालोंमें जलकी वर्षा उत्तम है? बोवनेवालोंको वा पितरोंको बीजही श्रेष्ठ है, प्रतिष्ठा चाहनेवालोंको गौ उत्तम हैं, कुलकी वृद्धि चाहनेवालोंको पुत्र उत्तम है।

यक्ष बोला, इन्द्रियोंके बिषयोंको भोगता हुआ, बुद्धियुक्त संसारमें आदरयुक्त सब प्राणियोंका भाम्यसास लेते हुएभी कौन नहीं जीता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, देवता, अतिथि पितर और सेवकोंको और अपनी आत्माको जो नहीं देता है, वह सांस लेता हुआ भी मरा है।

यक्ष बोला, पृथ्वीसे भारी कौन है? आकाशसे ऊंचा कौन है? वायुसे जलदी चलनेवाला कौन है? फूससे अधिक क्या है?

राजा युधिष्ठिर बोले, माता भूमिसे भारी है, पिता आकाशसे ऊंचा है, मन वायुसे जलदी चलनेवाला है, चिन्ता तृणसे अधिक है।

यक्ष बोला, कौन सोता हुआ, पलक

नहीं मारता है ? उत्पन्न होकर कौन नहीं चलता है ? हृदय किसके नहीं है ? शीघ्रतासे कौन बढ़ता है।

युधिष्ठिर बोले, मछरी सोते हुए, पलक नहीं मारतो, अण्डा उत्पन्न होकर नहीं चलता है, पत्थर के हृदय नहीं होता है, नदी शीघ्रतासे बढ़ती है।

यक्ष बोला, परदेशमें कौन मित्र है ? घरमें कौन मित्र होता है ? रोगीका कौन मित्र है ? मरनेके समय कौन मित्र होता है ?

महाराज युधिष्ठिर बोले, बिदेशमें सङ्गी मित्र है, घरमें स्त्री मित्र है, वैद्य रोगीका मित्र है। और दान मरनेके समयका मित्र होता है।

यक्ष बोला, सब प्राणियोंका अतिथि कौन है ? सनातन धर्म्म क्या है ? हे राजेन्द्र ! अमृत क्या वस्तु है ? और यह जगत क्या है ?

राजा युधिष्ठिर बोले, सब प्राणियोंका अतिथि अग्नि हैं; गौओंका दूध अमृत है उसहीको सोम कहते हैं उसकी आहुति देना सनातना धर्म्म हैं, मोक्ष अमृत है, वायुही सब जगत है।

यक्ष बोला, एकला कौन फिरता है ? उत्पन्न होकर फिर कौन उत्पन्न होता है ? शीतकी औषध क्या है ? बोवनेका बड़ा स्थान क्या है ?

युधिष्ठिर बोले, सूर्य्य एकला घूमता है; चन्द्रमा फिर उत्पन्न होता है, अग्नि शीतकी औषध है, बोवनेका बड़ा स्थान भूमि है।

यक्ष बोला, धर्म्मका एक स्थान क्या है ? यशका एक स्थान क्या है ? और सुख पानेका एक उपाय क्या है ?

युधिष्ठिर बोले, उद्योगही धर्म्मका स्थान है, दानही यशका और शीलही सुखका एक उपाय है।

यक्ष बोला, मनुष्यकी आत्मा क्या है ? देवका दिया हुआ मित्र कौन है ? मनुष्यका जीवन क्या है ? मनुष्यका उद्योग क्या है ?

महाराज युधिष्ठिर बोले, पुत्र मनुष्यकी आत्मा है, स्त्री देवकी दी हुई मित्र है, मेघ जीवन है, और दान मनुष्यका उद्योग है।

यक्ष बोला, धन्य लोगोंमें उत्तम क्या है ? धनमें उत्तम धन क्या है ? लाभोंमें उत्तम लाभ क्या है ? और सुखोंमें उत्तम सुख क्या है ?

राजा युधिष्ठिर बोले; धन्य लोगोंमें चतुरता उत्तम है, धनोंमें विद्या उत्तम है, लाभोंमें नीरोगता उत्तम है, और सुखोंमें सन्तोष उत्तम है।

यक्ष बोला, कौन धर्म्म सबसे उत्तम है ? कौनसा धर्म्म सदा फल देनेवाला है ? किसको संयत करनेसे सोच नहीं करना होता ? और किनकी सन्धि नहीं टूटती ?

युधिष्ठिर बोले, सत्य बोलना सबसे उत्तम धर्म्म है, वेदोक्त धर्म्म सदा फल देनेवाला है, मनको रोक कर सोचना नहीं होता है, सज्जनोंकी सन्धि कभी नहीं टूटती है।

यक्ष बोला किसको त्यागनेसे मनुष्य प्यारा होता है ? किसको त्यागनेसे सोच नहीं करना पड़ता ? किसको त्यागनेसे धनी होता है ? किसको त्यागनेसे सुखी होता है ?

महाराज युधिष्ठिर बोले, अभिमानके त्यागनेसे सबका प्यारा होता है, क्रोधको त्यागनेसे सोच नहीं करता, कामको त्यागनेसे धनी होता है और लोभको त्यागनेसे सुखी होता है।

यक्ष बोला, ब्राह्मणको क्यों दान दिया जाता है ? नट और नाचनेवालोंको क्यों धन दिया जाता है ? सेवकको क्यों द्रव्य दिया जाता है और राजाको कर क्यों दिया जाता है ?

राजा युधिष्ठिर बोले, धर्म्मके लिये ब्राह्मणको दान दिया जाता है, यशके लिये नट और